

UNIVERSITY OF TORONTO



3 1761 00095464 4

BL  
1135  
B7T3  
1921



*Presented to the*  
LIBRARY *of the*  
UNIVERSITY OF TORONTO  
*by*

Office of the High  
Commissioner for India,  
Ottawa

Ms 57-

ओ३म

# दयानन्द महाविद्यालय संस्कृत-ग्रन्थमाला।

अनेक विद्वानों की सहायता से।

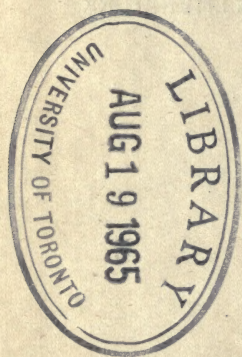
भगवद्दत्त

संस्कृताध्यापक वा अध्यक्ष अनुसन्धान-विभाग

दयानन्द महाविद्यालय, लाहौर द्वारा

सम्पादित।

ग्रन्थाङ्क ३।



1000574

श्रीमद्दयानन्द महाविद्यालय संस्कृतग्रन्थमाला सं० ३

ओ३म्  
जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मणम्

अथवा

तलवकार-उपनिषद्ब्राह्मणम् ।

पं० रामदेव बी० ए०

द्वारा

श्रीमान् हन्नस अर्टेल, पी० एच० डी०

महाशयस्य

रोमनलिपि-संस्करणात् देवनागर्याम् लिपिकृतम् ।

भगवद्दत्त

संस्कृताध्यापक दयानन्दकालेज, लाहौर,

लिखितं

भूमिका-सहितम् ।

आख्यं सम्बत् १९६०८५३०२० ।

विक्रम सं० १९७७ ।

सन् १९२१ ई० ।

दयानन्दब्द ३८ ।

प्रथमावृत्ति १००० प्रति

1921

मूल्य ५०/-

BL  
1135  
B773  
1921

---

Printed by Bhairo Prasada,  
MANAGER. VIDYA PRAKASHA PRESS. LAHORE.  
AND PUBLISHED BY  
THE RESEARCH DEPARTMENT. D. A. V. COLLEGE. LAHORE.

---

The Publications of this series can also be had of—

1. MESSRS. LUZAC & Co.,  
46 Great Russell Street,  
*London W. C.*
2. Lala Moti Lal Banarsi Dass, The Punjab  
Sanskrit Book Depot, Said Mittha Bazar, Lahore.
3. Lala Mehr Chand Lachhman Dss, Sanskrit  
Booksellers, Said Mittha Bazar, Lahore.
4. Pt. Wazir Chand, Vedic Book Depot, Mohan  
Lal Road, Lahore.

॥ ओ३म् ॥

## भूमिका ।

### सामवेदीय वाङ्मय का इतिहास ।

#### परमात्मा से सावेद का प्रादुर्भाव ।

तस्माद्यज्ञात्सर्वदुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।

छन्दाँसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥

श्रु० १०।६०।६॥यजुः ३१।७॥ तै० ब्रा० ३।१२।४॥

उस व्यापक सर्वपूज्य परब्रह्म से ऋग्वेद, सामवेद प्रादुर्भूत होते हैं। अथर्ववेद प्रसिद्ध होता है उस से, यजुर्वेद उस से प्रकट हुआ।

(पूर्वपक्ष) 'ऋचः' आदि पद बहुवचनान्त हैं, अतः इनका अर्थ ऋग्वेद आदि कैसे हुआ ? इनका अर्थ तो यही है कि ऋचापं, साममन्त्र और छन्द उत्पन्न हुए।

(उत्तरपक्ष) यह सत्य है, कि 'ऋचः, सामानि,' और 'छन्दाँसि' पद बहुवचनान्त हैं, पर साथ ही 'यजुः' पद एकवचन में भी है। यदि तुम्हारी बात मानी जावे तो 'यजुः' पद से तुम क्या अभिप्राय लोगे ?

(पूर्वपक्ष) 'यजुः' पद यहां जात्यर्थ में एकवचन होता हुआ भी यजुर्मन्त्रों का बोधक है, यजुर्वेद का नहीं।

(उत्तरपक्ष) यह बात यहां न घटेगी क्योंकि 'छन्दाँसि' पद पर पूर्ण विचार किसी और परिणाम पर ले जाता है। देखो ! 'छन्दाँसि' पद यहां किन्हीं मन्त्र-विशेषों का बोधक नहीं है। दयानन्द सरस्वती

ने इसी पर विचार करते हुए लिखा है—'वेदानां गायत्र्यादिच्छन्दोऽन्वितत्वात्पुनश्छन्दाँसीतिपदं चतुर्थस्याथर्ववेदस्योत्पत्तिं ज्ञापयती-  
खवधेयम् ।' (ऋ० भाष्यभू० वेदोत्पत्तिवि०) अर्थात् 'वेदों में सब मन्त्र  
गायत्र्यादि छन्दों से युक्त ही हैं, फिर ( छन्दाँसि ) इस पद के कहने  
से चौथा जो अथर्ववेद है उस की उत्पत्ति का प्रकाश होता है ।'  
अन्यथा 'छन्दाँसि' का यहां कोई प्रयोजन नहीं । इस अर्थ में अन्य  
प्रमाण भी देखो ।

(१) "ऋचाम्.....गायत्रं छन्दः ।  
यजुषां.....त्रैष्टुभं छन्दः ।  
साम्नाम.....जागतं छन्दः ।  
अथर्वणा.....सर्वाणि छन्दांसि ।"

गो० ब्रा० १।१।२६॥

वैदिक विचार में यह सुप्रसिद्ध है कि ऋग्वेद गायत्री छन्द  
सम्बन्धी है [यद्यपि यह अनुसन्धेय है कि ऋग्वेद में गायत्री(२४५०)  
की अपेक्षा त्रिष्टुप् (४२५३) क्यों अधिक है ? ] यजुर्वेद त्रिष्टुप् छन्द  
सम्बन्धी और सामवेद जगती छन्द सम्बन्धी है । अब रहा अथर्ववेद,  
सो वह पूर्वोक्त गोपथब्राह्मण के प्रमाणानुसार सर्व-छन्द-सम्बन्धी  
है। उस का किसी एक छन्द से सम्बन्ध-विशेष नहीं । यही कारण है  
कि उपस्थित मन्त्र में 'छन्दाँसि' पद से अथर्ववेद का ग्रहण होता है।

(२) प्रस्तुत मन्त्र-सम्बन्धी एक अन्य बात भी ध्यान देने योग्य  
है । अथर्ववेद में यह मन्त्र निम्नलिखित प्रकार से आया है—

तस्माद्यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।

छन्दो ह जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत ॥

अथर्व० १६।६।१३॥



यहां 'छन्दांसि' के स्थान में 'छन्दो ह' पाठ है। इस प्रकार पाठ में भेद कर देने से परमात्मा ने मन्त्रों द्वारा ही अन्य मन्त्रों का व्याख्यान कर दिया है। यह मन्त्र उन्नीसवें काण्ड का है, और यद्यपि पञ्चपटविका की भूमिका में लिखे अनुसार हम अभी तक इस काण्ड के सिद्धितान्तर्गत होनेके विषय में कुछ नहीं कह सकते, फिर भी यह तो सब को स्वीकार करना पड़ेगा कि बहुवचनान्त 'छन्दांसि' पद का अर्थ एकवचन 'छन्द' अर्थात् ( पूर्व प्रमाणों की दृष्टि से ) अथर्ववेद ही है। रहा क्रियापद 'जञ्जिरे'। सो वह व्यत्यय ही समझना चाहिये; यद्यपि ऐसे व्यत्ययों के उदाहरण सम्प्रदाय वैदिक ग्रन्थों में अत्यल्प मिले हैं।

पूर्वोद्धृत अथर्ववेद के मन्त्रों से निश्चय होता है कि 'छन्दांसि' आदि पदों का अर्थ एक वचन में ही है। ऐसी अवस्था में यजुः पद भी यजुः मन्त्रों का जाति-वाचक न रहेगा। इस विषय में अन्य प्रमाण देखो—

(३) यस्माद्दृचो अपातत्तन् यजुर्यस्मादपात्तन् । सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखं स्क्रम्भं तं ब्रूहि कतमः स्वदेवसः ॥

अथर्व १०।७।२०॥

इस प्रमाण में 'यजुः' पद एक वचन में है, और अथर्वान्गिरस स्पष्ट ही ब्रह्मवेद का द्योतक है। अतएव 'ऋचः' और 'सामानि' पदों का अर्थ भी ऋग्वेद और सामवेद ही होना चाहिये।

विचारान्तर्गत "तस्माद्यज्ञात्" ऋ० १०।६०।६ मन्त्र की व्याख्या में सत्यव्रत सामाश्रमी त्रयीपरिचय तथा निरुक्ताबोचन में लिखते हैं कि 'सामवेद छन्द और गान दो भागों वाला है। सो छन्द भाग का ग्रहण छन्दांसि पद से और गान भाग का ग्रहण सामानि पद से करना चाहिये।' इस का कुछ खण्डन तो हरिप्रसाद

जी ने वेदसर्वस्व के उपोद्घात पृ० १५ पर किया है। यद्यपि हम उनके विचार-क्रम से सहमत नहीं, तथापि उन के इस परिणाम के कि गान भाग तो मूलसंहिता का गेय-रूपान्तर ही है, अनुकूल सम्मति रखते हैं। इस गान भाग के लिये कहीं अन्यत्र मन्त्रों में 'सामानि' वा 'साम' पद प्रयुक्त हुआ होता तो सत्यव्रत जी का पक्ष कुछ ठहर सकता; पर ऐसा है नहीं, अतः उनका पक्ष निराधार होने से सम्मान योग्य नहीं।

सत्यव्रत जी के पक्ष को एक बात कुछ आश्रय दे सकती है, यद्यपि यह उन्होंने ने स्वयं नहीं लिखी। अथर्ववेदीय पिप्पलाद शाखा में 'सामानि यस्य लोमानि' के स्थान में 'छन्दांसि यस्य लोमानि' पाठ आया है। ऐसी दशा में सत्यव्रत कह सकता था कि 'छन्दांसि' पद 'सामानि' का पर्यायवाची है, और सामवेद के छन्द भाग का द्योतक है। यह बात भी सत्य नहीं ठहरती क्योंकि 'सामानि' आदि पद जैसा आगे चर्च कर और भी विदित हो जायगा सामवेद वाचक हैं। वैसा कोई छन्द वेद है नहीं, और 'छन्द' पद अथर्ववेद वाची सिद्ध हो चुका है, अतः पिप्पलाद का पाठ जब तक कि उस शाखा के अन्य लिखित ग्रन्थ न मिले (जो कि बहुत कम सम्भव है) अशुद्ध ही कहा जायगा।

## विदेशीय (पारसीक) भाषा में छन्द का अर्थ।

भाषा-विज्ञानी जानते हैं कि छन्द शब्द ही पारसीक भाषा में ज़न्द बना है। यही ज़न्द पारसीकों का धर्मग्रन्थ है। इस में अथर्वन पुरोहितों का नाम भी कई बार आया है। हाग के मतानुसार तो इस में आया हुआ एक मन्त्र भी अथर्ववेद का प्रथम मन्त्र है। इस प्रकार प्रतीत होता है कि ज़न्द का अथर्ववेद से सम्बन्ध-विशेष है, अतएव छन्द शब्द का अर्थ पूर्वोक्त मन्त्र में अथर्ववेद ही युक्तियुक्त है। ऐसी दशा में 'सामानि' आदि पद भी सामवेद आदि के वाचक हैं।

## ब्राह्मणग्रन्थों में सामानि पद का अर्थ ।

- (१) सामवेद आदित्यात् (पे० २५।७)
- (२) आदित्यात्सामानि (कौशी० ६।१०)
- (३) सूर्यात् सामवेदः (श० ११।५।८)
- (४) सामान्यादित्यात् (छाँ० उ० ४।१७।२)
- (५) सामवेद आदित्यात् (जै० उ० ब्रा० ३।१५।७)
- (६) सामवेदोऽमुष्मात् (षड्विं० ४।१)
- (७) आदित्यात् सामवेदम् (गो० १।६)

इन सात प्रमाणों में से दूसरे और चौथे प्रमाण में 'सामानि' पद आया है, अन्य पांच प्रमाणों में सामवेद । ये ब्राह्मणवाक्य एक प्रकार से पूर्वोक्त वेद मन्त्रों की व्याख्या में ही कहे गये हैं । इन में अधिकांश स्थलों में सामवेद का प्रयोग बता रहा है कि प्राचीन ब्रह्मादि ऋषियों की दृष्टि में भी इन स्थलों में 'सामानि' पद से सामवेद का ही अभिप्राय होता था । अतएव "तस्माद्यज्ञात्" मन्त्र का इस लेख के आरम्भ में किया हुआ अर्थ ही सत्य है, और दूसरा नहीं । इस मन्त्र का यही अर्थ ऋषि दयानन्द सरस्वती ने अपने अनेक ग्रन्थों में किया है । हम ने तो उसी का उद्धरण मात्र दिया है ।

## इस कल्पारम्भ में सामवेद सब से प्रथम किस को प्राप्त हुआ ?

पूर्व लेख से यह स्पष्ट होगया होगा कि सामवेदादि वेद उसी यज्ञ=स्कम्भ=परब्रह्म से प्राप्त हुए । यहां यह विवाद नहीं उठाया जायगा कि वेद-ज्ञान क्यों परमात्मा का है ? इसे किसी जन्म अवसर पर लुंगा । यहां अब यही निर्णय करना है कि इस कल्पारम्भ में सामवेद किसी एक व्यक्ति को परमात्मा से प्राप्त हुआ था अनेकों की ।

अनेकों को प्राप्त हुआ, ऐसा मानने वाले बहुत थोड़े हैं। उन के पक्ष में कोई प्रमाण भी नहीं है। जो यह मानते हैं कि सामवेद किसी एक व्यक्ति को परमात्मा से प्राप्त हुआ, वे दो भागों में विभक्त हो जाते हैं। एक भाग वालों का मत है कि सामवेद अग्नि के अधिष्ठाता देव को प्राप्त हुआ। उसी से मन्त्र-द्रष्टा ऋषियों को प्राप्त हुआ। दूसरे भाग वालों का मत है कि मनुष्य-देह-धारी अग्नि ऋषि को प्राप्त हुआ जो इस कल्पारम्भ में अमैथुनि सृष्टि का एक सभासद था। इस पर विचार—

(१) अग्नि आदि द्रव्यों का कोई चेतन जीव अधिष्ठाता है अर्थात् इनको स्व-शरीरवत् बनाये है, ऐसा वेद में कहीं नहीं आया। हां, अग्नि ईश्वरदेव का नाम तो सर्वत्र प्रसिद्ध है। इस का विशेष व्याख्यान भगवान् दयानन्द सरस्वती की ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका में मिल सकता है। इसी पत्र के खण्डन में 'जड़ाग्नि से ऋग्वेद का प्रकाश हुआ' इस का खण्डन हो जाता है। कारण कि जड़ को ज्ञान होना असम्भव है।

(२) दूसरे मत में भी एक भारी आपत्ति आती है। पूर्वोक्त ब्राह्मणग्रन्थों के सात प्रमाणों में सूर्यात्=आदित्यात्=अमुष्मात् पद आये हैं। इस पर—

(पूर्वपत्र) यदि सूर्यादि मनुष्य देहधारियों के नाम होते तो उन के पर्याय आदित्य आदि और 'वायु' का पर्याय "योऽयं पवते" शत० ११।५।८।२ न आते। ब्राह्मणग्रन्थों में "अमुष्मात्" प्रयोग स्पष्ट इसी सूर्य के लिये आया है। और वायु यदि कोई मानव समाज का सदस्य था तो क्या वह "योऽयं पवते" अर्थात् "जो यह बहता है" ऐसा ही था ? क्या मनुष्य भी पवन समान बहते हैं ?

(उत्तर पक्ष) प्राचीन संस्कृत वाङ्मय के न जानने का ही कारण है कि ऐसे पूर्वपक्ष खड़े होते हैं। देखो महाभारत को—

(क) वहां कर्ण के समीप उस के पिता सूर्य का आना लिखा है। यह सूर्य कोई देवता न था, प्रत्युत मनुष्य देहधारी व्यक्ति ही था। उस के निम्नलिखित नाम महाभारत वनपर्व अध्याय ३०१ में आये हैं।

अभिप्रायमथो ज्ञात्वा महेन्द्रस्य विभावसुः ।

कुण्डलार्थे महाराज सूर्यः कर्णमुपागतः ॥६॥

स्वप्नान्ते निशि राजेन्द्र दर्शयामास रश्मिवान् ।

कृपया परयाऽऽविष्टः पुत्रस्नेहाच्च भारत ॥८॥

ब्राह्मणो वेदविद्रुत्वा सूर्यो योगद्धिरूपवान् ॥९॥

अहं तात सहस्रांशुः सौहृदात्त्वां निर्दशये ॥२२॥

इस का संक्षिप्त अभिप्राय यह है कि योगसिद्धि-समन्वित सूर्य महात्मा ब्राह्मण वेष में रात्रि के अन्तिम प्रहर में कर्ण के जागने पर उसके समीप आया। उस सूर्य के यहां कई नाम आये हैं जो सूर्य शब्द के पर्याय हैं, यथा विभावसु=रश्मिवान्=सहस्रांशु। अब रामायण पर किञ्चित् ध्यान दो—

(ख) वाल्मीकिरामायण में वानर जाति का सुविख्यात वर्णन है। वहां भी मुनि वाल्मीकि वानर शब्द के अनेक पर्याय उस जाति के लिये प्रयोग में लाते हैं। ध्यान रहे कि मिथ्या-कथा युक्त विवरण को छोड़ कर वानर जाति मानवेतर जाति सिद्ध नहीं हो सकती। और सत्य तो यह है कि (क) और (ख) स्थलों में सूर्य और वानर के क्रमशः पर्याय-प्रयोग को देख कर ही मध्यम कालीन लोगों ने इन्हें देवता वा पशु मान लिया था। अन्त में ब्राह्मण ग्रन्थों के वाक्य-प्रयोग पर भी ध्यान देना चाहिये—

(ग) तैत्तिरीयब्राह्मण ३।१।८ में नचिकेता की कथा आई है। वहां उस का जिस ऋषि से प्रश्नोत्तर हुआ, उस का नाम मृत्यु ही कहा है। कठोपनिषद् में भी यही कथा बड़े विस्तार से आई है। वहां मूळ ऐतिहासिक कथा के साथ २ कुछ अलङ्कार भाग मिश्रित करके औपनिषद्-भाव अधिक खोजा गया है। पर सब से अधिक विचारणीय यह है कि यहां मृत्यु ऋषि के कई दूसरे भी नाम दिये गये हैं। ये सब नाम मृत्यु शब्द के पर्यायवाची हैं यथा "यम १।५ अन्तक १।२६"।

(घ) वेद के ऋषियों के तो कई ऐसे नाम सर्वानुक्रमणी में आये हैं जैसे "अग्निः पावकः" ऋ० १०।१४०॥ अग्निस्तपसः ऋ० १०।१४१॥ यहां विशेष्य विशेषण भाव से ये समानार्थक शब्द प्रयुक्त हुए हैं। इन पूर्वोक्त प्रमाणों से यही निश्चित होता है कि बहुत प्राचीन काल में व्यक्ति-विशेषों के नामों के यदि कोई पर्याय हों तो वे भी उसी के नाम के लिये प्रयुक्त हो जाते थे। और जैसे महाभारत में 'सूर्य' को 'रश्मिवान्' आदि कहा है वैसे ही शतपथ ब्राह्मण में 'वायु' को 'योऽयं पवते' कह दिया गया है। अतएव ब्राह्मण आदि ग्रन्थों के पूर्वोक्त सात प्रमाणों में "आदित्य" मनुष्य देहधारी ऋषिदेव है, कोई जड़ वा जड़ सूर्य का अविष्टाता देव नहीं। इसी आदित्य=सूर्य=रवि के मन में इस कल्पारम्भ के समय सब से पहले परमात्मा ने सामवेद का प्रकाश किया। उसी ने ब्रह्मा आदि को पढ़ाया और फिर यह वेद सर्वत्र फैलता गया। षड्विंशब्राह्मण में जो "अमुष्मात्" प्रयोग आया है उस का यही अभिप्राय है कि मनुष्य शरीर में शिर स्थान आदित्य वा सूर्य सम्बन्धी है। सूर्य ऋषि को समाधिस्थ दशा में शिर की नाड़ियों में मन के जाने से इस वेद का ज्ञान होता था, अतः यह प्रयोग आ गया है।

## सामवेद की शाखाएं ।

आर्यावर्ष में सृष्टि के आरम्भ से लेकर दीर्घ कालपर्यन्त लौकिक और वैदिक भाषा का बहुत प्रचार रहा । उस समय वेदादि शास्त्र आज कल की अपेक्षा अल्पपरिश्रम से ही समझे जाते थे । तब प्रवचनकर्त्ता आचार्य वा ऋषि अपने शिष्यों के लाभार्थ कठिन वैदिक शब्दों के स्थान में अन्य सरल वैदिक शब्द प्रयुक्त करके अथवा कुछ २ व्याख्या करके पढ़ाया करते थे । उतने से ही शिष्य यथार्थ अभिप्राय समझ लेते थे । तब किन्हीं विस्तृत भाष्यों की आवश्यकता न थी । यही ऋषि-प्रवचन था जो पीछे शाखा आदि नाम से प्रसिद्ध हुआ । इसी प्रवचन के सम्बन्ध में भाष्यकार पतञ्जलि मुनि ने लिखा है—

“ न हि च्छन्दांसि क्रियन्ते । निखानि च्छन्दांसीति । यद्यप्यर्थो निसो या त्वसौ वर्णानुपूर्वी सानिखा । तद्देदाच्चैतद्भवति काठकं कालापकं मौदकं पैपलादकमिति । ” ४।३।१०१॥

अर्थात् वेद तो क्या, साधारण ग्रन्थों के समान शाखाएं भी बनाई नहीं गईं । इनका शब्दार्थ नित्य है । हां, अर्थ के नित्य होते हुए भी वर्णानुपूर्वी अनित्य है । इसी के भेद से ऋषियों ने नित्य वेदार्थ खोला है । और इसी भेद से काठक आदि अनेक शाखाएं हुई हैं ।

( प्रश्न ) मूल सामवेद जिस की आगे शाखाएं बनीं अब कहाँ है ? उस में ऋग्वेदीय ऋचाएं न होनी चाहियें । अब तो जितने ग्रन्थ सामवेद के नाम से मिलते हैं उन सब में ऋग् भाग सम्मिलित है ।

( उत्तर ) मूल सामवेद था तो अवश्य क्योंकि बिना इस के साम-शाखाएं दनतीं कैसे, और प्रवचन किस का होता ? उसी मूल का वर्णानु ऋग्वेदादि वेदों और ऐतरेय आदि ब्राह्मणों में आया है । वह मूल भी प्रतीत होता है, प्रवचन के बल से पीछे ऋषि-विशेष के नाम से प्रसिद्ध हो गया । ऋग्वेदीय ऋचाएं सामवेद में न थीं ।

और न हैं। हम यह कह सकते हैं कि ऋग्वेद और सामवेद के अनेक मन्त्र सदृश हैं। उन्हीं मन्त्रों का पारिभाषिक नाम 'ऋक्' भी है। कर्त्ता परमात्मा ने प्रयोजन-विशेष के लिए ये समान मन्त्र दो वेदों में रखे हैं। मिथ्या-इतिहास-प्रचारक जो लेखक हमारे इस कथन को नहीं मानते उन्हें हम ऋग्वेद का एक मन्त्र बताते हैं—

गायत्रेण प्रति मिमीते अर्कमर्केण साम त्रैष्टुभेन वाकम् ।

वाकिन वाकं द्विपदा चतुष्पदात्तरेण मिमते सप्त वाणीः ॥

ऋ० १ । १६४ । २४॥

सुप्रसिद्धपकसौ चौसठवें सूक्त का यह चौबीसवां मन्त्र है। उन पूर्वपक्षी लेखकों के मतानुसार प्रथम मण्डलीय होने से यद्यपि यह मन्त्र अत्यन्त पुराना नहीं, तथापि बहुत नया भी नहीं है। इस मन्त्र में भी स्पष्ट ही साम में ऋचाओं का होना जताया गया है। अर्थ इस का अतीव सरल है। पूर्व लिखा जा चुका है कि ऋग्वेद गायत्री छन्द प्रधान और यजुर्वेद त्रिष्टुप् छन्द प्रधान है। अर्क पद मन्त्र वा ऋचा का भी पर्यायवाची है। अतएव मन्त्रार्थ यह है—

गायत्री छन्द से अर्क=ऋचा=ऋग्वेद का (जगदीश्वर) प्रतिमान करता है। ऋचाओं से सामवेद का। त्रिष्टुप् छन्द से वाक=यजुर्वेद का। यजुः मन्त्रों से वाक=अथर्ववेद का। [जोएसी] सात छन्द युक्त वेद वाणी का मान करते हैं [वे कृतकृत्य होते हैं।] इस से पूर्वपक्षियों को भी मानना पड़ेगा कि ऋचाएं वा ऋग्वेदीय मन्त्रों जैसे मन्त्र बहुत पुराने काल से सामवेद में चले आते हैं। हम पूर्व बता चुके हैं कि आर्येतिहासानुसार सामवेद आरम्भ से ही संहितारूप में चला आ रहा है, अतः इस दृष्टि से जो सत्य ही है आदि सृष्टि से सामवेद में ऋचाएं चली आती हैं। जो व्यक्ति इन ऋचाओं को साम पाठ से पृथक् जाने, मानों, वह वैदिक वाङ्मय के इतिहास से अज्ञ है।



## शाखा-विभाग ।

अब रहा शाखा-विभाग पर विचार । इस पर प्रकाश डालने वाला कोई अति प्राचीन ग्रन्थ हमारे पास विद्यमान नहीं । एक चरण-व्यूह ग्रन्थ ही रह गया है । यह विक्रम से पाँच, छः सौ वर्ष पूर्व का ही प्रतीत होता है । इस में पाठभेद का बाहुल्य है । नीचे उसी की सान्नी उपस्थित की जाती है ।

### चरणव्यूह की सान्नी ।

शौनकीय परिशिष्ट ।

सामवेदस्य किल सहस्रभेदा भवन्ति ।  
एष्वनध्यायेष्वधीयानारते शतक्रतुवज्रे-  
याभिहताः ।

शेषान्ध्याख्यास्यामः । तत्र राणायनीया  
नां सप्तभेदा भवन्ति । (१) राणाय-  
नीयाः (२) शाट्यमुग्राः\* (३) का-  
लोपा (४) महाकालोपा (५) लाङ्ग-  
लायनाः (६) शार्दूलाः (७) कौथु-  
माश्चेति ।

महिदास-प्रदर्शित प्रकारान्तर ।

तत्र कौथुमानां षड्भेदा भवन्ति ।  
(१) कौथुमाः । (२) आसुरसेयणाः  
(३) वातायनाः (४) प्राञ्जलिद्वैत-  
मृतः (५) प्राचीनयोग्याः (६)  
नैगमीयाः ।

अथर्व-परिशिष्ट ।

तत्र सामवेदस्य शाखासहस्रमासीदे ।  
अनध्यायेष्वधीयानाः सर्वे ते शक्रेण  
विनिहतः [प्रविलीनाः] तत्र केचिदवा-  
शिष्टाः प्रचरन्ति । तथथा ।

(१) राणायनीयाः (२) साद्य-  
मुग्राः \* (३) कालापाः (४) महा  
कालापाः (५) कौथुमाः (६) लाङ्ग-  
लिकाश्चेति ।

कौथुमानां षड्भेदा भवन्ति । तथथा ।

(१) सारायणीयाः (२) वातराय-  
णीयाः (३) वैतधृताः (४) प्राचीनाः  
(५) तेजसाः (६) अनिष्टकाश्चेति ।

\* सात्यमुग्रा नाम अधिक युक्त है । महाभाष्य १।१।४॥

१।१।४८ ॥ पर ऐसा ही पाठ है ।

जहां सैद्धों साम-शाखाओं के नाम विलुप्त हो गये हैं वहां विद्यमान नामों में भी पाठ भेद के कारण एक बड़ा अन्तर पड़ गया है। पूर्वोक्त शाखा-नामों के पढ़ने से यह बात सुस्पष्ट हो जाती है। चरणव्यूह के टीकाकार महिदास ने निज व्याख्या में कुछ अन्य नाम भी दिये हैं। उन्हीं का पाठभेद स्वामी हरिप्रसाद जी के वेदरुचस्व के पृष्ठ १७२ पर मिलता है। पता नहीं उन्होंने ने स्व-बुद्धि से पाठ संशोधन किया है अथवा किसी लिखित ग्रन्थ के आधार पर ये नाम दिये हैं। तथापि हम उनके पाठभेदों को कोष्ठों में रख कर महिदास के पाठ जो संवत् १६५६ के काशी-संस्करण में छपे हैं, नीचे देते हैं।

(१) आसुरायणीया (२) वासुरायणीया (३) वार्त्तान्तरेया [वार्त्तान्तवेया:] (४) प्राञ्जल [प्राञ्जला:] (५) ऋग्वैतविधा: [ऋग्वर्ण-भेदा:] (६) प्राचीनयोग्या: [७ ज्ञानयोग्या:] (७) राणायनीयाश्चेति। तत्र राणायनीयानां नव भेदा भवन्ति। (१) राणायनीया: (२) शाठ्यायनीया: (३) शाठ्यमुग्रा: [सात्वला:] (४) खल्वला: (५) महाखल्वला: (६) लाङ्गला: (७) कौथुमा: (८) गौतमा: (९) जैमिनीयाश्चेति।

पतञ्जलि मुनि कहते हैं "सहस्रवर्त्मा सामवेदः" (महाभाष्य कीलहार्न सं० भाग १, पृ० ९) अर्थात् 'सहस्र शाखा वाला साम वेद है।' उन्हीं सहस्र शाखाओं में से कुच्छेक का उल्लेख पूर्वोद्धृत चरणव्यूह के पाठों में है। चरणव्यूह के शाखा-नाश-इतिहास में तथ्य की किस अल्पमात्रा का होना सम्भव है। तदनुसार वर्षा वा किसी विद्युत्-प्रकोप वाले दिन किसी सामशाखीय अध्यापक ने अपनी शाखा का पाठ किया होगा। वह इन्द्र=सूर्य के वज्र=तड़ित की धारा से अपने प्राण नष्ट कर बैठा होगा। साथ ही

उस के ग्रन्थ विनष्ट हो गये होंगे\* । परन्तु यह सब दूर की कल्पना प्रतीत होती है । वस्तुतः कालक्रम से ही ये सब शाखाएं लुप्त होती गई होंगी ।

### सम्प्राप्त तीन शाखाएं ।

सम्प्रति सामवेद की तीन शाखाएं ही प्रसिद्ध हैं । चरणव्यूह में भी इन्हीं का उल्लेख है । 'गुर्जरदेशे कौथुमी प्रसिद्धा । कार्णाटके जैमिनी प्रसिद्धा । महाराष्ट्रदेशे राणायनीया प्रसिद्धेति ।' अर्थात् गुजरात में कौथुमी, कार्णाटक में जैमिनी और महाराष्ट्र में राणायनीय शाखा प्रसिद्ध हैं ।

पूर्वोक्त तीन शाखाओं में से कौथुमी शाखा ही सम्प्रति मूल सामवेद माना जाता है । इस का एक कारण तो इस का समस्त भारत में अत्यन्त प्रसिद्ध होना है । अन्य प्रबल कारणों की आगे खोज होनी चाहिये ।

इस सामवेद के आठ ब्राह्मण हम तक पहुंचे हैं । (१) तारुण्य महा-ब्राह्मण अथवा पञ्चविंशब्राह्मण अथवा प्रौढ ब्राह्मण अथवा छान्दोग्य ब्राह्मण । ( विबलियोंथीका इण्डिका संस्करण संवत् १९२७-३० ) । (२) षड्विंशब्राह्मण (जीवानन्द सं० १८८१ सन् तथा "विज्ञापनभाष्य-सहितम्," एच० एफ० ईलसिंह सम्पादित, लीडन १९०८ ) । (३) सामविधानब्राह्मण ( ए० सी० वर्नेल सम्पादित १८८० सन्, लण्डन, तथा सत्यव्रत सामा० सम्पा० सं० १९५१ ) । (४) आर्षेय ब्राह्मण ( ए० सी० वर्नेल सम्पा० १८७८ सन्, लण्डन, तथा सत्यव्रतसा० सम्पा०

\* अलबेरूनी लिखता है कि 'उस के काल से कुछ पूर्व ही कश्मीर के वसुक्र नामक ब्राह्मण ने वेदों को लिपिबद्ध करने की प्रथा चलाई थी ।' (अलबेरूनी का भारत । भाग दूसरा । श्रीसंतरामकृत अनुवाद । सन् १९२० । पृ० ३१) । हमें इस बात पर विश्वास नहीं ।

सं० १६४८ ) । (५) देवताध्याय वा दैवत ब्राह्मण ( ५० सी० बर्नेल सम्पा० सन् १८७३ तथा जीवानन्द सन् १८८१ ) । (६) उपनिषद् ब्राह्मण—(क) मन्त्रब्राह्मण ( सत्यव्रतसा० सम्पा० सं० १६४७ तथा प्रथम पपाठकमात्र के० स्टोन्नर सम्पा० १६०१ ) (ख) छान्दोग्योपनिषद् ( अनेक संस्करण निकल चुके हैं ) । (७) संहितोपनिषद् ५० सी० बर्नेल सन् १८७१ ) । (८) वंशब्राह्मण ( ५० सी. बर्नेल सम्पा. १८७३ तथा सत्यव्रत सा० सं० १६४६ ) ।

कई विद्वानों का मत है कि वस्तुतः सामब्राह्मण एक ही है । वह सम्प्रति चार भागों में विभक्त हो गया है । (१) पञ्चीस अध्यायात्मक पञ्चविंशब्राह्मण (२) पञ्च अध्यायात्मक पद्विंशब्राह्मण (३) अष्ट अध्यायात्मक छान्दोग्योपनिषद् (४) दो अध्यात्मक गृह्य-कर्म-प्रधान मन्त्रब्राह्मण । सारा ब्राह्मण चालीस अध्याय युक्त था । अन्य पांच ब्राह्मण अनुब्राह्मणमात्र हैं । जब तक सामवेद सम्बन्धी अनेक ग्रन्थों के शुद्ध वैज्ञानिक संस्करण न रूप जावें, तब तक इस विषय पर कुछ कहना हमारे लिये अयुक्त है । इस का विचार तभी होसकता है जब इन ब्राह्मण-ग्रन्थों का काल-निरूपण हो जावे ।

## तारुण्यब्राह्मण की प्राचीनता ।

अष्टाध्यायी ४। २। १३८॥ पर एक वार्त्तिक है “चरण सम्बन्धेन निवास लक्षणोऽग्नौ” इस पर लिखते हुए पतञ्जलिमुनि चरणसम्बन्धी नौ (९) ऋषियों को निवास-विचार से तीन भागों में बांटते हैं । “त्रयः प्राच्याः । त्रय उदीच्याः । त्रयो माध्यमाः ।” काशिकाकार इसी वाक्य को ध्यान में रखकर अष्टा० ४। ३। १०४ ॥ पर लिखता है—“वैशम्पायनान्तेवासिनो नव ।” आगे चलकर वह कुछ प्राचीन कारिकाएं उद्धृत करता है । उन में से एक का अर्थ भाग यह है—

ऋचाभारुणितारुड्याश्च मध्यमीयास्त्रयोऽपरे ॥

अर्थात् ऋचाभ, आरुणि और तारुड्य तीनों वैशम्पायन-शिष्य माध्यम=मध्यम भूमि निवासी थे। इन तीनों के अपने २ चरण थे। इन में से तारुड्यों की शाखा आरम्भ से कौथुमी ही चली आ रही है। इस का कुछ पता पाणिनीय गणपाठ से लगता है। वहाँ ६।२।३७ पर यह तीन गण भी दिये हैं। “कठकालापाः। कठकौथुमाः। कौथुमलौकाक्षाः।” हम कह चुके हैं कि कठ और तारुड्य आदि सतीर्थ्य=एक गुरु के शिष्य थे। उन में से कठों की अपनी शाखा थी, परन्तु तारुड्यों का अपना चरण ही था। इस लिये गण में कठ और तारुड्य दोनों की शाखाओं का परिचय देने के लिये “कठकौथुमाः” कहा है। इस कथन में एक बात ध्यान देने योग्य है। सामविधान आह्वण के अन्त में जो ऋषि-परम्परा दी है वहाँ तारुड्य का गुरु प्राजापत्यविधि से बादरायण कहा है। यथा—

सोऽयं प्राजापत्यो विधिस्तमिमं प्रजापतिर्वृहस्पतये प्रोवाच ।  
वृहस्पतिर्नारदाय । नारदो विष्वक्सेनाय । विष्वक्सेनो व्यासाय  
पाराशर्याय । व्यासः पाराशर्यो जैमिनये । जैमिनिः पौष्पिण्ड्याय ।  
पौष्पिण्ड्यः पाराशर्यायणाय । पाराशर्यायणो बादरायणाय ।  
बादरायणस्ताण्डिशाठ्यायनिभ्याम् । ताण्डिशाठ्यायनिनौबहुभ्यः॥

एक तारुड्य का वर्णन शतपथब्राह्मण ६।१।२।२५ में आया है— “अथ ह स्माह तारुड्यः।” अतः इतना निश्चित है कि चाहे तारुड्य कोई भी हो, है वह अतिप्राचीन। तब उस की संज्ञिता क्यों कौथुम हुई और मूल सामवेद क्यों कौथुम कहलाया? इसके विचार के लिए बड़े परिश्रम की आवश्यकता है।

सूत्रों का विवरण निम्नलिखित प्रकार से है। (१) मशककलसूत्र

अथवा आर्षेयकल्प ( डबल्यू० कालेण्ड सम्पा० सन् १९०८ ) ।  
(२) बुद्रसूत्र आर्षेयकल्प का परिशिष्ट ही है ( उसी के उत्तर भाग में छपा है ) । (३) ताट्यायन श्रौतसूत्र ( बिब० इण्डि० सं० १९२८ ) ।  
(४) गोभिलीय गृह्यसूत्र ( क्लापर सम्पा० १८८४ सन् तथा बिब० इण्डि०, द्वि० सं०, सन् १९०८ ) । (५) श्राद्धकल्प, परिशिष्ट, गोभिल अथवा वसिष्ठकृत ( बिब० इण्डि० द्वि० सं० सन् १९०६ ) ।  
(६) कर्मप्रदीप अथवा छन्दोगगृह्यपरिशिष्ट ( धर्मशास्त्रसंग्रह, सन् १८७६, जीवानन्द संस्करण के पूर्वार्ध पृ० ६०३-६४४ तक, कात्यायन-स्मृति वा कात्यायनविरचित कर्मप्रदीप के नाम से छपा है । तथा प्रथम प्रपाठक फ्र० श्रेडर सम्पा०, हृले १८८६ सन् तथा बिब० इण्डि० में सन् १९०९ और द्वि० प्रपाठक सु० होलस्टाईन सम्पा० हृले सन् १८६० ) ।  
(७) गृह्यासंग्रह, गोभिलपुत्रकृत ( ब्लूमफील्ड द्वारा Z.D. M. G. Vol ३५ में सम्पा० तथा बिब० इण्डि० द्वि० सन् १९१० ) । (८) पञ्च-विधसूत्र ( सत्यव्रतसा० सम्पा० तथा रि० ज़ीमन सम्पादित १९६३ ब्रेसला ) । शिद्धान्त्रियों में तीन शिद्धान्त प्रसिद्ध हैं ।

(१) नारदीय शिद्धान्त ( सत्यव्रतसा० सं०, दत्तात्रेय सम्पा० लाहौर सन् १९०६ तथा शिद्धान्तसंग्रह काशी में, सन् १८६३ ) । (२) लोमशीय शिद्धान्त ( शिद्धान्त संग्रह सं० ) (३) गौतमीयशिद्धान्त ( शिद्धान्त संग्रह सं० ) । प्रातिशाख्यों में निम्नलिखित ग्रन्थ हैं ।

(१) ऋक्तन्त्र ( ए० सी० बर्नेल सम्पा० १८७६ ) । (२) सामतन्त्र ( दयानन्द महाविद्यालय के लालचन्द पुस्तकालय में इस की एक प्रतिलिपि है जो मद्रास गवर्नमेण्ट के संग्रह के एक ग्रन्थ से कराई गई थी ) । (३) पुष्पसूत्र वा फुल्लसूत्र ( रि० ज़ीमन सम्पादित ) ।

कुल चौदह (१४) ग्रन्थों का हम ने ऊपर उल्लेख किया है । इन के अतिरिक्त अठतीस (३८) और ग्रन्थ हैं ! उन सब के नामादि

जैमिनीय संहिता (von Dr. W. Caland, Breslau, 1917 ) पृ०  
१३—१५ पर देखो ।

## २. राणायनीय शाखा ।

इस शाखा की संहिता अभी तक नहीं छपी । इस के सूत्र  
ग्रन्थ निम्नलिखित हैं ।

- (१) द्राह्यायण औतसूत्र (कुछ भाग रियूटर सम्पादित लगडन  
१९०४ सन्) । (२) खादिरगृह्यसूत्र अथवा द्राह्यायण गृह्यसूत्र (मैसूर  
राज्य संस्कृत ग्रन्थमाला १९१३ सन् तथा अनन्दाश्रम पूना सन् १९१४) ।
- (३) गौतमपितृमेधसूत्र (कालेण्ड सम्पा० लार्डपजिग १८६६ सन्) ।
- (४) गौतमस्मृति ( स्मृतिसमुच्चय, पूना ) ।

राणायनीय-शाखा सम्बन्धी इतने ग्रन्थों का वर्णन करके  
डाक्टर कालेण्ड महाशय एक विचार उपस्थित करते हैं । वह इतना  
आवश्यक है कि हम उस का अनुवाद दिये बिना नहीं रह सकते—

“ परन्तु इन सब ग्रन्थों का राणायनीय-शाखा सम्बन्धी होना  
अनिश्चित ही है । कर्मप्रदीप पर आशार्क का भाष्य है । उस में वह  
बताता है कि गोभिलसूत्र कौथमों का ही गृह्यसूत्र नहीं प्रत्युत राणाय-  
नीयों का भी है । हेमाद्रि भी अपने श्राद्धकल्पमें तीन बार (पृ० १४२४,  
१४६०, १४६८) गोभिल को राणायनीय-सूत्रकृत् कहता है । यदि यह  
बात मान ली जावे तो खादिरगृह्यसूत्र राणायनीयों का सूत्र नहीं रह  
सकता । अस्तु, दक्षिण भारत में शारदूलों के एक खादिर गृह्यसूत्र  
की विद्यमानता कही जाती है । ( देखो Report on a search for  
Sanskrit mss. in the Bombay Presidency 1892-95, by  
A. V. Kathavate Bombay, 1901, No. 79 ) । शारदूल भी  
सामवेद की एक शाखा है । अब यही खादिर गृह्यसूत्र शारदूल  
सामगों के खादिर सूत्र से कुछ पाठभेदों को छोड़ के प्रायः मिलता

वताया जाता है। हेमाद्रि के काल में शार्दूल शाखा की ऐतिहास्य शृङ्खला अटूट थी, यह भी श्राद्धकल्प से ज्ञात होता है। उस में (पृ० १०७८) पर, वह वेद के उन भागों का उल्लेख करता है जो ब्राह्मणों के भोजन-समय शार्दूल-शाखा वालों को गाने चाहियें। अतएव यह स्पष्ट है कि कम से कम खादिरगृह्यसूत्र में मूलतः शार्दूलों सम्बन्धी गृह्यकर्म थे। परन्तु एक और ऐतिहास्य भी खादिर-सूत्र सम्बन्धी है। मैसूर में १८८१ सन् में कण्ठभूषण भाष्य सहित जो गृह्यरत्न छपा है उस में अनेक वार गौतमगृह्यसूत्र का उल्लेख है। उस में जितने भी वाक्य गौतम के नाम से दिये गये हैं, वे सब हमारे खादिरगृह्यसूत्र में मिलते हैं। इस के अतिरिक्त जैसा हम पूर्व कह चुके हैं, हमारे पास एक गौतम पितृमेधसूत्र है, एक गौतम धर्मसूत्र (स्टैनज़लर सम्पा० लण्डन १८७६) \* और एक स्मृति भी है। ये सब गौतमों के ग्रन्थ भी हो सकते हैं कि जो सामवेद का गौण भाग है।”

हम ने विद्वान् पाठकों के विचारार्थ श्री कालेण्ड-प्रदर्शित ये सब पत्र उद्धृत कर दिये हैं। अपनी सम्मति किसी और समय पर प्रकाशित करेंगे ॥

## जैमिनीय शाखा ।

इस शाखा के निम्नलिखित ग्रन्थ अब तक प्रकाशित हो चुके हैं । (१) जैमिनीय संहिता (Dr. W. Caland's edition, Breslau, 1907.) । (२) जैमिनीय-ब्राह्मण (इस के अनेक खण्ड हन्नस अट्टेल ने पाश्चात्य अनुसन्धान पत्रों में प्रकाशित किये हैं। अन्य उपयोगी खण्डों का अधिकांश भाग ग्रन्थरूप में छप गया है—Das Iaiminiya Brāhmana in Auswahal, Amsterdam, 1919) हस्तलिखित सामग्री के अपर्याप्त होने से यह बृहद्ब्राह्मण अभी पूरा नहीं छप सका) । (३) जैमिनीय-उपनिषद्ब्राह्मण ( अर्थात् गायत्र्युपनिषद्,

\* इसके दो भारतीय संस्करण निकल चुके हैं (१) मैसूर (२) मद्रास ।



पूर्वोक्त ब्राह्मण का उत्तर भाग है। दृन्नस अटेंलसम्पा० १८६४ सन्)  
(४) आर्षेय-ब्राह्मण ( ५० सी० बनेल सम्पा० मंगलोर १८७८ )।  
(५) जैमिनीय श्रौतसूत्र अग्निष्टोम-प्रकरण (डी० गेस्ट्रा सम्पा०  
लाईडन सन् १९०६)\*। (६) जैमिनीय-गृह्यसूत्र (edited by Dr.  
W. Caland, Amsterdam, 1905.)†

## जैमिनीय-ब्राह्मण ।

“शौनकादिभ्यश्चन्द्रसि।” ४।३।१०६ के गण में पाणिनि  
“तलवकार” शब्द पढ़ते हैं। इसी तलवकार ऋषि के नाम पर  
तलवकार शाखा प्रसिद्ध थी। उसी का अब जैमिनि-शाखा नाम  
हो गया है। इसका कारण अभी पूर्णतया ज्ञात नहीं। संहिता के  
समान ब्राह्मण को भी अब जैमिनीय ब्राह्मण कहते हैं।

श्री शङ्कराचार्य केनोपनिषद् भाष्य के प्रारम्भ में लिखते हैं—  
“केनेषितम्” इत्याद्योपनिषत्परब्रह्मविषया वक्तव्येति नवमस्या-  
ध्यायस्यारम्भः। प्रागेतस्मात्कर्माण्यशेषतः परिसमापितानि समस्त-  
कर्माश्रयभूतस्य च प्राणस्योपासनान्युक्तानि कर्माङ्गसामविषयाणि  
च। अनन्तरं च गायत्रसामविषयं दर्शनं वंशान्तमुक्तम्।”

(अर्थ) “केनेषितम्” से आरम्भ होने वाली, परब्रह्मविषय के  
कहने वाली उपनिषद् कही जानी चाहिये। यह नवम अध्याय का  
आरम्भ है। इस से पूर्व (आठ) अध्यायों में यह कर्म पूरे कहे गये  
हैं। प्राणोपासना भी कही गई है। तत्पश्चात् गायत्रसाम और वंश  
कहा गया है।” तलवकार ब्राह्मण का यह वर्णन शङ्कर ने किया है।

जैमिनीयब्राह्मण जो सम्प्रति मिलता है उसका अध्यायक्रम

---

\* जैमिनीय श्रौतसूत्र समग्र सभाष्य बड़ोदा राजकीय ग्रन्थमाला में  
शीघ्र ही छपेगा।

† जैमिनीय गृह्यसूत्र का कालेरड सम्पादित भारतीय संस्करण ला०  
मोतीलाल बनारसीदास सैदमिठा बाजार लाहौर द्वारा शीघ्र प्रकाशित किया जायगा।

शङ्कर-प्रदर्शित अध्यायक्रम से विभिन्न हैं। प्रथम तीन अध्याय हैं। पश्चात् उपनिषद् ब्राह्मण आरम्भ होता है। उस में चार अध्याय हैं। केन उपनिषद् चतुर्थाध्याय के अठारहवें खण्ड से आरम्भ होता है, और इक्कीसवें पर समाप्त हो जाता है। वंश इस से पूर्व ही समाप्त हो जाता है। सात खण्ड इस से आगे और हैं। सो सारे मिल के ब्राह्मण के सात अध्याय होते हैं। यदि आर्षेय-ब्राह्मण भी मिला लिया जावे तो सारे आठ अध्याय होते हैं। सम्भव है और ग्रन्थ मिलने पर इस बात का निर्णय हो जावे।

### उपनिषद् ब्राह्मण ।

उपनिषद् ब्राह्मण को हन्स अर्टेल महाशय ने अमेरिकन ओरिएण्टल सोसायटी के जर्नल सं० १५ में रोमन-लिपि में सम्पादित किया था। मेरे कहने पर पण्डित रामदेव जी ने उसी से इस का देवनागरी संस्करण तय्यार किया था। वही अब यहां छपा गया है।

### हस्तलिखित सामग्री ।

जिस हस्तलिखित सामग्री से अर्टेल ने अपना संस्करण तय्यार किया था उस का उल्लेख उस ने अपनी भूमिका में इस प्रकार दिया है—

A. बनेल के नोटानुसार जो लपेटने वाले कागज़ पर है, यह हस्तलेख “मलाबार हस्तलेख से नकल किया गया,” १८७८ सन् में। अन्त में वह लिखता है “मूल की तिथि, कुलुम १०४०=१८६४ सन्। पलघट के हस्तलेख से।”

B. तालपत्रों पर लिखे ग्रन्थ से, लगभग ३०० वर्षपूर्व लिखा गया, तिन्नेवली से प्राप्त, परन्तु पहले अलेप्पी से लाया गया था।” इस के पाठभेद ही दिये गये हैं।

C. बनेल के हाथ की रोमनलिपि में किया हुआ ग्रन्थ। यह १५१६ पर समाप्त हो जाता है।

A. ग्रन्थ का पाठ और B. के पाठभेद ग्रन्थाक्षरों में हरिषर्षाण कागज पर हैं। वे प्रो० जानअवेरे द्वारा रोमन में लिखे गये थे, और कापी प्रो० ह्विटने ने मूल से मिला ली थी। उन्होंने C. के पाठभेद भी दे दिये थे। इसी कापी से यह संस्करण तय्यार किया गया है। मूल अब इण्डिया आफिस लण्डन के पुस्तकालय में है।

हस्तलेखों में ऐसा शीर्षक है —

तलवकारब्राह्मणे उपनिषद्ब्राह्मणम् ।

अनुवाक, खण्ड और कण्डिकादि के विभाग विषय में श्रीअर्टेल ने यह लिखा है। “वाक्यों (कण्डिकाओं) के अङ्क देने में हस्तलेख असावधान और असङ्गत हैं। A. अनुवाक और खण्डविभाग नहीं देता, परन्तु प्रत्येक अध्याय की कण्डिकाओं पर क्रमशः अङ्क देता है। मैंने अनुवाक और खण्ड विभागों में B. और C. की अथवा कण्डिकाओं के अङ्कों में तीनों हस्तलेखों की साधारण अशुद्धियों और विलोपों का लिखना उपयोगी नहीं समझा। अध्याय २१ से A. और B. अङ्कों का नया प्रकार (कण्डिकाओं की समाप्ति पर) आरम्भ करते हैं। तथापि तीन पहली कण्डिकाएं (२१-३) छोड़ते हैं, और २४ को २ लिखते हैं। पर इस के पश्चात् नियमपूर्वक अर्थात् २५=५ इत्यादि, लिखकर तृतीय अध्याय के अन्त तक जाते हैं, ३४२=५७। B. में अङ्क देने के एक और क्रम के भी अवशेष हैं। यहां तीसरे अध्याय की प्रथम तीन कण्डिकाओं पर और अङ्कों के साथ क्रमशः ५६, ५७ और ५८ लिखा है। B. में ३१८ पर ७०, ३२२ पर ७३, ३३२ पर ७६ के अङ्क अधिक हैं। इन अन्तिम तीन अनुवाकों की गणना स्पष्ट ही इस अध्याय के प्रथम तीन से विभिन्न है। साथ ही मूल की कण्डिकाओं के क्रम से भी भिन्न है।

“तीनों हस्तलेख एकही सदोष मूल से आए हैं। तीनों में बहुत सामान्य भ्रष्टपाठ हैं। विराम, अक्षर-विन्यास और सन्धि-सम्बन्धी

बातों में भी वे असावधानी से लिखे गए हैं। मैंने इन बातों के ठीक करने में स्वतन्त्रता बर्ती है। सब स्थलों में, जो केवल अक्षर-विन्यास सम्बन्धी नहीं हैं, मैंने हस्तलेखों के पाठ-भेद पृष्ठ के नीचे दिये हैं। निर्देशों की सरलता के लिये मैंने प्रत्येक अध्याय में निरर्थक अनुवाक विभाग का ध्यान न करते हुए क्रमशः खण्डाङ्क दे दिया है। हस्त लेखों में कण्डिकाओं पर कोई अङ्क नहीं तथापि मैंने यह दे दिया है।

अमेरिकन संस्करण के अन्त में अटेल महाशय ने चार सूचियां दी हैं। [१] आवश्यक शब्दों और ऋषि नामों आदि की सूची। [२] निर्वचनों की सूची। [३] व्याकरण सम्बन्धी प्रयोजनीय स्थल। [४] उद्धरणों की सूची। हमने प्रथम सूची में से ऋषि नाम पृथक् करके उनकी सूची दे दी है। अन्य शब्दों को इस लिए नहीं दिया कि दयानन्द महाविद्यालय के अनुसन्धान विभाग की ओर से उपलब्ध ब्राह्मणों आदि की एक विस्तृत सूची तय्यार हो रही है। उसमें ये शब्द और अन्य शब्द भी आवेंगे, अतः उनको यहां छापना आवश्यक नहीं समझा। सूचियां (२) और (४) भी हमने दे दी हैं। तीसरी को हम आर्यावर्तीय पण्डितों के लिए अनावश्यक समझते हैं।

पं० रामदेव ने पाठभेदों को देने के लिये A.B.C. के हवाले नहीं दिये। सो आवश्यक होने पर भी यह रह गये हैं। पहले फार्मों में उन्होंने Omitted के स्थान में "ओम" दिया था। मैंने आगे चल कर उस के स्थान में संस्कृत शब्द "नास्ति" कर दिया है। यह संस्कृत शब्द होने से एतद्देशीय जनों के लिये अधिक उपयोगी है। अटेल ने प्रत्येक स्वर सन्धि पर 'कामे' का चिह्न दिया हुआ था। रामदेव जी ने उस के स्थान में 'S' चिह्न दे दिया था। संस्कृत में यह अनावश्यक है, अतः दूसरे फार्म से मैंने इसे भी हटा दिया है ॥

## जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मण के सम्बन्ध में विशेष वक्तव्य ।

जैसा पूर्व लिखा जा चुका है, यह ब्राह्मण, बृहद् जैमिनीय ब्राह्मण का एक भागमात्र है। इस का मूल नाम “गायत्र उपनिषद्” है। जै० उ० ब्रा० ४। ७ के अन्त में यही नाम आया है। यह नाम है भी सार्थक, क्योंकि इन सारे अध्यायों में गायत्र साम का ही वर्णन है। उसी से अमृत अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति जताई गई है। जै० उ० ब्रा० ३।४० के आरम्भ में यही कहा गया है—

तदेतदमृतं गायत्रम् । एतेन वै प्रजापतिरमृतत्वमगच्छदेतेन  
देवा एतेनर्षयः ॥१॥

अर्थात् वह यही अमृत गायत्र (साम) है। इसी से प्रजापति मुक्त हुआ, इसी से (अन्य) विद्वान्, इसी से मन्त्रार्थ द्रष्टा (ऋषि)।

इस ब्राह्मण में दो स्थलों पर अर्थात् ३।४०-४२॥ और ४।१६, १७॥ पर दो वंश परम्पराएं आई हैं। अन्तिम वंश परम्परा पहली से कुछ ही अन्य नाम रखती है। यह है भी छोटी। पहली का आरम्भ “ब्रह्म” से होता है। (१) ब्रह्म ने (२) प्रजापति के लिये। उसने (३) परमेष्ठी के लिये। उसने (४) देवसविता के लिये इत्यादि।

शतपथब्राह्मण (माध्यन्दिन) में भी दशम काण्ड की समाप्ति पर और चौदहवें काण्ड के अन्त से कुछ पहले दो ऋषि वंशावलियां आई हैं। पूर्वली में बताया गया है कि स्वयम्भु ब्रह्म ने प्रजापति को विद्या पढ़ाई, और उत्तरली में कहा है कि परमेष्ठी को। जै० उ० ब्रा० में एक रूप से इन दोनों का मेल है। अर्थात् ब्रह्म, प्रजापति, और परमेष्ठी यद्यपि समकालीन थे, तथापि गायत्र साम का रहस्य ब्रह्म ने स्वयं परमेष्ठी को नहीं बताया, प्रत्युत वह उस तक प्रजापति द्वारा आया।

जैमिनीय ब्राह्मण कोई नया ब्राह्मण नहीं ।

शतपथ ब्रा० के द्वि० वंश में ब्रह्म से लेकर अपने आप (वयं) तक ६८ नाम हैं । जै० उ० ब्रा० के प्रथम वंश में ब्रह्म से लेकर वैपदिचत दा० गुप्त लौहित्य तक ५० नाम हैं । प्रत्येक ब्राह्मण के सब वंशों को मिला कर और यदि कुछ नाम छूट गये हैं तो उनका स्थान छोड़ कर भी ब्रह्म से ऋषियों की एक जैसी संख्या होजायगी। इस से प्रतीत होता है कि आर्य्यावर्त्त के इतिहास में ब्राह्मणों के संकलन का समय प्रायः एक ही था । ब्रह्मा से जो अनेक विद्यार्ये अनेकों कुलों में चली आई थीं, वही इतिहासयुक्त करके प्रायः एक काल में एकत्र कर ली गईं । जैमिनीय ब्राह्मण भी उसी समय संकलित हुआ ।

जब यह ग्रन्थ छप रहा था, तब श्रीमान् कालेण्ड महाशय ने मुझे पत्र लिखा कि वे अटेंल के कई पाठ शुद्ध कर देंगे । तब मैंने उन्हें मुद्रित ७२ पृष्ठ भेज दिये थे । उन्होंने उनके हाशिये पर संशोधन कर दिया है । वह भूमिका के अन्त में छाप दिया गया है । अगले पृष्ठों का संशोधन फिर कभी छपा जायगा । इस परिश्रम के लिए जो उन्होंने स्वयं मेरा ध्यान उधर खेंच कर किया है, मैं उन का अत्यन्त अनुगृहीत हूँ ।

इस ग्रन्थ के प्रूफ पं० विश्वचन्द्र एम० ए० शास्त्री, तथा पं० हंसराज पुस्तकाध्यक्ष लालचन्द्र पुस्तकालय ने देखे हैं । इन दोनों महाशयों का भी मैं कृतज्ञ हूँ ।

परमदयामय भगवान् अपनी कृपा से इन हृदय-पावक ग्रन्थों के प्रचार में मेरी सहायता करें । इत्योम्

दयानन्द महाविद्यालय  
लालचन्द्र पुस्तकालय लाहौर  
माघ, संक्रान्ति सं० १९७७

भगवद्भक्त

## श्री कालेराड-प्रदर्शित सटिप्पण पाठ संशोधन ।

पृ०	पंक्ति	प्रकाशित पाठ	संशोधित पाठ
३,	१२	०त्त्रिच्यादेवमे०	सिच्येतैवमे०
५,	१	हैऽपा खला	हैपाखला
५,	७	उतैपां खला	उतैपाखला
५,	११	०प्रति यस्य	प्रत्यस्य
हस्त ले० पाठ शुद्ध है । देखो पाठ भेद ।			
७,	६	लोष्टो	लोष्टो
८,	१	ळयित्वा पनि०	ळयित्वापनि०
६,	६	ववर्ज	ववृजे*
६,	६	बहुर्भू०	बहोर्भू०
११,	१२	वै वेद०	वावेद०
१६,	४	यदनृते	यदनृचे
१७,	८	देवा	देवाः
१७,	८	कस्माद्	कस्मा उ
२०,	६	०सप्ताहोरात्राः	सप्त होत्राः
३४,	१५	अभिपर्यक्त	अभिपर्यस्त
३७,	३	उच्चा	[उच्चा]
३७,	८	ह चै०	ह [स्म] चै०
४०,	२	तद्यद्वै	यद्यद्वै
४६,	१	प्रजापतिर्वा वेद अग्र	प्रजापतिर्वावेदमग्र
४६,	१२	सुनोति	सनोति
५३,	२	०सर्क	०सर्क
५३,	४	०ायतन	०ायतना †
५८,	३	०पुनीध्वं न पूता वै	०पुनीध्वमपूता वै
६०,	१५	ययाच ‡	पपाच or पपच

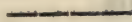
\* The mss. (Grantha) have ववृज or वव्रज which nearly is the same in Grantha. If the Sandhi is effaced we ought to return ववृजे ।

† इदमायतना is a bahuvrihi compound. पाठभेद जो नीचे दिया है, वह ठीक है ।

‡ Must be corrupt.

## शुद्धिपत्रम् ।

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
भू० ४	५	सिंहि०	संहि०
” ६	४, ६, ८, ११	अग्नि	सूर्य
१६	१३	०सा	०सा—
२४	१	यत्पर तद०	यत्परतद०
३८	३	शामूल प०	शामूलप०
५४	१३	श्रेय स	श्रेयस
६३	२	पवं वि०	पवंवि०
१००	१५	०भ्य	०भ्य—
१०६	१४	वाङ्	वाङ्
१०७	१५	० पाणौ	० पानौ
१११	७	युष्वासु	युष्वासु
११३	११	रतो	रैतो
१३६	३	०सपृष्णाति	स्पृष्णाति
१४२	६	स्वगस्य	स्वर्गस्य
१४६	६	चकुळं	चकुळं





---

# जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मणम्

---

---

*[Faint, illegible text]*

---

# जैमिनीय-उपनिषद्-ब्राह्मणम्

प्रजापतिर्वा इदं त्रयेण वेदेनाऽजयद् यदस्येऽदं जितं  
 तत् ॥ १ ॥ स ऐक्षतेऽत्थं चेद्वा अन्ये देवा अनेन वेदेन यक्ष्यन्त  
 इमां वाव तेजितिं जेष्यन्ति येऽयम्मम । हन्त प्रयस्य वेदस्य रस-  
 माददा इति ॥ २ ॥ स भूरित्येवर्षेदस्य रसमादत्त । सेऽयम्पृ-  
 थिव्यभवत् । तस्य यो रसः प्राणेदत् सौऽग्निरभवद्रसस्य रसः  
 ॥ ३ ॥ भुव इत्येव यजुर्वेदस्य रसमादत्त । तदिदमन्तरिक्षम-  
 भवत् । तस्य यो रसः प्राणेदत् स वायुरभवद्रसस्य रसः ॥ ४ ॥  
 स्वरित्येव सामवेदस्य रसमादत्त । सौऽसौ द्यौरभवत् । तस्य यो  
 रसः प्राणेदत् स आदित्योऽभवद्रसस्य रसः ॥ ५ ॥ अथैऽकस्यै-  
 ऽथाऽक्षरस्य रसं नाऽशक्रोदादातुम् ओमित्येतस्यैऽव ॥ ६ ॥  
 सेऽयं वागभवत् । ओमेव नामैऽथा । तस्या उ प्राण एव रसः ॥ ७ ॥  
 तान्येतान्यष्टौ । अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम । ब्रह्म उ गायत्री ।  
 तद् उ ब्रह्माऽभिसंपद्यते । अष्टाशफाः पञ्चवस्तेनो पशव्यम् ॥ ८ ॥ १, १

प्रथमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स यद् ओमिति सोऽग्निर्वागिति पृथिव्योमिति वायुर्वा-  
 गित्यन्तरिक्षमोमित्यादित्यो वागिति द्यौरोमिति प्राणो वागित्येव  
 वाक् ॥ १ ॥ स य एवं विद्वानुद्गायत्योमित्येवाऽग्निमादाय पृथि-  
 व्याम्प्रतिष्ठापयत्योमित्येव वायुमादायाऽन्तरिक्षे प्रतिष्ठापयत्यो-  
 मित्येवाऽऽदित्यमादाय दिवि प्रतिष्ठापयत्योमित्येव प्राणमादाय  
 वाचि<sup>३</sup> प्रतिष्ठापयति ॥ २ ॥ तद्धैऽतच्छैलना<sup>४</sup> गायत्रं गायन्त्यो-  
 वा इच्च ओवाइच्च ओवाइच्च हुम्भा ओवा इति ॥ ३ ॥ तदु ह  
 तत्पराङ् इवाऽनायुष्यम इव । तद्वायोश्चाऽपां चानुवर्त्म गेयम् ॥४॥  
 यद्रे वायुः पराङ् एव पवेत क्षीयेत ( स ) । स पुरस्ताद्वाति स  
 दक्षिणतस्स पश्चात्स उत्तरतस्स उपरिष्ठात्स सर्वा दिशोऽनुसं-  
 वाति ॥ ५ ॥ तदेतदाहुरिदानीं वा अयमितोऽवासीदथेऽस्थाद्वाती  
 ऽति । स यद्रेष्माणं<sup>१</sup> जनमानो निवेष्टमानो वाति क्षयादेव विभ्यत्  
 ॥६॥ यदु ह वा आपः पराचीरेव प्रसृतास्स्यन्देरन् क्षीयेरस्ताः ।  
 यदङ्कांसि<sup>११</sup> कुर्वाणा<sup>१२</sup> निवेष्टमाना आवर्तान् सृजमाना यन्ति क्षयादेव  
 विभ्यतीः । तदेतद्वायोश्चैऽवाऽपां चाऽनु वर्त्म गेयम् ॥७॥१,२॥  
 प्रथमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

२, १ अन्तरीक्ष० । २ आपा । ३ वाची । ४ छेल्०, छील० । ५  
 च । ६ परांद्र, पुराद्र । ७ रिष्ठात् । ८ सीत् । ९ यजमानो, जमानो ।  
 १० वम् ११ दयद्, यद् १२ अङ्कांसि ।

ओवा<sup>१</sup> ओवा ओवा हुम्भा ओवा इति करोत्येव<sup>२</sup> । एताभ्यां  
 सर्वमायुरेति ॥ १ ॥ स यथा वृत्तमाक्रमणै<sup>३</sup>राक्रममाण इयादे-  
 वमेवै<sup>४</sup>ऽते द्वे-द्वे देवते संधायेऽमां लोकान् रोहन्नेति ॥२॥ एक उ  
 एव मृत्युरन्वेत्यशनयै<sup>५</sup>ऽव ॥ ३ ॥ अथ हिङ्करोति । चन्द्रमा  
 वै हिङ्कारोऽन्नमु वै चन्द्रमाः । अन्नेनाऽशनयां व्रन्ति ॥ ४ ॥  
 तां-ताम शनयामन्नेन हत्वोऽमित्येतमेवाऽऽदित्यं<sup>६</sup> समयाऽतिमुच्यते ।  
 एतदेव दिवश्छिद्रम् ॥ ५ ॥ यथा खं वाऽनस<sup>६</sup> स्स्याद्रथस्य वैऽवमे-  
 तद्विश्छिद्रम् । तद्रश्मिभिस्संछन्नं दृश्यते ॥ ६ ॥ यद्वायत्रस्योऽऽ-  
 र्ध्वं हिङ्कारात्तदमृतम् तदात्मानं दध्यादथो यजमानम् । अथ  
 यदितरात्<sup>७</sup> सामोऽऽर्ध्वं तस्य प्रतिहारात् ॥ ७ ॥ स यथाऽद्विरा-  
 षस्संसृज्येरन्<sup>१०</sup> यथा ऽग्निनाऽग्निस्संसृज्येत यथा क्षीरे क्षीरमा-  
 सिच्यादेवमेवै<sup>९</sup> ऽतदत्तरमेताभिर्देवताभिस्संसृज्यते ॥ ८ ॥ १, ३ ॥

प्रथमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

तं वा एतं हिङ्कारं हिम्भा इति हिङ्कुर्वन्ति । श्रीर्वै भाः ।  
 असौ वा आदित्यो भा इति ॥१॥ एतं ह वा एतं न्यङ्गमनु गभै<sup>२</sup>

३. १ ओव २ ऐव् ३ अक्रम ४ इति ५ त्यां, त्य ६ नस ७ रसस्य  
 ८ अ ९ त्वद्, तद् (?) १० रान् ।

४. १ ओम् २ गंभ ।

इति । यद् इति स्त्रीणाम्<sup>३</sup> प्रजननं निगच्छति तस्मात्ततो ब्राह्मण  
 ऋषिकल्पो जायतेऽतिव्याधी<sup>४</sup> राजन्यश्शूरः ॥ २ ॥ एतं ह वा  
 एतं न्यङ्गमनु वृषभ इति । यद् इति<sup>५</sup> निगच्छति तस्मात्ततः पुण्यौ<sup>६</sup>  
 बलीवर्दो दुहाना धेनुरुक्षा दशवाजी जायन्ते ॥ ३ ॥ एतं ह वा  
 एतं न्यङ्गमनु गर्दभ इति । यद् इति निगच्छति तस्मात्स पापीया-  
 ज्जेयसीषु चरति तस्मादस्य पापीयसश्श्रेयो जायतेऽश्वतरो वा-  
 ऽश्वतरी वा ॥ ४ ॥ एतं ह वा एतं न्यङ्गमनु कुभ्र इति । यद् इति  
 निगच्छति तस्मात् सोऽर्घ्यस्सन्नपिराज्ञः प्राप्नोति ॥ ५ ॥ तं है-  
 ऽत्मके हिङ्गारं हिम्भा ओवा इति बहिर्ध्वे<sup>७</sup> हिङ्गुर्वन्ति । बहिर्ध्वे<sup>८</sup>  
 स्व वै श्रीः । श्रीर्ध्वे साज्ञो हिङ्गार इति ॥ ६ ॥ स य एनं तत्र  
 ब्रूयाद्बहिर्धान्वा अयं श्रियमधित पापीयान् भविष्यति<sup>९</sup> ।

स यदा वै म्रियतेऽथाऽग्नौ प्रास्तो भवति ।

क्षिप्रेवत मरिष्यत्यग्नोवनम्प्रासिष्यन्ति''इति तथा हैऽव स्यात्  
 ॥ ७ ॥ तस्माद् है तं हिङ्गारं हिं वो इत्यन्तरिवैश्वाऽऽत्मन्न-  
 र्जयेत् । तथा ह न बहिर्धा श्रियं कुरुते सर्वमायुरेति ॥ ८ ॥ १, ४  
 प्रथमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

४. ३ खिण ४ जायत इतिव्य ५ यषत् ६ य ७ 'ऽति' अधिक ८  
 नाक्थ्यरस, नार्थ्यस ९ ओम बहिर्ध्वेऽव.....तत्र ब्रूयाद् १०  
 बहिर्ध्वे, ओम । व ११ यत्नीऽति

सा हैऽषा खला देवताऽपसेधन्तीऽतिष्ठति । इदं वै त्वमत्र  
पापमकर्णोऽहैऽऽष्यसि । यो वै पुण्यकृत् स्यात् स इहेऽयादिति  
॥१॥ स ब्रूयादपश्यो वै त्वं तद्यदहं तदकरवं तद्वै मा त्वं नाऽका-  
रयिष्यस्त्वं वै तस्य कर्ताऽसीति ॥२॥ सा ह वेदसत्यम्माऽऽहे-  
ऽति । सत्यं हैऽषा देवता । सा ह तस्य नेऽऽशे यदेनमपसेधेत्  
सत्यमुपैऽवह्वयते ॥ ३ ॥ अथ होऽवाचैऽऽच्चाको वा वार्ष्णि-  
ऽनुवक्ता वा सात्यकीर्त उतैषा खला देवताऽपसेद्धुमेव ध्रियतेऽ-  
स्यै दिशः ॥ ४ ॥ [ तद् ] दिवोऽन्तः । तदिमे द्यावापृथिवी  
संश्लिष्यतः । यावती वै वेदिस्तावतीऽयम्पृथिवी । तद्यत्रैऽतच्चा-  
त्वालं खातं तत्सम्प्रति स दिव आकाशः ॥ ५ ॥ तद्बहिष्पवमाने  
स्तूयमाने मनसोऽद्गृह्णीयात् ॥ ६ ॥ स यथोऽच्छ्रायम्प्रति यस्य  
प्रपद्येतैऽवमेवैतया देवतयेदममृतमभिपर्येति यत्राऽयमिदं तपती-  
ति ॥ ७ ॥ अथ होवाच—॥ ८, १, ४ ॥

प्रथमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः ।

गोबलो वार्ष्णिः क एतमादित्यमर्हति समयैऽनुम् । दूराद्वा एष  
एतत् तपति न्यङ् । तेन वा एतम्पूर्वेण सामपथस्तदेव मनसा-

हृत्योऽपरिष्ठा देतस्यैऽतस्मिन्नमृते निदध्यादिति ॥ १ ॥ तद् ल  
 होवाच शाख्यायानिस्समयैऽवाऽतदेनं कस्तद्वेद । यद्येता आपो वा  
 अभितो यद्रायुं वा एष उपह्वयते रश्मीन्वा एष तदेतस्मै व्यूह-  
 तीति ॥ २ ॥ अथ होऽवाचोऽलुक्यो जानश्रुतेयो यत्र वा एष  
 एतत् तपत्येतदेवामृतम् । एतच्चेद्वै प्राप्नोति ततो मृत्युना पाप्मना  
 व्यावर्तते ॥ ३ ॥ कस्तद्वेद यत्परेणाऽऽदित्यमन्तारिक्षमिदमना-  
 लयनमवरेण ॥ ४ ॥ अथैऽतदेवाऽमृतम् । एतदेव मां यूयम्प्राप-  
 यिष्यथ । एतदेवाहं नातिमन्य इति ॥ ५ ॥ तान्येतान्यष्टौ ।  
 अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम । ब्रह्म उ गायत्री । तदु ब्रह्मा-  
 भिसम्पद्यते अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥५॥ १, ६ ॥

प्रथमेऽनुवाके षष्ठः खण्डः ।

ता एता अष्टौ देवताः । एतावदिदं सर्वम् । ते [.....]  
 करोति ॥ १ ॥ स नैषु लोकेषु पाप्मने भ्रातृव्यायावकाशं  
 कुर्यात् । मनसैनं निर्भजेत् ॥ २ ॥ तदेतदृचाऽभ्यनूच्यते ।

“चत्वारि वाक् परिमिता पदानि

तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः ।

६. १ वाऽयं २ तद्, त ३ स्यै ४ अथो ५ ओम् ६ इवाचा (!) उलुक्यो,  
 उलुक्यो ७ अत् ८ परोण ९ अन्विलय १० त, प्रापिप् ११ यत् ।



गुहा त्रीणि निहिता नेऽङ्गयन्ति

तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति” इति ॥३॥

तद् यानि तानि गुहात्रीणि निहिता नेऽङ्गयन्ती (ऽती) ऽम एव  
ते लोकाः ॥४॥ तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्तीति । चतुर्भाग ह वै  
तुरीयं वाचः । सर्वयास्य वाचा सर्वैरेभिर्लोकैस्सर्वेणास्य कृतम्भ-  
वति य एवं वेद ॥ ५ ॥ स यथाश्मानमाखणमृत्वा लोष्टो विध्वं-  
सत एवमेव स विध्वंसते य एवं विद्रांसमुपवदति ॥ ६ ॥

प्रथमेऽनुवाके सप्तमः खण्डः ।

प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

प्रजापतिर्वा इदं त्रयेण वेदेनाऽजयद्यदस्येदं जितं तत् ॥१॥  
स ऐक्षतेत्थं चेद्वा अन्ये देवा अनेन वेदेन यक्ष्यन्त इमां वाव ते  
जितिं जेष्यन्ति येऽयम्मम ॥ १ ॥ हन्तेऽमं त्रयं वेदम्पीळयानीति  
॥ ३ ॥ स इमं त्रयं वेदमपीळयत् । तस्य पीळयन्नेकमेवाक्षरं ना-  
शकन्नात् पीळयितुमोमिति यदेतत् ॥ ४ ॥ एष उ ह वाव रुरसः ।  
सरसा ह वा एवंविदस्त्रयीविद्या भवति ॥ ५ ॥ स इमं ररुम्पी-

७. १ तानि २ नो, ओम ३ गयन्ति ४ तानि ५ ओम ६ कृत्वा  
७ लोष्टो ८ ओम एवम विध्वंसते ९ स एषो... उपवदन्ति ।

१. ने २—दा, व-३, -क्तो ४. द्रवं ।

लयित्वा पनिधायोऽऽर्ध्वोऽद्रवत् ॥ ६ ॥ तं द्रवन्तं चत्वारो देवाना-  
 मन्वपश्यन्निन्द्रश्चन्द्रो रुद्रस्समुद्रः । तस्मादेते श्रेष्ठा देवानाम् एते ह्ये-  
 नमन्वपश्यन् ॥ ७ ॥ स योऽयं रस आसीत्तदेव तपोऽभवत् ॥ ८ ॥  
 त इमं रसं देवा अन्वैक्षन्त । तेऽभ्यपश्यन्त् स तपो वा अभूदिति  
 ॥ ९ ॥ इममु वै त्रयं वेदम्मरीच्युशित्वा तास्मिन्नेतदेवात्तरमपीळित-  
 मविन्दन् नोमिति यदेतत् ॥ १० ॥ एष उ ह वाव सरसः । तेनै-  
 नम्प्रायुवन् । यथा मधुना लाजान् प्रयुयादेवम् ॥ ११ ॥ तेऽभ्य-  
 तप्यन्त । तेषां तप्यमानानामाप्यायत वेदः । तेऽनेन च तपसाऽपीनेन  
 च वेदेन तामु एव जितिमजयन् याम्प्रजापतिरजयत् । त एते सर्व-  
 एव प्रजापतिमात्रा अया इम अय इम इति ॥ १२ ॥ तस्मात्तप्यमा-  
 नस्य भूयसी कीर्तिर्भवति भूयो यज्ञः । स य एतदेवं वेदैवमेवा-  
 ऽपीनेन वेदेन यजते । यदो याजयत्वेवमेवाऽपीनेन वेदेन याजयति  
 ॥ १३ ॥ तस्य हैतस्य नैव काचनाऽर्तिरस्ति य एवं वेद । स  
 य एवैनमुपवदति सार्तिमृच्छति ॥ १४ ॥

द्वितीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

५. ह्येते ६. ओम् ७. सेनं ८. अन्, ऐच ९. तेभ्यप १०--इयस्त--११  
 पीळितं, ता १२ वा १३ प्राय १४ ययाद् १५. तेन, ते एन.  
 तेनैव १६. यत् १७-यत् १८ अइयाम् १९ ओम् यजते यदो-वेदेन  
 २० एव अपि २१ असि २२ उपदति उवदति २३ अच्छति, अर्-

तदाहूर्धदोवा<sup>१</sup> ओवा इति गीयते कार्त्र्गभवति क सामेति ॥१॥ ओम  
इति वै साम वागित्यृक् । ओमिति मनो वागिति वाक् । ओमिति  
प्राणो वागित्येव वाक् । ओमितीन्द्रो वागिति सर्वे देवाः । तदे-  
तदिन्द्रमेव सर्वे देवा अनुयन्ति ॥२॥ ओमित्येतदेवाक्षरम् । एतेन  
वै संसवे परस्येन्द्रं वृञ्जीत<sup>२</sup> । एतेन ह वै तद्वको दालभ्य आजके-  
शिनामिन्द्रं ववर्ज<sup>३</sup> । ओमित्येतेनैवाऽऽनिनाय<sup>४</sup> ॥३॥ तान्येतान्यष्टौ ।  
अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साग । ब्रह्म उ गायत्री । तदु ब्रह्माभिसम्प-  
द्यते । अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥४॥ तस्यैतानि नामानीन्द्रः  
कर्माक्षितिरमृतं व्योमान्तो वाचः । बहुर्भूयस्सर्वं सर्वस्मा-  
दुत्तरं ज्योतिः । ऋतं सत्यं विज्ञानं विवाचनमप्रतिवाच्यम्<sup>५</sup> । पूर्वं  
सर्वं सर्वा वाक् । सर्वमिदमपि धेनुः पिन्वते परागर्वाक् ॥५॥१॥६॥

द्वितीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

सा<sup>१</sup> पृथक्सलिलं कामदुघाक्षिति प्राणसहितं चक्षुश्श्रोत्रं<sup>२</sup>  
वाक्प्रभृतम्मनसा व्याप्तं हृदयाग्रं म्ब्राह्मणभक्तं मन्त्रशुभं वर्षपवित्रं

१. पवा । २. ओवात (= ओवा ३?) ३. ऋग् ।

४. अबृञ्ज-१५-शीन्-, शनि-१६. वव्रज ।

५. वनिनाय १८-६; क्षिति । ६-हिर । १०. विजिज्ञा-११-अः ।

१ सा । २-क्षुश्रोत्र-१३-दयोत्र-१४. भ्रक्त्रम्, भ्रत्रम्, भृत्रम् ।

गोभग म्पृथिव्युपरं तपस्तनु वरुणापरियतनमिन्द्रश्रेष्ठं सहस्राक्षर-  
 मयुतधारममृतं दुहाना<sup>६</sup> सर्वान् इमाँलोकानभिविचरतीऽति<sup>६</sup> ॥१॥  
 तदेतत् सत्य मक्षरं यदोम इति । तस्मिन्नापः प्रतिष्ठिता अप्सु<sup>६</sup>  
 पृथिवी पृथिव्यामिमे लोकाः ॥२॥ यथा सूच्या पलाशानि  
 सन्तृणानि स्युरेवप्रेतेनाक्षरेशोमे लोकास्सन्तृणानाः ॥३॥  
 तदिदमिमान् अतिविध्य दशधा क्षरति शतधा सहस्रधाऽयुतधा  
 प्रबुतधा ( नियुतधा ) ऽर्बुदधा न्यर्बुदधा<sup>१०</sup> निखर्वधा<sup>११</sup> पद्ममक्षिति-  
 व्योमान्तः ॥४॥ यथौघो विष्यन्दमानः परः-परोवरीयान् भव-  
 त्वेवमेवैतदक्षरम्परः-परोवरीयो<sup>१३</sup> भवति ॥५॥ ते हैते<sup>१४</sup> लोका  
 ऊर्ध्वा एव श्रिताः । इम एवं त्रयोदशमासाः ॥६॥ स य एवं  
 विद्वानुद्गायति स एवमेवैताँलोकानतिवहति । ओमित्येतेनाक्षरेणा-  
 मुमादित्यम्मुख आधत्ते । एष ह वा एतदक्षरम् ॥७॥ तस्य<sup>१५</sup>  
 सर्वमाप्तम्भवति सर्वं जितं न हाऽस्य कश्चन कामोऽनाप्तो भवति<sup>१६</sup>  
 य एवं वेद ॥८॥ तद् पृथुर्वैन्यो दिव्यान् व्रात्यान् पप्रच्छ ।<sup>१७</sup>

५. पर्यत्-। ६-ः। ७ ओमिति । ८-प्सुः । ९ आम, 'इदं' और  
 दशधा के मध्य स्थान रिक्त है । १० निर्बु-। ११ निखर्वाच, निखर्वदाच् ।  
 १२-नान् । १३ ओम । परः परो । १४ तै । १५ तस्ति । १६ कश्च । १७ वै ।

स्थूणां दिवस्तम्भनीं सूर्य माहुरन्तरित्ते सूर्यः  
 पृथिवीप्रतिष्ठः । अप्सु भूमीशिशिर्ये<sup>१८</sup> भूरिभाराः<sup>१९</sup>  
 किं स्विन्महीरधितिष्ठन्त्याप इति ॥ ९ ॥ ते ह  
 प्रत्यूचुस्

स्थूणामेव दिवस्तम्भनीं सूर्य माहुरन्तरित्ते  
 सूर्यः पृथिवीप्रतिष्ठः । अप्सु भूमीशिशिर्ये<sup>१८</sup> भूरि-<sup>१९</sup>  
 भारास्सत्यम्महीरधितिष्ठन्त्याप<sup>२०</sup> इति ॥ १० ॥

ओमित्येतदेवाक्षरं सत्यम् । तदेतदापोऽधितिष्ठन्ति ॥ ११ ॥ ११ ॥ १० ॥

द्वितीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । द्वितीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

प्रजापतिः प्रजा असृजत । ता एनं सृष्टा अन्नकाशिनीरभित-  
 स्समन्तम्पर्यविशन् ॥ १ ॥ ता अब्रवीत् किंकामास्थेति । अन्नाद्य-  
 कामा इत्यब्रुवन् ॥ २ ॥ सोऽब्रवीदेकं वै वेदमन्नाद्यमसृत्ति सामैव ।  
 तद्वः प्रयच्छानीति । तन्नः प्रयच्छेत्यब्रुवन् ॥ ३ ॥ सोऽब्रवीदिमान्वै  
 पशून् भूयिष्ठमुपजीवामः । एभ्यः प्रथमम्प्रदास्यामीति ॥ ४ ॥  
 तेभ्यो हिङ्गारम्प्रायच्छत् । तस्मात्पशवो हिङ्गारिकृतो विजिज्ञास-

१८-मिश्र । १९ शिशिरे । २० अथित् ।

१. वा । २. पाम्- । ३. पृथ- । ४ -कृतो ।

माना इव चरन्ति ॥५॥ प्रस्तावम्ममध्येभ्यः । तस्माद् तु ते रतुवत<sup>५</sup>  
 इवेदम्मे भविष्यत्यदो मे भविष्यतीऽति ॥६॥ आदिं वयोभ्यः ।  
 तस्मात् तान्याददानान्युपापपातमिव चरन्ति ॥७॥ उद्गीथं देवेभ्यो  
 ऽमृतम् । तस्मात्तेऽमृताः ॥८॥ प्रतिहारमारस्येभ्यः पशुभ्यः ।  
 तस्मात्ते प्रतिहृतास्तन्तस्यमाना इव चरन्ति ॥९॥ १ । १.१ ॥

तृतीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

उपद्रवं गन्धर्वाप्सरोभ्यः<sup>९</sup> । तस्मात् उपद्रवं गृह्णन्त इव  
 चरन्ति ॥१॥ निधनम्पितृभ्यः । तस्माद् तु ते निधनसंस्थाः ॥२॥  
 तद्यदेभ्यस्तत् साम प्रायच्छुदेतमेवैभ्यस्तदादित्यम्प्रायच्छुत् ॥३॥  
 स यदनुदितस्सहिङ्कारोऽर्थोदितः<sup>२</sup> प्रस्ताव आसंगवमादिर्माध्यन्दिन  
 उद्गीथोऽपराह्णः प्रतिहारो यदुपास्तमयं लोहितायाति स उपद्रवो  
 ऽस्तमित एव निधनम् ॥४॥ स एष सर्वैर्लोकैस्समः । तद्यदेष  
 सर्वैर्लोकैस्समस्तस्मादेष एव साम । स ह वै सामवित् स साम  
 वेद य एवं वेद ॥५॥ ते ऽब्रुवन् दूरे वा इदमस्मत् । तत्रेदं कुरु

५. स्तुवतेव । ६. प्रतिहृतास् । ७. तात् (?) स्स (!) यमाना;  
 तातास्यमाना ।

१-आपसरेभ्यः । २ अर्थोदित- ३ आदित्यः । ४ द्विवार 'स सामवेद'  
 देता है ।

यत्रोपजीवामेति ॥६॥ तद्वृत्तनभ्यत्यनयत् । स वसन्तमेव हिङ्कार-  
मकरोद्ग्रीष्मम्प्रस्तावं वर्षामुद्गीथं शरदम्प्रतिहारं हेमन्तं निधनम् ।  
मासार्धमासावेव सप्तमावकरोत् ॥७॥ तेऽब्रुवन्नेदीयो न्वावैतर्हि ।  
तत्रैव कुरु यत्रोपजीवामेति ॥८॥ तत् पर्जन्यमभ्यत्यनयत् । स  
पुरोवातमेव हिङ्कारमकरोत् ॥९॥ १ । १.२॥

तृतीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

जीमूतान् प्रस्तावं स्तनयित्नुमुद्गीथं विद्युत्प्रतिहारं वृष्टि  
निधनम् । यद्वृष्टात्प्रजाश्रौषधयश्च जायन्ते ते सप्तम्यावकरोत्  
॥१॥ तेऽब्रुवन्नेदीयो न्वावैतर्हि । तत्रैव कुरु यत्रोपजीवामेति ॥२॥  
तद्यज्ञमभ्यत्यनयत् । स यजूष्येव हिङ्कारमकरोद्वचः प्रस्तावं  
सामान्युद्गीथं स्तोमम्प्रतिहारं छन्दो निधनम् । स्वाहाकारवषट्-  
कारावेव सप्तमावकरोत् ॥३॥ तेऽब्रुवन् नेदीयो न्वावैतर्हि । तत्रैव  
कुरु यत्रोपजीवामेति ॥४॥ तत्पुरुषमभ्यत्यनयत् । स मन एव  
हिङ्कारमकरोद्वाचम्प्रस्तावम्प्राणमुद्गीथं चक्षुःप्रतिहारं श्रीत्रंनिधनम्  
रेवश्चैव प्रजां च सप्तमावकरोत् ॥५॥ तेऽब्रुवन्नत्र वा एनत्तद-

५-म इति । ६ कर- । ७ प्रस्तावः । वर्षा उद्गीथः, शरत्प्रतिहारः,  
श्रोम शरदम्प्रतिहारम् ।

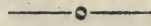
१. प्रस्तात्रैवम् । २-तिर् । ३सपतम्-४म इति । ५ अभ्यत्यत्यन-

कर्यत्रोपजीविष्याम इति ॥६॥ स विद्यादहमेव सामास्मि मय्येता  
देवता इति ॥७॥ १ । १३॥

तृतीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

न ह दूरे देवतस्स्यात् । यावद्ध वा आत्मना देवानुपास्ते  
तावदस्मै देवा भवन्ति ॥ १ ॥ अथ य एतदेवं वेदाऽहमेव  
सामाऽस्मि मय्येतास्सर्वा देवता इत्येवं हाऽस्मिन्नेतास्सर्वा देवता  
भवन्ति ॥२॥ तदेतदेवश्रुत्साम । सर्वा ह वै देवताश्श्रुत्वन्त्येवं-  
विदम्पुण्याय साधवे । ता एनम्पुण्यमेव साधु कारयन्ति ॥ ३ ॥  
स ह स्माऽऽह सुचित्तश्शैलनो षो यज्ञकामो मामेव स वृणीताम् ।  
तत एवैऽनं यज्ञ उपनंस्यति । एवंविदं बुद्वायन्तं सर्वा देवता  
अनुसंतृप्यन्ति । ता अस्मै तृप्तास्तथा करिष्यन्ति यथैऽनं यज्ञ  
उपनंस्यतीऽति ॥४॥ १ । १४॥

तृतीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।



देवा वै स्वर्गं लोकमैप्सन् । तं न शयाना नाऽऽसीना न  
तिष्ठन्तो न धावन्तो नैव केनचन कर्मणाऽऽप्नुवन् ॥ १ ॥ ते  
देवाः प्रजापतिमुपाधावन् स्वर्गं वै लोकं मौप्सिष्म । तं न शयाना

१ देवत । २ ओम् । ३ एस्म । ४ देवभैत् । देवश्रूत् । एवश्रूत् । ५-नं ।

१-ऽऽशीना । २-न्त्यो । ३ उपाय-।



नाऽऽसीना न तिष्ठन्तो न धावन्तो नैव केनचन कर्मणाऽऽपाम ।  
 तथा नोऽनुशाधि यथा स्वर्गं लोकमाप्नुयामेऽति ॥२॥ तानब्रवीत्  
 साम्नाऽनृचेन स्वर्गं लोकम्प्रयातेऽति । ते साम्नाऽनृचेन स्वर्गं  
 लोकम्प्रायन् ॥ ३ ॥ प्र वा इमे साम्नाऽगुरिति । तस्मात्प्रसाम  
 तस्माद्दु प्रसाम्यन्नमत्ति ॥४॥ देवा वै स्वर्गं लोकमायन् । त एता-  
 न्यृक्पदानि शरीराणि धून्वन्त आयन् । ते स्वर्गं लोकमजयन् ॥५॥  
 तान्या दिवः प्रकीर्णान्यशेरन् । अथेऽमानि प्रजापतिर्ऋक्पदानि  
 शरीराणि सञ्चित्याऽभ्यर्चत् । यद्भ्यर्चत्ता एवर्चोऽभवन् ॥६॥  
 १ । १५॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सैऽवर्गभवदियमेव श्रीः । अतो देवा अभवन् ॥१॥  
 अथैऽपामिमामसुराश्श्रियमविन्दन्व । तदेवाऽऽसुरमभवत् ॥२॥  
 ते देवा अभवन् या वै नःश्रीरभूदविदन्त तामसुरः । कथं न्वेषा-  
 मिमांश्रियम्पुनरेव ज्येमेऽति ॥३॥ तेऽब्रुवन्ऋच्येव साम गायामेति ।

४ प्रयामे । ५ प्रयाते, प्रधामे, प्रयामे । ६ लोकंमप्रायत् । ७ इसके  
 थाद कुङ्क गड़ बड़ है । ५ के पूर्व यह सब में लिखा है 'त एतान्यृक्पदानि  
 शरीराणि धून्वन्त आयन् ( र्थयन् ) । ते स्वर्गं लोकमजयन् (-अत्) ।  
 अथेऽमानि प्रजापतिर् ...ता एवर्चोऽभवन् । ८ यत् । ९ ओम् । ते स्वर्ग  
 अजयन्, यहां अधिक है । १० ओम् । यद्..... । ११ ओम् । ता एव ।

१ आस- । २ तद् । ३ एवा । ४ विन्दन्त । ५ अथ ।

ते पुनः प्रत्याद्गुत्या<sup>६</sup>र्चं सामाऽगायन् । तेनाऽस्माल्लोकाद्-  
 सुराननुदन्त ॥४॥ तद्वै माध्यन्दिने च सवने तृतीयसवने च  
 नर्चोऽपराधोऽस्ति । स यत्ते ऋचिं गायति तेनाऽस्माल्लोकाद्  
 द्विषन्तम्भ्रातृव्यं नुदते । अथ यदमृतै<sup>१०</sup> देवतासु प्रातस्सवनं गायति  
 तेन स्वर्गं लोकमेति ॥५॥ प्रजापतिर्वै साम्नेऽमांजितिमजयद्याऽस्ये  
 ऽयं जितिस्ताम<sup>११</sup> । स स्वर्गं लोकमारोहत् ॥६॥ ते देवाः प्रजापति-  
 मुपेत्याऽब्रुवन्स्मभ्यमपीऽदं साम प्रयच्छेति । तथेति । तदेभ्य-  
 स्साम प्रायच्छत् ॥७॥ तदेनानिदं साम स्वर्गं लोकं नाऽकामयत्<sup>१३</sup>  
 वोढुम् ॥८॥ ते देवाः प्रजापति मुपेत्याऽब्रुवन् यद्वै नस्साम प्रादा  
 इदं वै नस्तस्वर्गं लोकं न कामयते वोढुमिति ॥९॥ तद्वै पाप्मना  
 संसृजतेति । कोऽस्य पाप्मेति । ऋगिति । तदृचा समसृजन्  
 ॥१०॥ तदिदम्प्रजापतेर्गर्ह्यमाणमतिष्ठदिदं वै मा तत्पाप्मना सम-  
 स्नात्तुरिति । सोऽब्रवीद्यस्त्वैतेन व्यवर्तयाद्ब्रुचेव स पाप्मनावर्ताता  
 इति ॥११॥ स य एतदृचा प्रातस्सवने व्यावर्तयति व्येवं<sup>१६</sup> स  
 पाप्मना वर्तते ॥१२॥ १ । १६॥

चतुर्थेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

६-द्गुच्यत्य । ७-त्रीत्-। ८-पराधो । ९-र्चि । १०-नृते । ११-तम ।  
 १२-अर्-। १३-न कामायते, न कामयते । १४-कामाय-, सामय, ।  
 १५-संस्- । १६-एव ।

तदादुर्धदोवा ओवा इति गीयते कात्रर्भवति क सामेति ॥१॥  
 प्रस्तुवन्नेवाष्टाभिरत्तरैः प्रस्तौति । अष्टात्तरा गायत्री । अत्तरमत्तरं  
 व्यत्तरम् । तच्चतुर्विंशतिस्सम्पद्यन्ते । चतुर्विंशत्यत्तरा गायत्री ॥२॥  
 तामेताम्प्रस्तावेन<sup>१</sup>चमाप्त्वा या श्रीर्याऽपचितिर्यस्स्वर्गो<sup>२</sup>लोको यद्यशो  
 यदन्नाद्यं तान्यागायमान आस्ते ॥३॥ १।१.७॥

चतुर्थेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

प्रजापतिर्देवानसृजत । तान्<sup>१</sup>मृत्युः पाप्मान्वसृज्यत ॥१॥  
 ते देवा प्रजापतिमुपेयाब्रुवन् कस्माद्<sup>२</sup>नोऽसृष्टा<sup>३</sup>मृत्युं चेन्नः पाप्मान-  
 नमन्ववस्रक्ष्यन्नासियेति ॥२॥ तानब्रवीच्छन्दसि सम्भरत । तानि  
 यथायतनम्प्रविशत<sup>४</sup> ततो मृत्युना पाप्मना व्यावर्त्स्यथेति ॥३॥  
 वसवो गायत्रीं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान् साऽच्छादयत्  
 ॥४॥ रुद्रास्त्रिष्टुभं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान् साऽच्छाद-  
 यत्<sup>५</sup> ॥५॥ आदित्या जगतीं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान्  
 साऽच्छादयत् ॥६॥ विश्वेदेवा अनुष्टुभं समभरन् । तां ते प्राविशन् ।  
 तान् साऽच्छादयत् ॥७॥ तान् अस्यामृच्यस्वरायाम्मृत्युनिरजा-  
<sup>६</sup>

१. प्रस्तावेप्रस्तवेन । २-र्ग ।

१. ता, ताः । २ कस्मा । ३-ष्टा । ४-सृजन् । ५-शब्द  
 ६-वक्ष्य, वत्स्य- । ७ च्छाद्, याम् ।

नाद्यथा मणौ मणिमूत्रम्परिपश्येदेवम् ॥८॥ ते स्वरम्प्राविशन् ।  
तान् स्वरे सतो न निरजानात् । स्वरस्य तु घोषेणाऽन्वैव ॥९॥  
त ओमित्येतदेवाक्षरं समारोहन् । एतदेवाक्षरं त्रयीविद्या । यद्दो<sup>१०</sup>  
ऽमृतं तपति तत्प्रपद्य ततो मृत्युना पाप्मना व्यावर्तन्त ॥१०॥  
एवमेवैवं विद्वान् ओमित्येतदेवाक्षरं समारुह्य यद्दो<sup>१२</sup>ऽमृतं तपति  
तत्प्रपद्य ततो मृत्युना पाप्मना व्यावर्ततेऽथो यस्यैवं विद्वानुद्गा-  
यति ॥११॥ ११८॥

चतुर्थेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

—:०:—

अथैतदेकविंशं साम ॥१॥ तस्य त्रय्येव विद्या हिङ्गारः ।  
अग्निर्वायुर<sup>२</sup>सावादिस एष प्रस्तावः । इम एव लोका आदिः ।  
तेषु<sup>३</sup> हीदं लोकेषु सर्वमाहितम् । श्रद्धा यज्ञो दक्षिणा एष उद्गीथः ।  
दिशोऽवान्तरदिश आकाश एष प्रतिहारः । आपः प्रजा ओषधय  
एष उपद्रवः । चन्द्रमा नक्षत्राणि पितर एतन्निधनम् ॥२॥  
तदेतदेकविंशं साम । स य एवमेतदेकविंशं साम वेदैतेन हास्य

८-यैद् । ९ नास्ति । १० ओ । ११-पेद् । १२ एदो, ओ ।

१. त्रै । २ वावायुर । ३ येषु । ४-ज्ञा ।

सर्वेणोद्गीतम्भवसेतस्माद्वे<sup>५</sup> सर्वस्मादावृच्यते<sup>६</sup> य एवं विद्वांसमुप-  
वदति ॥३॥ ११-६॥

पञ्चमोऽनुवाकरसमाप्तः ।

—:०:—

इदमेवेदमग्रेऽन्तरिक्षमासीत् । तद्वेवाप्येता<sup>१</sup>र्हि ॥१॥ तद्यदेतदन्तरिक्षं<sup>२</sup>  
य एवा<sup>३</sup>ऽयम्पवत एतदेवान्तरिक्षम् । एष ह वा अन्तरिक्षनाम् ॥२॥  
एष उ एवैष विततः तद्यथा काष्ठेन पलाशे विष्कब्धे स्यातामक्षेण  
वा चक्रावेवमैतेनेमौ लोकौ विष्कब्धौ ॥३॥ तस्मिन्निदं सर्वमन्तः ।  
तद्यदस्मिन्निदं सर्वमन्तस्तस्मादन्तर्यक्षम् । अन्तर्यक्षं<sup>४</sup> ह वै नामैतत् ।  
तदन्तरिक्षमिति परोक्षमाचक्षते ॥४॥ तद्यथा मूताः प्रबद्धाः प्रलम्बे-  
रन्नेवं हैतस्मिन्सर्वे लोकाः प्रबद्धाः प्रलम्बन्ते ॥५॥ तस्यैतस्य  
साम्प्रस्तिस्र आगास्त्रीर्यागीतानि षड्विभूतयश्चतस्रः प्रतिष्ठा दश  
प्रगास्सप्त संस्था द्वौ स्तोभावेकं रूपम् ॥६॥ तद्यास्तिस्र आगा इम  
एव ते लोकाः ॥७॥ अथ यानि ( त्रीण्य् ) आगीतान्यग्निर्वायुरसा

५-असू । ६ आवृच्योते ।

१-रीक्ष- । २ अधिक है ' एष ह वा अन्तरीक्षम् । ३ एवम् ।  
४ नास्ति । ५-क्षोना- । ६ नवम् । ७ एतेन । ८ नास्ति । तद् .....  
अन्तसू । ९ नास्ति । १०-बन्द्- । ११-नंसू । १२ अगमाः । १३ एक-  
रूपम्, एकरूपम् । १४ तो ।

वादिस्य एतान्यागीतानि । न ह वै कांचनश्रियमपराध्नोति य एवं  
वेद ॥८॥ १२०॥

षष्ठेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथ याष्पद्विभूतय ऋतवस्ते ॥१॥ अथ याश्चतस्रः प्रतिष्ठा  
इमा एव ताश्चतस्रोदिशः ॥२॥ अथ ये दश प्रगा इम एव ते दश  
प्राणाः ॥३॥ अथ यास्सप्त संस्था या एवैतास्सप्ताहोरात्राः प्राची-  
र्षषट्कुर्वन्ति ता एव ताः ॥४॥ अथ यौ द्वौ स्तोभावहोरात्रे एव-  
ते ॥५॥ अथ यदेकरूपं कर्मैव तत् । कर्मणा हीदं सर्वं विक्रियते  
॥६॥ तस्यैतस्य साम्नोदेवा आजिमायन् । स प्रजापतिर्हरसा  
हिङ्गारमुदजयदग्निस्तेजसा प्रस्तावं रूपेण बृहस्पतिरुद्गीथं स्वधया  
पितरः प्रतिहारं वीर्येणोन्द्रोनिधनम् ॥७॥ अथेतरे देवा अन्तरिता  
इवासन् । त इन्द्रमब्रुवन् तव वै वयं स्मोऽनुन एतस्मिन् सामन्ना-  
भजेति ॥८॥ तेभ्यस्स्वरम्प्रायच्छत् । तम्प्रजापतिरब्रवीत्कथेत्यमकः ।  
सर्वं वा एभ्यस्साम प्रादाः । एतावद्वाव साम यावान् स्वरः ऋग्वा  
एषते स्वराद्भवतीति ॥९॥ सोऽब्रवीत् पुनर्वाअहमेषामेतंरसमादा-  
स्य इति । तानब्रवीऽदुप मा गायत । अभि मा स्वरतेति । तथेति

१ नास्ति । सप्त ..... एतास् । २-आ । ३ वर्ष- । ४ वद् ।

५ रैदि । ६-सं । ७ तावव । ८-रम । ९ सवर- । १० एषो, एषोम ।

॥१०॥ तमुपागायन् । तमभ्यस्वरन् । तेषाम्पुनारसमादत्त ॥११॥  
१।२१॥

षष्ठेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

स यथा मधुधाने<sup>१</sup> मधुनाळीभिर्मध्वासिञ्चादेवमेव तत्सामन्  
पुना रसमासिञ्चत् ॥१॥ तस्माद्दु ह नोऽपगायेत् । इन्द्र एष  
यदुद्गाता । स यथा सावमीचां<sup>२</sup> रसमादत्त एवमेष तेषां रसमादत्ते  
॥२॥ कामं ह तु यजमान उपगायेद्यजमानस्य हि तद्रवस्यथो ब्रह्म-  
चार्याचार्योक्तः ॥३॥ तदु वा आद्गुरूपैव गायेत् । दिशो ह्युपागा-  
यन् दिशामेवं<sup>४</sup> सलोकतां जयतीति ॥४॥ ते य एवमे<sup>५</sup> मुख्याः  
प्राणा एत एवोद्गातारश्चोऽपगातारश्च । इमे ह त्रय उद्गातार इम  
उ चत्वार उपगातारः ॥५॥ तस्माद्दु चतुर एवोऽपगातृन्<sup>६</sup> कुर्वीत ।  
तस्माद्दुहोऽपगातृन्<sup>८</sup> प्रसभिर्मृशोद्दिशस्थश्रोत्रं मे माहिंसिष्टेति ॥६॥  
स यस्स रस आसीद्य एवायम्पवत एष एव स रसः ॥७॥ स यथा  
मध्वालोलोपमद्यादिति ह स्माह सुचित्तशैलन एवमेतस्य रसस्यात्मान-  
म्पूरयेत् । स एवोद्गातात्मानं च यजमानं चामृतत्वं गमयतीति ॥८॥ १।२२

षष्ठेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । षष्ठोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

१-त्ता ।

१-धुवने । २ 'स' अधिक पदो । ३-यत् । ४-शम । ५ एव ।

६ व । ७ उद्गा-,-तृन् । ८-तृन् ।

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाप्येतर्हि ॥१॥  
 स यस्स आकाशो वागेव सा । तस्मादाकाशाद्वाग्वदति ॥२॥  
 तामेतां<sup>१</sup> वाचम्प्रजापतिरभ्यपीळ्यत् । तस्या अभिपीळितायै रसः<sup>२</sup>  
 प्राणोदत् । त एवेमे लोका अभवन् ॥३॥ स इमाँ लोकानभ्यपीळ्यत् ।  
 तेषामभिपीळितानां रसः प्राणोदत् । ता एवैता देवता अभवन्नाग्नि-  
 र्वायुरसावादिस इति ॥४॥ स एता देवता अभ्यपीळ्यत् ।  
 तासामभिपीळितानां रसः प्राणोदत् । सा त्रयीविद्याभवत् ॥५॥  
 स त्रयीं विद्यामभ्यपीळ्यत् । तस्या अभिपीळितायै रसः प्राणोदत् ।  
 ता एवैता व्याहृतयो ऽभवन् भूर्भुवस्स्वरिति ॥६॥ स एता व्या-  
 हृतीरभ्यपीळ्यत् । तासामभिपीळितानां रसः प्राणोदत् । तदेतद्-  
 क्षरमभवदोमिति यदेतद् ॥७॥ स एतदक्षरमभ्यपीळ्यत् । तस्या-  
 ऽभिपीळितस्य रसः प्राणोदत् ॥८॥ १।२३॥

सप्तमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तदक्षरदेव । यदक्षरदेव तस्मादक्षरम् ॥१॥ यद्वेवाक्षरं ना-  
 क्षीयत् तस्मादक्षयम् । अक्षयं ह वै नामैतत् । तदक्षरमिति

१. एता वा । २. रसम् । ३. 'स त्रयीम्.....रसम् (!)

प्राणोदत्' अधिक है । ४. नास्ति । ५-आ । ६ नास्ति । स त्रयीम्

प्राणोदत् । ७-आ ।

१-वा ।



परोक्षमाचक्षते ॥२॥ तद्वैतदेक ओमिति गायन्ति । तत्तथा न  
गायेत् । ईश्वरो हैनदेतेन रसेनान्तर्धातोः<sup>२</sup> । अथा<sup>३</sup> द्वे<sup>४</sup> इवैवम्भवत्  
ओमिति । ओ इत्यु हैके गायन्ति । तदु<sup>५</sup> ह तन्न<sup>६</sup> गीतम् । नैव<sup>७</sup>  
तथा गायेत् । ओ<sup>८</sup> इत्येव गायेत् । तदेनदेतेन रसेन सन्दधाति ॥३॥  
तदेतं रसं तर्पयति । रसस्तृप्तोऽक्षरं तर्पयति । अक्षरं<sup>९</sup> तृप्तं व्याहृती  
स्तर्पयति । व्याहृतयस्तृप्तावेदास्तर्पयन्ति । वेदास्तृप्ता देवतास्तर्प-  
यन्ति । देवतास्तृप्ता लोकास्तर्पयन्ति । लोकास्तृप्ता अक्षरं तर्पयन्ति ।  
अक्षरं तृप्तं वाचं<sup>१०</sup> तर्पयति । वाक्<sup>११</sup> तृप्ताकाशं तर्पयति । आकाशस्तृप्तः  
प्रजास्तर्पयति । तृप्यति प्रजया पशुभिर्य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं  
विद्वानुद्गायति ॥४॥ १।२४॥

सप्तमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । सप्तमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् स उ एवाप्येर्ताहि ॥१॥ स  
यस्स आकाश आदिस एव स । एतस्मिन् ( ह् ) उदिते<sup>२</sup> सर्व-  
मिदमाकाशते ॥२॥ तस्य मर्त्यामृतयोर्वै<sup>३</sup> तीराणि<sup>४</sup> समुद्र एव ।

२ या-। ३-थे । ४ द्वे, द्वे । ५ नास्ति । ६ नि-। ७ ने एव ।  
८ ओ । ९ अक्षरं.....वाचं तर्पयति यह पाठ नहीं । १०-यन्ति ।  
११ वार्कस् । १२ गायति ।

१ दव् (!) । २ सुदिते । ३ वैर्व । ४ तरणी ।

तद्यत्समुद्रेणं<sup>५</sup> परिगृहीतं तन्मृत्योराप्तमथ यत्पर तदमृतम ॥३॥ स  
यो ह स समुद्रो य एवायम्पवत एष एव स समुद्रः । एतं हि  
संद्रवन्तं<sup>६</sup> सर्वाणि भूतान्यनुसंद्रवन्ति<sup>७</sup> ॥४॥ तस्य<sup>८</sup> द्यावापृथिवी एव  
रोधसी । अथ यथा नद्यां<sup>९</sup> कंसानि<sup>१०</sup> वा प्रहीणानि<sup>११</sup> स्युस्सरांसि वै-  
व मस्यायम्पार्थिवस्समुद्रः ॥५॥ स एष पार एव समुद्रस्योदेति ।  
स उद्यन्नेव वायोः पृष्ठ आक्रमते । सोऽमृतादेवोदेति । अमृतमनु-  
संचरति । अमृते प्रतिष्ठितः<sup>१२</sup> ॥६॥ तस्येतत् त्रिवृद्रूपमृत्योरनाप्तं शुक्लं  
कृष्णाम्पुरुषः ॥७॥ तद्यच्छुक्लं तद्वाचोरूपमृचोऽग्नेर्मृतोः । सा या  
सा वागृक् सा । अथ योऽग्निर्मृत्युस्सः ॥८॥ अथ यत्कृष्णं तदपां  
रूपमन्नस्य मनसोयजुषः । तद्यास्ता आपोऽन्नं तत् । अथ यन्मनो  
यजुष्टत् ॥९॥ अथ यः पुरुषस्स प्राणस्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् ।  
स यः प्राणस्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म तदमृतम् ॥१०॥ ११२५॥

अष्टमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथाध्यात्मम् । इदमेव चतुस्त्रिवृच्छुक्लं कृष्णाम्पुरुषः ॥१॥  
तद्यच्छुक्लं तद्वाचो रूपमृचोऽग्नेर्मृतोः । सा या सा वागृक् सा ।

५-गृह-। ६-द्रे-। ७ अनुद्र-। ८-या । ९-याम् । १० कसा-  
नि । ११ प्रहीणाहीनि । १२ अधिक है 'सस्' । स । १३ प्रतितिष्ठतः ।  
१४ वाक्ग्, वाग्ग् । १५ ऋत् । १६ अन्नमस्य । १७ नास्ति, तद्याः-यः  
पुरुषस् ॥ १ गृत् । २ अधिक 'ऽक्सा' ।

अथ योऽभिर्मृत्युस्सः ॥२॥ अथ यत्कृष्णं तदपां रूपमन्नस्य मनसो  
 यजुषः । तद्यास्ता आपोऽन्नं तत् । अथ यन्मनो यजुष्टत् ॥३॥  
 अथ यः पुरुषस्स प्राणस्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् । स यः प्राण-  
 स्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म तदमृतम् ॥४॥ सैऽपोऽत्क्रान्तिर्ब्रह्मणः ।  
 अथातः पराक्रान्तिः ॥५॥ सा या साऽऽक्रान्तिर्विद्युदेव सा । स  
 यदेव विद्युतो विद्योतमानायै श्येतं रूपम्भवति तद्वाचो रूपमृचो-  
 ऽग्नेर्मखोः ॥६॥ यद्देव विद्युतस्संद्रवन्स्यै नीलं रूपम्भवति तदपां  
 रूपमन्नस्य मनसो यजुषः ॥७॥ य एवैष विद्युति पुरुषस्स प्राण-  
 स्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् । स यः प्राणस्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म  
 तदमृतम् ॥८॥ १।२६॥

अष्टमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

स हैषोऽमृतेन परिवृढो मृत्युमभ्यास्तेऽन्नं कृत्वा ॥१॥ अथै-  
 ऽप एव पुरुषो योऽयं चक्षुषि । य आदिस्यै सोऽतिपुरुषः । यो  
 विद्युति स परमपुरुषः ॥२॥ एते ह वाव त्रयः पुरुषाः । आ हास्यैते  
 जायन्ते ॥३॥ स योऽयं चक्षुष्येषोऽनुरूपो नाम । अन्वड् ह्येष

३-पो । स् ( ! ) । ४-त् । ५ नास्ति । ६ श्येतं । ७-ञ् । ८-षे ।  
 ९-आ ।

१-सी । २-यो । ३-पो, पा, प । ४-वज । ५ ह ।

सर्वाणि रूपाणि । तमनुरूप इत्युपासीत । अन्वञ्चि<sup>६</sup> हैनं<sup>७</sup> सर्वाणि  
 रूपाणि भवन्ति ॥४॥ य आदित्ये स प्रतिरूपः । प्रत्यङ् ह्येष  
 सर्वाणि रूपाणि । तम्प्रतिरूप इत्युपासीत । प्रत्यञ्चि<sup>६</sup> हैनं<sup>७</sup> सर्वाणि  
 रूपाणि भवन्ति ॥५॥ यो विद्युतिं स सर्वरूपः । सर्वाणि ह्येतस्मिन्  
 रूपाणि । तं सर्वरूप इत्युपासीत । सर्वाणि हाऽस्मिन् रूपाणि<sup>९</sup>  
 भवन्ति ॥६॥ एते ह वाव त्रयः पुरुषाः । आ हाऽस्यैते जायन्ते य  
 एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥७॥ १।२७॥

अष्टमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । अष्टमोऽनुवाकः समाप्तः ।

— :०: —

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाप्येतर्हि ॥१॥ स  
 यस्स आकाश इन्द्र एव सः । स यस्स इन्द्र एष एव स य एष  
 एव<sup>१</sup> तपति । स एष सप्तरश्मिर्दृषभस्तुविष्मान् ॥२॥ तस्य वाङ्मयो  
 रश्मिः प्राङ् प्रतिष्ठितः । सा या सा वागाग्निस्सः । स दशधा  
 भवति शतधा सहस्रधाऽयुतधा प्रयुतधा नियुतधाऽर्बुदधा<sup>२</sup> न्यर्बुदधा  
 निखर्वधा<sup>३</sup> पद्ममक्षितिव्योमान्तः<sup>४</sup> ॥ ३ ॥ स एष एतस्य रश्मिर्वा-

६-वञ्ची, चङ्गी, वं । ७ ह्येनम् । ८ प्रत्यं । ९ अधिक है  
 'रूपाणि;' नास्ति-तं ..... रूपाणि ।

१ नास्ति । २ अर्- । ३ निखर्वाचं । ४-ति । ५-त, स्सोम- ।

भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च वदत्येतस्यैव<sup>६</sup>  
 रश्मिना वदति ॥४॥ अथ मनोमयो दक्षिणा<sup>७</sup> प्रतिष्ठितः । तद्य-  
 च्छन्मनश्चन्द्रमास्सः । स दशधा भवति ॥५॥ स एष एतस्य रश्मिर्मनो<sup>१०</sup>  
 भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च मनुते एतस्यैव  
 रश्मिना मनुते ॥६॥ अथ चक्षुर्मयः<sup>११</sup> प्रत्यङ् प्रतिष्ठितः । तद्यत्तश्चक्षु-<sup>१२</sup>  
 रादित्यस्सः । स दशधा भवति ॥७॥ स एष एतस्य रश्मिचक्षु-<sup>१३</sup>  
 र्भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च पश्यत्येतस्यैव  
 रश्मिना पश्यति ॥८॥ अथ श्रोत्रमय उदङ् प्रतिष्ठितः । तद्यत्तच्छ्रोत्रं<sup>१४</sup>  
 दिशताः । स दशधा भवति ॥९॥ स एष एतस्य रश्मिश्श्रोत्र-  
 म्भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च शृणोत्येतस्यैव  
 रश्मिना शृणोति ॥१०॥ ११२८॥

नवमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथ प्राणमय ऊर्ध्वः प्रतिष्ठितः । स यस्स प्राणो वायुस्सः ।  
 स दशधा भवति ॥१॥ स एष एतस्य रश्मिः प्राणो भूत्वा सर्वास्वासु  
 प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च प्राणित्येतस्यैव रश्मिना प्राणिति

६ पश्यति । ७ पश्यति । ८ नास्ति । ९ दक्षिणा । १० मन्वश ।  
 ११ चक्षुम- । १२-य । १३ वस्थितः । १४ त, नास्ति । १५ प्रत्यवस्थितः ॥

१-स्थ- । २ नास्ति ।

॥२॥ अथाऽसुमयस्तिर्यङ् प्रतिष्ठितः । स ह स ईशानो नाम । स  
 दशधा भवति ॥३॥ स एष एतस्य रश्मिरमुर्भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु  
 प्रत्यवस्थितः । स यः कश्चाऽसुमानेतस्यैऽव रश्मिनाऽसुमान् ॥४॥  
 अथाऽन्नमयोऽर्वाङ् प्रतिष्ठितः । तद्यत्तदन्नमापस्ताः । स दशधा  
 भवति शतधा सहस्रधाऽयुतधा प्रयुतधा नियुतधाऽर्बुदधान्यर्बुदधा  
 निखर्वधा पद्यमत्तितिव्योमान्तः ॥५॥ स एष एतस्य रश्मिरन्नम्भूत्वा  
 सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्चाश्नायेतस्यैव रश्मिना-  
 श्राति ॥६॥ स एष सप्त रश्मिर्वृषभस्तुविष्मान् । तदेतद्दृचाऽभ्यनूच्यते  
 यरसप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मान्वासृजत्सर्तवे सप्तसिन्धून् ।  
 योरौहिणामस्फुरद्ब्रवाहुर्घामारोहन्ते स जनास इंद्र इति  
 ॥७॥ यस्मत्परश्मिरिति । सप्त ह्येत आदित्यस्य रश्मयः । वृषभ  
 इति । एष ह्येवाऽऽसाम्प्रजानामृषभः । तुविष्मानिति । महीयैऽवा  
 स्यैषा ॥८॥ अवासृजत् सर्तवे सप्तसिन्धूनिति । सप्तह्येतेसिन्धवः ।

३ स्थान खाली है 'स.....ई' । ४-वन्ति । ५ 'यत्' के पश्चात् 'तत्तदुदं नाम' पाठ है, 'तदन्नम्.....स' नहीं है । ६ अदन्नम् ।  
 ७ तेदा, स्त । ८ निखर्वाचम्, निखर्वधाच । ९ वं-म- । १० सामास्-  
 ११ नास्ति तदेतद्.....वृषभस्तुविष्मान् । १२ रोह- । १३-हु ।  
 १४-त । १५ मह्यै ।

तैरिदं सर्वं सितम् । तद्यदेतैरिदं सर्वं सितं तरमात्सिन्धवः ॥६॥

यो रौहिणमस्फुरद्वज्रवाहुरिति । एष (हि) रौहिणमस्फुरद्वज्रवाहुः

॥१०॥द्यामारोहन्तं स<sup>१६</sup>जनास इन्द्र इति । एष हीन्द्रः ॥११॥ १।२-६॥

नवमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तद्यथा गिरिम्पन्थानस्समुदियुरिति हस्माऽऽह शाठ्यायनि-  
रेवमेत आदित्यस्य रश्मय एतमादित्यं सर्वतोऽपियन्ति । स हैवं

विद्वानोमित्याददान एतैरेतस्य रश्मिभिरेतमादित्यं सर्वतोऽप्येति ॥१॥

तदेतत् सर्वतो द्वारमनिषेधं साम । अन्यतोद्वारं है<sup>४</sup>ऽनदैक एवा<sup>५</sup>-

ऽभ्रङ्गमुपासते । अतोऽन्यथाविद्युः ॥२॥ अथ य एतदेवं वेद स

एवैतत् सर्वतो द्वारमनिषेधं सामवेद ॥३॥ सा एषा विद्युत् । (यद्)

एतन्मण्डलं समन्तम्परिपताति तत्साम । अथ यत्परमतिभाति स

पुण्यकृत्वायै रसः । तमभ्यतिमुच्यते ॥४॥ तदेतद्भ्रातृव्यं<sup>११</sup> साम ।

न ह वा इन्द्रः कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते । स यथेन्द्रो न कंचन

भ्रातृव्यम्पश्यत एवमेव न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते य एतदेवं

वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥५॥ १।३०॥

नवमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । नवमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

१६ स्थान खाली है-हन्-वाबा,-हत्तं ।

१ एवम् । २ तिप्रतिवियन्ति । ३ अनुष्- । ४ नास्ति । ५ नत, त ।  
६ नास्ति । ७ एताव, एता । ८ गम् । ९ एतो । १० विद्युः । ११-तृवि ॥

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाऽथैतर्हि । स  
यस्स आकाश इन्द्र एव सः । स यस्स इन्द्रस्सामैवतत् ॥१॥ तस्यै-  
तस्य साम्न इयमेव प्राचीदिग्घङ्कार इयम्प्रस्ताव इयमादिरियमुद्गी-  
थोऽसौ प्रतिहारोऽन्तरिक्षमुपद्रव इयमेवनिधनम् ॥२॥ तदेतत्सप्त-  
विधं साम । स य एवमेतत्सप्तविधं साम वेद यत्किञ्च प्राच्यांदिशि  
या देवता ये मनुष्या ये पशवो यदन्नाद्यं तत्सर्वं हिङ्गारेणामोति  
॥३॥ अथ यदक्षिणायां दिशि तत्सर्वं प्रस्तावेनामोति ॥ ४ ॥ अथ  
यत्पृथ्व्यां दिशि तत्सर्वमादिनामोति ॥५॥ अथ यदुदीच्यांदिशि  
तत्सर्वमुद्गीथेनामोति ॥६॥ अथ यदमुष्यांदिशि तत्सर्वम्प्रतिहारेणा-  
मोति ॥७॥ अथ यदन्तरिक्षे तत्सर्वमुपद्रवेणामोति ॥८॥ अथ  
यदस्यां दिशि या देवता ये मनुष्या ये पशवो यदन्नाद्यं तत्सर्वं  
निधनेनामोति ॥९॥ सर्वं हैवाऽस्याऽऽप्तम्भवति सर्वं जितं न हा-  
ऽस्य कश्चन कामोऽनाप्तो भवति य एवं वेद ॥१०॥ स यद्वकिञ्च  
किञ्चैवं विद्वानेषु लोकेषु कुरुते स्वस्य हैव तत्स्वतः कुरुते । तदे-  
तद्वचाऽभ्यनूच्यते ॥११॥ १।३१॥

दशमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

१ दीर् । २-ईत् । ३ एत् । ४ 'मनुष्या' अधिक है । ५-वा ।  
६ यहां चौथा श्लोक (मन्त्र) अधिक है और साथ ही प्रतिहारेण  
'प्रस्तावेन' के स्थान में । ७ 'अव्यात्' अधिक है । ८ 'दक्षिणायांदिशि' ॥



यद् द्याव इन्द्र ते शतं शतम्भूमीरुत स्युः । नत्वा  
वज्रिन्सहस्रं सूर्या अनु न जातमष्ट रोदसी इति ॥१॥

यद् द्याव इन्द्र ते शतं शतम्भूमीरुतस्युरिति । यच्छतं द्यावस्युश्शत-  
म्भूम्यस्ताभ्य एष एवाऽऽकाशो ज्यायान् ॥२॥ नत्वा वज्रिन्सहस्रं  
सूर्या अन्विति । न ह्येतं सहस्रं च न सूर्या अनु ॥३॥ न जातमष्ट  
रोदसी इति । न ह्येतं जातं रोदन्ति । इमे ह वाव रोदसी ताभ्या-  
मेव एवाकाशो ज्यायान् । एतस्मिन् ह्येवंते अन्तः ॥४॥ स यस्स  
आकाश इन्द्र एव सः । स यस्स इन्द्र एष एव स य एष तपति ॥५॥  
स एषोऽभ्राण्यतिमुच्यमान एति । तद्यथैषोऽभ्राण्यतिमुच्यमान  
एसेवमेव स सर्वस्मात्पाप्मनोऽतिमुच्यमान एति य एवं वेदाथो  
यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥६॥ १।३२॥

दशमोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । दशमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

त्रिवृत्साम चतुष्पात् । ब्रह्म तृतीयमिन्द्रस्तृतीयम्प्राजापति-  
स्तृतीयमन्नमेव चतुर्थः पादः ॥१॥ तद्यद्वै ब्रह्मस प्राणोऽथ य इन्द्र-

१ नास्ति । २-यां । ३ नास्ति । ४-यन् । ५ नास्ति, स—स ।

६ स्थान खाली 'य' तक । ७-मानय, -यमानय ॥

१त्रिवृत्-

स्सा वागथ यः प्रजापतिस्तन्मनोऽन्नमेव चतुर्थः पादः ॥२॥ मन  
 एव हिङ्गारो वाक्प्रस्तावः प्राण उद्गीथोऽन्नमेव चतुर्थः पादः ॥३॥  
 करोखेव वाचा नयति प्राणेन गमयति मनसा । तदेतन्निरुद्धं यन्मनः ।  
 तेन यत्र कामयते तदात्मानं च यजमानं च दधाति ॥४॥ अथाधि-  
 दैवतम् । चन्द्रमा एव हिङ्गारोऽग्निः प्रस्ताव आदित्य उद्गीथ आप  
 एव चतुर्थः पादः । तद्धि प्रत्यक्षमन्नम् ॥५॥ ता वा एता देवता  
 अमावास्यां रात्रिं संयन्ति । चन्द्रमा अमावास्यां रात्रिमादित्यम्प्र-  
 विशस्यादित्योऽग्निम् ॥ ६ ॥ तद्यत्संयन्ति तस्मात्साम । स ह वै  
 सामवित्स साम वेद य एवं वेद ॥७॥ तासां वा एतासां देवतानामे-  
 कैकैव देवता साम भवति ॥८॥ एष एवादित्यस्त्रिवृच्चतुष्पाद्रश्मयो  
 मण्डलम्पुरुषः । रश्मय एव हिङ्गारः । तस्मात्ते प्रथमत एवोद्यत-  
 स्तायन्ते । मण्डलम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या एता आपोऽन्तस्स  
 एव चतुर्थः पादः ॥९॥ एवमेव चन्द्रमसो रश्मयो मण्डलम्पुरुषः ।  
 रश्मय एव हिङ्गारो मण्डलम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या एता आपोऽन्त  
 स्स एव चतुर्थः पादः ॥१०॥ चत्वार्यन्यानि चत्वार्यन्यानि । तान्यष्टौ ।  
 अष्टाक्षरा गायत्री गायत्रं साम ब्रह्म उ गायत्री । तदु ब्रह्माग्नि-  
 सम्पद्यते । अष्टाशफाः पशवस्तेनोपशव्यम् ॥११॥ १।३३ ॥

एकादशेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथाऽध्यात्मम् । इदमेव चक्षुस्त्रिदृशतुष्पाच्छुक्कं कृष्णम्पुरुषः ।  
शुक्लमेव हिङ्गारः कृष्णम्पस्तावः पुरुष उद्गीथो या इमा अपोऽन्तस्स  
एव चतुर्थः पादः ॥१॥ इदमादिसस्यायनमिदं चन्द्रमसः । चत्वारीमानि  
चत्वारीमानि । तान्यष्टौ । अष्टात्तरा गायत्री । गायत्रं साम ब्रह्म उ गा-  
यत्री । तद् ब्रह्माभिसम्पद्यते । अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥२॥  
स यो ऽयम्पवते स एष एव प्रजापतिः । तद्रेव साम । तस्यायं देवो  
योऽयं चक्षुषि पुरुषः । स एष आहुतिमतिमसोत्क्रान्तः ॥३॥ अथ  
यावेतौ चन्द्रमाश्चादिसश्च यावेतावप्सु दृश्येते एतावेतयोर्देवौ ॥४॥  
यद् वा इदमाहुर्देवानां देवा इत्येते ह ते । त एत आहुतिमतिमसो-  
त्क्रान्ताः ॥५॥ तद् पृथुर्वैभ्यो दिव्यान्त्रासान्पप्रच्छ येभिर्वात  
इषितः प्रवाति ये ददन्ते पञ्च दिशस्समीचीः । य  
आहुतीस्त्यमन्यन्त देवा अपां नेतारः कतमे त आ-  
सन्निति ॥६॥ ते ह प्रत्युचु रिमामेषाम्पृथिवीं वस्त एको-  
ऽन्तरिक्षम्पर्येको बभूव । दिवमेको ददते यो विधत्ता  
विश्वा आशाः प्रतिरक्षन्त्यन्य इति ॥७॥ इमामेषाम्पृथिवीं

१-पाद- २ नास्ति । ३-यते । ४ एता उ । ५ तान् । ६ एभिर् ।

७ दशस्, दश । ८-ईर् । ९ इत्यम्- १० पराङ् । ११-ईक्ष्- १२-धत्ता ।

१३ अन्य ।

वस्त एक इत्यग्निर्हसः ॥८॥ अन्तरिक्षं<sup>११</sup> पर्येको घभूवेति वायुर्हसः ॥९॥  
 दिवमेको ददते यो विधत्ते<sup>१४</sup>ऽसादित्यो हसः ॥१०॥ विश्वा आशाः  
 प्रतिरक्षन्त्यन्य इति । एता ह वै देवता विश्वा आशाः प्रतिरक्षन्ति  
 चन्द्रमा नक्षत्राणीति । ता एतास्सामैव सखो व्यूढोऽन्नाद्याय ॥११॥  
 १ । ३४ ॥

एकादशोऽनुवाक्रे द्वितीयः खण्डः । एकादशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

अथैतत्साम । तदाहुस्संवत्सर एव सामेति ॥१॥ तस्य वसन्त  
 एव हिङ्गारः । तस्मात्पशवो वसन्ता हिङ्गुरिक्रतस्समुदायन्ति ॥२॥  
 ग्रीष्मः प्रस्तावः । अनिरुक्तो वै प्रस्तावोऽनिरुक्त ऋतूनां ग्रीष्मः  
 ॥३॥ वर्षा उद्गीथः । उदिव वै वर्षं गायति ॥४॥ शरत्प्रतिहारः ।  
 शरादि ह खलु वै भूयिष्ठा ओषधयः पच्यन्ते ॥५॥ हेमन्तो निधनम् ।  
 निधनकृता इव वै हेमन्प्रजा भवन्ति ॥६॥ तावेतावन्तौ संधत्तः ।  
 एतदन्वन्तस्संवत्सरः<sup>२</sup> । तस्यैतावन्तौ यद्वेमन्तश्च वसन्तश्च । एतदनु  
 ग्रामस्यान्तौ समेतः । एतदनु निष्कस्यान्तौ समेतः । एतदन्वहिर्भो-  
 गान्पर्याहृत्सशये ॥७॥ तद्यथा ह वै निष्कस्समन्तं ग्रीवा अभिपर्यक्त<sup>५</sup>

१४ विधत्ते, विधत्ते । १५ अन्- , 'न्-'-याया ।

१-करिकृतस्, -करिकृतस् । २ नास्ति । ३-तत् । ४ सबत्-

५ श्री- । ६-यत्तः ।

एवमनन्तं साम । स य एवमेतदनन्तं साम वेदानन्ततामेव जयति  
॥८॥ १।३५॥

द्वादशेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथैतत्पर्जन्ये साम । तस्य पुरोवात एव हिङ्गारः । अथ य-  
दभ्राणि सम्प्लावयति स प्रस्तावः । अथ यत् स्तनयति स उद्गीथः ।  
अथ यद्विद्योतते स प्रतिहारः । अथ यद्वर्षति तन्निधनम् ॥१॥  
तदेतत्पर्जन्ये साम । स य एवमेतत्पर्जन्ये साम वेदवर्षुको<sup>१</sup> हास्मै  
पर्जन्यो भवति ॥२॥ अथैतत् पुरुषे साम । तस्यायमेव हिङ्गारो-  
ऽयम्प्रस्तावोऽयमुद्गीथोऽयम्प्रतिहार इदं निधनम् ॥३॥ तदेतत्पुरुषे  
साम । स य एवमेतत्पुरुषे साम वेदोऽऽर्ध्व एव प्रजया<sup>२</sup> पशुभिरा-  
रोहन्नेति ॥४॥ य उ एनत्प्रसग्वेद<sup>३</sup> ये प्रसञ्चो लोकास्ताञ्जयति ।  
तस्यायमेव हिङ्गारोऽयम्प्रस्तावोऽयमुद्गीथोऽयम्प्रतिहार इदं निधनम् ।  
ये प्रसञ्चो लोकास्ताञ्जयति ॥५॥ य उ एनत्तिर्यग्वेद<sup>४</sup> ये तिर्यञ्चो<sup>५</sup>  
लोकास्ताञ्जयति । तस्य लोमैव हिङ्गारस्त्वक्प्रस्तावो मांसमुद्गीथोऽस्थि  
प्रतिहारो मज्जानिधनम् ॥६॥ तस्य त्रीण्याविर्गायति प्रस्तावम्प्रतिहारं<sup>६</sup>

७ ऽनन्ताम् ।

१-वक्-। २-यो । ३ प्रजा । ४-नं । ५ नास्ति । ६ एन, एनं ।

७-युक्- , ' म ' अधिक है । ८ लाक्-। ९ हिंकारं ॥

निधनम् । तस्मात्पुरुषस्य त्रीण्यस्थिन्याविर्दन्ताश्च द्वयाश्चनखाः ।  
 ये तिर्यञ्चो लोकास्ताञ्जयति ॥७॥ य उ एनत्संयग्वेद ये सम्यञ्चो  
 लोकास्ताञ्जयति । तस्य मन एव हिङ्कारो वाक्प्रस्तावः प्राण उद्गीथ-  
 श्चक्षुः प्रतिहार इश्रोत्रं निधनम् । ये सम्यञ्चो लोकास्ताञ्जयति ॥८॥  
 अथैतद्देवतासु साम । तस्य वायुरेव हिङ्कारोऽग्निः प्रस्ताव आदित्य  
 उद्गीथश्चन्द्रमा प्रतिहारो दिश एव निधनम् ॥९॥ तदेतद्देवतासु साम ।  
 स य एनमेतद्देवतासु साम वेद देवतानामेव सलोकतां जयति ॥१०॥  
 १।३६॥

द्वादशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तस्यैतास्तिस्त्र आगा आग्नेय्ये<sup>१</sup>कैन्द्र<sup>२</sup>थैका वैश्वदेव्येका ॥१॥ सा या  
 मन्द्रा साऽऽग्नेयी । तथा प्रातस्सवनस्योद्देयम् । आग्नेयं वै प्रातस्स-  
 वनमाग्नेयोऽयं लोकः । स्वयाऽऽगया प्रातस्सवनस्योऽद्वायतृधोतीमं  
 लोकम् ॥२॥ अथ या घोषिण्युपब्दिमती सैऽऽन्दी । तथा माध्य-  
 न्दिनस्य<sup>५</sup> सवनस्योद्देयम् । ऐन्द्रं वै माध्यन्दिनं सवनं मैन्द्रोऽसौ  
 लोकः । स्वयाऽऽगया माध्यन्दिनस्य सवनस्योद्वायतृधोसमुं लोकम्  
 ॥३॥ अथ यां वीङ्घ्यन्निव प्रथयन्निव गायति सा वैश्वदेवी । तथा

१ ऐक्- । २ ऽऽन्द्र । ३ नास्ति, सा.....ऽद् । ४ मँनधी ।  
 ५ नास्ति अथ.....लोकम् । ६-अन्दी-के लिये स्थान खाली है ।  
 ७-१० दिन । ८-तिऽमं । ९ या, ' घोषिण्यु ', भी लिखा है ।

तृतीयसवनस्योद्देयम् । वैश्वदेवं वै तृतीयसवनं वैश्वदेवोऽयमन्तरा-  
लोकः । स्वयाऽऽगया तृतीयसवनस्योद्गायत्यृधोतीमन्तरालोकम्  
॥४॥ अथो उच्चा खल्वाहु रेकयैवाऽऽगयोद्देयं यदेवास्यमध्यं वाच  
इति । तद्यथा वै वाचा व्यायच्छमान उद्गायति तदेवास्यमध्यं वाचः ।  
तया वा एतथा वाचा सर्वा वाच उपगच्छति । अव्यासिक्तामेकस्थां  
श्रियमृधोति य एवं वेद ॥५॥ अथ या क्रौञ्चा सा बार्हस्पत्या । स  
यो ब्रह्मवर्चसकामस्स्यात्स तयोद्गायेत् । तद्ब्रह्म वै बृहस्पतिः । तद्वै  
ब्रह्मवर्चसमृधोति तथा ह ब्रह्मवर्चसी भवति ॥६॥ अथ ह चैकिताने-  
नेय एकस्यैव साम्न आगां गायति गायत्रस्यैव । तदनवानं गेयम् ।  
तत् साम्न एवा प्रतिहारादनवानं गेयम् । तत्प्राणो वै गायत्रम् ।  
तद्वै प्राणमृधोति । तथा ह सर्वमायुरेति ॥७॥ १।३७॥

द्वादशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

अथ ह ब्रह्मदत्तं चैकितानेयमुद्गायन्तं कुरव उपोदुरुज्जहिहि  
साम दालभ्येऽति ॥१॥ स होऽपोद्यमानो नितरां जगौ । तं होचुः  
किमुपोद्यमानो नितरामगासीरिति ॥२॥ स होवाचेदं वै लोमेऽस्यै-

१०-यन्ति । ११ ताया । १२ सू, नास्ति । १३ ' वै गायत्रम् ' नीचे से ले के अधिक लिखा है । १४ ' साम्नस् ' अधिक है ॥

१ तश् । २ उज्जिहि । ३ सोमे ।

तदेवैतत्प्रत्युपपश्यमः । तस्मादु ये न एतदुपावादिषु लोमशानीष्व तेषां  
 श्मशानानि भवितारः । अथ वयमुदेव गातारस्म इति ॥३॥ अथ  
 ह राजा जैवलिर्गलूनसमार्त्ताकायणं शामूल पर्णाभ्यामुत्थितम्पप्र-  
 च्छर्चाऽऽगाता शालावत्सा ३ साम्ना ३ इति ॥४॥ नैव राजन्नृचेति  
 होवाच न साम्नेऽति । तद्युयं तर्हि सर्व एव पर्णाव्या भविष्यथ य  
 एवं विद्राँसोऽगायतेति ॥५॥ अथ यद्वाऽवक्ष्यदृचा च साम्ना चाऽऽगामै-  
 ति धीतेन वै तथा तस्मान्नाऽमलाकारडेनाऽऽगातेऽति हैनाँस्तदवक्ष्यत् ।  
 तद् तदुवाच स्वरेण चैव हिङ्कारेण चाऽऽगामेति ॥६॥ १।३८॥

द्वादशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

अथ ह सखाधिवाकश्चैत्ररभिस्सखयज्ञम्पौलुषितमुवाच प्राचीन-  
 योगेति मम चैद्वै त्वं साम विद्वान् साम्नाऽऽर्विज्यं करिष्यासि नैव  
 तर्हि पुनर्दीक्षामभिध्यातासीति । मुहुर्दीक्षी ह्यास ॥१॥ स होवाच  
 यो वै साम्नश्श्रियं विद्वान्साम्नाऽऽर्विज्यं करोति श्रीमानेव भवति ।  
 मनो वाव साम्नश्श्रीरिति ॥२॥ यो वै साम्नः प्रतिष्ठां विद्वान्साम्ना-  
 ऽऽर्विज्यं करोति प्रखेव तिष्ठति । वाग्वाव साम्नः प्रतिष्ठेति ॥३॥

४-उपाश-। ५-षुक् । ६-तार । ७ गलूनसम, गुळिनसम ।  
 ८-त । ९ पर्णाव्या । १० च आगमे ॥

१ मच्च । २-क्षि । ३ आ ।



यो वै साम्नस्सुवर्णं विद्वान् साम्नाऽऽत्विज्यं करोत्यध्यस्य गृहे  
 सुवर्णं गम्यते । प्राणो वाव साम्नस्सुवर्णमिति ॥४॥ यो वै साम्नो  
 ऽपचितिं विद्वान्साम्नाऽऽत्विज्यं करोत्यपचितिमानेष भवति । चक्षु-  
 र्वाव साम्नोऽपचितिरिति ॥५॥ यो वै साम्नश्श्रुतिं विद्वान्साम्ना-  
 ऽऽत्विज्यं करोति श्रुतिमानेष भवति । श्रोत्रं वाव साम्नश्श्रुतिरिति  
 ॥६॥ १।३-६॥

द्वादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । द्वादशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

१०:

चत्वारिवाकपरिमिता पदानि तानि विदुर्ब्राह्मणा  
 ये मनीषिणः । एहा त्रीणि निहितानेऽङ्गयन्ति  
 तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्तीऽति ॥ १ ॥

वागेव साम । वाचा हि साम गायति । वागेवोऽकथम् । वाचा  
 सुकथं शंसति । वागेव यजुः । वाचा हि यजुस्सुवर्तते ॥२॥ तद्य-  
 त्किंचाऽर्वाचीनम्ब्रह्मणस्तद्वागेव सर्वम् । अथ यदन्यत्र ब्रह्मोपदिश्यते ।  
 नैव हि तेनाऽऽत्विज्यं करोति । परोक्षेणैव तु कृतम्भवति ॥३॥

४-हो ।

१-दानि । २-हितानी । ३ नास्ति । ४-क्त्- । ५ वाचं । ६ ने ।

७ नास्ति ।

तस्या एतस्यै वाचो मनः पादश्चक्षुः पादश्च्रोत्रम्पादो वागेव चतुर्थः  
 पादः ॥४॥ तद्यद्वै मनसा ध्यायति तद्वाचा वदति । यच्चक्षुषा पश्यति  
 तद्वाचा वदति । यच्च्रोत्रेण शृणोति तद्वाचा वदति ॥५॥ तद्यदे-  
 तत्सर्वं वाचमेवाऽभिसमयति तस्माद्वागेव साम । स ह वै सामवित्स  
 साम वेद य एवं वेद ॥६॥ तस्या एतस्यै वाचः प्राणा एवाऽसुः ।  
 एषु हीदं सर्वमसूतेति ॥७॥ १।४०॥

त्रयोदशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तेन हैतेनाऽसुना देवा जीवन्ति पितरो जीवन्ति मनुष्या जी-  
 वन्ति पशवो जीवन्ति गन्धर्वाप्सरसो जीवन्ति सर्वमिदं जीवति ॥१॥  
 तदाहुर्यदसुनेदं सर्वं जीवति कस्साम्नोऽसुरिति । प्राण इति ब्रूयात् ।  
 प्राणो ह वाव साम्नोऽसुः ॥२॥ स एष प्राणो वाचि प्रतिष्ठितो वागु  
 प्राणो प्रतिष्ठिता । तावेतावेवमन्योऽन्यस्मिन्प्रतिष्ठितौ । प्रतिष्ठिति  
 य एवं वेद ॥३॥ तदेतद्वाऽभ्यनूच्यते—

८ 'चतुर्थः' अधिक है । ९ स्वाद् । १० शृणोति । ११ ऽहिसम—  
 १२-णा । १३ 'असूते' के परे 'एषु हीदं सर्वं सूतेऽति' सब में  
 लिखा है ( नास्ति ' ति ) ॥

१-न्तीऽति । २ यदा । ३ येने । ४ 'इदं' अधिक है । ५-वे ।  
 ६ मन्यस्— ७ प्रतिष्ठितः ।

अदितिद्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता  
स पुत्रः । विश्वे देवा अदितिः पञ्चजना अदिति-  
र्जातमदितिर्जनित्वम् ॥ इति ॥४॥

अदितिद्यौरदितिरन्तरिक्षमिति । एषा वै द्यौराऽन्तरिक्षम्  
॥५॥ अदितिर्माता स पिता स पुत्र इति । एषा वै मातृषा पितृषा  
पुत्रः ॥६॥ विश्वेदेवा अदितिः पञ्चजना इति । ये देवा असुरेभ्यः  
पूर्वे पञ्चजना आसन् य एवासावादित्ये पुरुषो यश्चन्द्रमसि यो  
विद्युति योऽप्सु योऽयमक्षन्तरेष एव ते । तदेषैव ॥७॥ अदिति-  
र्जातमदितिर्जनित्वमिति । एषा ह्येव जातमेषा जनित्वम् ॥८॥१४१॥

अयोदशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । त्रयोदशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

आरुणिरहं वासिष्ठं चैकितानेयम्ब्रह्मचर्यमुपेयाय । तं होवाचा-  
ऽऽजानासि सौम्य गौतम यदिदं वयं चैकितानेयास्सामैत्रोपास्महे ।  
कां त्वं देवतामुपास्स इति । सामैव भगवन्त इति होऽवाच ॥१॥  
तं ह पप्रच्छ यदग्नौ तद्रेत्या ३ इति । ज्योतिर्वाप्तत्तस्य साम्नो यद्वयं

८-रीक्सू-। ६ नास्ति, अदितिर्माता.....अदितिरन्तरिक्षम् ।

१०-चै । ११-वो । १२-वैर् । १३-षम् । १४ इतिर्, इति ॥

१ (वाचा) आज । २ यं । ३-माह-इति । ४-स नहीं । ५-वत । ६ ता ।

सामोऽपास्मह इति ॥२॥ यत्पृथिव्यां तद्वेत्या३ इति । प्रतिष्ठा वा  
 एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥३॥ यदप्सु तद्वेत्या३  
 इति । शान्तिर्वा एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥४॥  
 यदन्तरिक्षे तद्वेत्या३ इति । आत्मा वा एष तस्य साम्नो यद्वयं  
 सामोपास्मह इति ॥५॥ यद्वायौ तद्वेत्या३ इति । श्रीर्वा एषा तस्य  
 साम्नो यद्वयं सामोऽपास्मह इति ॥६॥ यदिक्षु तद्वेत्या३ इति ।  
 व्याप्तिर्वा एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥७॥ यदिवि  
 तद्वेत्या३ इति । विभूतिर्वा एषा तस्य साम्नो यद् वयं सामोपा-  
 स्मह इति ॥८॥ १।४२॥

चतुर्दशोऽनुशाकेः प्रथमः खण्डः ।

यदादिसे तद्वेत्या३ इति । तेजो वा एतत्तस्य साम्नो यद्वयं  
 सामोपास्मह इति ॥१॥ यच्चन्द्रमसि तद्वेत्या३ इति । भा वा एषा  
 तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥२॥ यन्नक्षत्रेषु तद्वेत्या३  
 इति । प्रजा वा एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥३॥  
 यदन्ने तद्वेत्या३ इति । रेतो वा एतत्तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह

७ हाशिया पर लिखा है । ८ एतस्य । ९ नास्ति यद् ..... इति ।

१० नास्ति साम्नो ..... ऽप । ११-हा । १२ नास्ति ष ..... स्मह ॥

१ नास्ति । २ प्रजा । ३ नास्ति, 'एतत्' में 'तत्' ।

इति ॥४॥ यत्पशुषु तद्वेत्या ३ इति । यशो वा एतत्तस्य साम्नो  
यद्वयं सामोपास्मह इति ॥५॥ यदचि तद्वेत्या ३ इति । स्तोमो वा एष  
तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥६॥ यद्यजुषि तद्वेत्या ३ इति ।  
कर्म वा एतत्तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥७॥ अथ किं  
उपास्स इति । अक्षरमिति । कतमत्तदक्षरमिति । यत्क्षरन्नाऽक्षीयते-  
ति । कतमत्तत् क्षरन्नाऽक्षीयतेति । इन्द्र इति ॥८॥ कतमस्स इन्द्र  
इति । योऽक्षत्रमत इति । कतमस्स योऽक्षत्रमत इति । इयं देवतेति  
द्वोऽवाच ॥९॥ योऽयं चक्षुषि पुरुष एष इन्द्र एष प्रजापतिः । (स)  
समः पृथिव्या सम आकोशन समोदिवा समस्सर्वेण भूतेन । एष  
परो दिवो दीप्यते । एष एवेदं सर्वमित्युपासितव्यः ॥१०॥ स य  
एषदेवं वेद ज्योतिष्मान् प्रतिष्ठावाञ्छान्तिमानात्मवाञ्छीमान्  
व्याप्तिमान् विभूतिमांस्तैजस्वी भावान् प्रज्ञावात्रेतस्वी यशस्वी  
स्तोमवान् कर्मवानक्षरवानिन्द्रियवान् सामन्वीभवति ॥११॥ तद्वे-  
तद्वचाऽभ्यनूच्यते ॥१२॥ १।४३॥

चतुर्दशमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

४ नास्ति । ५ वो । ६ स्ते- । ७ ..... 'स्स' के लिये स्थान छोड़ा है ।  
८-इ । ९ अक्षरं । १०-क्ष । ११ इन्द्रमत । १२ सो । १३ नास्ति ।  
१४-ई । १५ दिव्य- । १६-सूतव्यं । १७-वी । १८-स्तोमान् ।  
१९ उक्त्वा ॥

रूपं-रूपम्प्रति रूपो बभूव तदस्य रूपम्प्रतिचक्षणाय ।  
इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते युक्ता ह्यस्य हरयश्शतादश ॥

इति ॥१॥ रूपं-रूपम्प्रतिरूपो बभूवेति । रूपं-रूपं ह्येष प्रतिरूपो बभूव

॥२॥ तदस्य रूपम्प्रतिचक्षणायेति । प्रतिचक्षणाय हाऽस्यैतद्रूपम्

॥३॥ इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते इति । मायाभिर्ह्येष एतत्पुरु

रूप ईयते ॥४॥ युक्ता ह्यस्य हरयश्शतादशेति । सहस्रं हैत आदि-

स्यस्य रश्मयः । तेऽस्य युक्तास्तैरिदं सर्वं हरति । तद्यदेतैरिदं

सर्वं हरति तस्माद्हरयः ॥५॥ रूपं रूपम्मघवा बोभवीति

मायाः कृगवानः परितन्वं स्वाम् । त्रिर्यद्विवः

परि मुहूर्तमागात् स्वैर्मन्त्रैरनृतुपा ऋतावेति ॥६॥

रूपं-रूपम्मघवा बोभवीतीति । रूपं-रूपं ह्येष मघवा बोभवीति

॥७॥ मायाः कृगवानः परि तन्वं स्वामिति । मायाभिर्ह्येष एतत्स्वां

तन्वं गोपायति ॥८॥ त्रिर्यद्विवः परिमुहूर्तमागादिति । त्रिर्ह वा

एष एतस्य मुहूर्तस्येमाम्पृथिवीं समन्तः पर्येतीमाः प्रजासंचक्षणाः

॥९॥ स्वैर्मन्त्रैरनृतुपा ऋतावेति । अनृतुपा ह्येष एतदृतावा ॥१०॥ ११४४

चतुर्दशेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

१ पुरुरूप, पुरुरूपं । २ रम्यते । ३-णा । ४-पम् । ५-पम् । ६ रमीयते ।  
७ नास्ति, हरयश्च ..... तेऽस्य । ८ 'म' अधिक है । ९ मुहूर्त-१० नास्ति,  
इति । ११ पुनः लिखा है 'रूपं रूपं' ..... वीचीऽति (!) । १२ कृशवा ।  
१३-भि । १४ श । १५ नास्ति । १६ अति । १७ नृत- । १८ ऋता ॥

तद्ध पृथुर्वैन्यो दिव्यान्त्रासान्यप्रच्छ—

इन्द्र<sup>१</sup>गुक्थमृचमुद्गीथमाहुर्ब्रह्म साम प्राणं व्यानम् ।

मनो<sup>२</sup>वाचत्तुरपानमाहुश्श्रोत्रं श्रोत्रिया बहुधावदन्ती-

ति ॥१॥ ते प्रत्यूचुः—

अपय एते मन्त्रकृतः पुराजाः पुनराजायन्ते वेदानां गुप्त्यैकम् ।

ते वै विद्वांसो वैन्य तद्वदन्ति समानम्पुरुषम्बहुधा निविष्टम्, इति ॥२॥

इमां<sup>३</sup> ह वा तद्देवतां त्रय्यां<sup>४</sup> विद्यायामिमां<sup>५</sup> समानामभ्येकं<sup>६</sup> आप-  
यन्ति नैके । यो ह वावैतदेवं वेद स एवैतां<sup>७</sup> देवतां सम्प्रति वेद

॥३॥ स एष इन्द्र उद्गीथः । स यदैष इन्द्र उद्गीथ आगच्छति

नैवोद्गतुश्चोपगातृणां<sup>८</sup> च विज्ञायते<sup>९</sup> । इत एवोऽऽर्ध्वस्स्वरुदेति<sup>१०</sup> ।

स उपरि मूर्ध्नि लेलायति ॥४॥ स विद्यादगमदिन्द्रो नेह कश्चन

पाप्मा न्यङ्गः<sup>११</sup> परिशेच्यत इति । तस्मिन् ह न कश्चन पाप्मा न्यङ्गः

परिशिष्यते ॥५॥ तदेतदभ्रातृव्यं साम । न ह वा इन्द्रः कंचन

भ्रातृव्यम्पश्यते । स यथेन्द्रो न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यत एवमेव न कंचन

भ्रातृव्यम्पश्यते य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥६॥ १।४५॥

चतुर्दशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । चतुर्दशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

१-इदम् । २ नो । ३ त्रय्यां, तृय्यां । ४ इमां । ५-जा । ६ न्य । ७ ह वै ।

८ य वै । ९-तन्- । १० 'ति' अधिक करो । ११ धर्वा । १२ स्वर । १३ परिवे-

प्रजापतिर्वा वेद अग्र आसीत् । सोऽकामयत् बहुस्स्याम्प्रजोयेय  
 भूमानं गच्छेयमिति ॥१॥ स षोडशधाऽऽत्मानं व्यकुरुत् भद्रं च  
 समाप्तिश्चाऽऽभूतिश्च<sup>१</sup> सम्भूतिश्च भूतं च सर्वं च रूपं चाऽपरिमितं  
 च श्रीश्च यशश्च नाम चाऽग्रं च सजाताश्च पयश्च महीयां<sup>२</sup> च रसश्च  
 ॥२॥ तद्यद्भद्रं हृदयमस्य तत् । ततस्संवत्सरमसृजत् । तदस्य  
 संवत्सरोऽनूपतिष्ठते<sup>३</sup> ॥३॥ समाप्तिः कर्मास्य तत् । कर्मणा हि  
 समाप्नोति । तत् अटूनसृजत् । तदस्यर्तवोऽनूपतिष्ठन्ते ॥४॥ आ-  
 भूतिरन्नमस्य<sup>४</sup> तत् । ( तच् ) चतुर्धा<sup>५</sup> भवति । ततो मासानर्धमा-  
 सानहोरात्रायुषसोऽसृजत् । तदस्य मासा अर्धमासा अहोरात्रायु-  
 षसोऽनूपतिष्ठन्ते ॥५॥ सम्भूती<sup>६</sup> रेतोऽस्य तद् । रेतसो हि सम्भव-  
 ति ॥६॥ १।४६॥

पञ्चदशेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

ततश्चन्द्रमसमसृजत् । तदस्य चन्द्रमा अनूपतिष्ठते । तस्मात्स  
 रेतसः प्रतिरूपः ॥१॥ भूतम्प्राणो<sup>१</sup>ऽस्य सः । ततो वायुमसृजत् ।  
 तद्रस्य वायुरनूपतिष्ठते ॥२॥ सर्वमपानो<sup>२</sup>ऽस्य सः । ततः पशूनसृजत् ।  
 तदस्य पशवो<sup>३</sup>ऽनूपतिष्ठन्ते ॥३॥ रूपं व्यानो<sup>४</sup>ऽस्य सः । ततः प्रजा

१ चे । २-याँ । ३-अन्ते । ४ 'त' अधिक है । ५ तद् ।  
 नास्ति । ६ अचर्धा, अर्धा । ७-ति, -ता, त ।

१-त । २-णा । ३ रूपशवो ।



असृजत । तदस्य प्रजा अनूपतिष्ठन्ते । तस्मादासु प्रजासु रूपाण्य-  
धिगम्यन्ते ॥४॥ अपरिमितम्मनोऽस्य तत् । ततो दिशोऽसृजत ।  
तदस्य दिशोऽनूपतिष्ठन्ते । तस्मात्ता अपरिमिताः । अपरिमितमिव हि  
मनः ॥५॥ श्रीर्वाणस्य सा । ततस्समुद्रमसृजत । तदस्य समुद्रो-  
ऽनूपतिष्ठते ॥६॥ यशस्तपोऽस्य तत् । ततोऽग्निमसृजत । तदस्या-  
ऽग्निरनूपतिष्ठते । तस्मात्स मथितादिव सन्तप्तादिव जायते ॥७॥  
नाम चक्षुरस्य तत् ॥८॥ १।४७॥

पञ्चदशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तत आदिसमसृजत । तदस्यादिसोऽनूपतिष्ठते ॥१॥ अग्र-  
म्मूर्धास्य सः । ततो दिवमसृजत । तदस्य द्यौरनूपतिष्ठते ॥२॥  
सजाता अङ्गान्यस्य तानि । अङ्गैर्हि सह जायते । ततो वनस्पती-  
नसृजत । तदस्य वनस्पतयोऽनूपतिष्ठन्ते ॥३॥ पयो लोमान्यस्य  
तानि । तत ओषधीरसृजत । तदस्यौषधयोऽनूपतिष्ठन्ते ॥४॥ महीया  
माँसान्यस्य तानि । माँसैर्हि सह महीयते । ततो वयाँस्यसृजत ।  
तदस्य वयाँस्यनूपतिष्ठन्ते । तस्मात्तानि प्रपतिष्णुनि । प्रपतिष्णुनी-

४-यते । ५ नास्ति, ततो ..... तस्मात् । ६ नास्ति । ७ तस्या ।  
८ मथितामिद्, मथितिताद् ॥

१ अंगान्य, अंगहान्य, अङ्गं । २ ता । ३ गैर् । ४ नास्ति,  
पयो ..... अनूपतिष्ठन्ते । ५ मभिया, महिया । ६ त ।

ॐ महामाँसानि ॥५॥ रसो मज्जाऽस्य सः । ततः पृथिवीमसृजत ।  
 तदस्य पृथिव्यनूपतिष्ठते ॥६॥ स हैवं षोडशधाऽऽत्मानं विकृष्य  
 सार्धं समैत् १० । तद्यत्सार्धं समैत्त्वं तत्साम्नस्सामत्वम् ॥७॥ स एवैष  
 द्विरणमयः पुरुष उदतिष्ठत्प्रजानां जनिता ११ ॥८॥ १।४८॥

पञ्चदशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

देवासुरा अस्पर्धन्त । ते देवाः प्रजापतिमुपाधावाञ्जयामाऽसु-  
 रानिति ॥१॥ सोऽब्रवीन्न वै मां यूयं विथ्य नाऽसुराः । यद्वै मां यूयं  
 विद्यात् ततो वै यूयमेव स्यात् पराऽसुरा भवेयुरिति ॥२॥ तद्वै  
 म्रूहीऽसब्रुवन । सोऽब्रवीत्पुरुषः प्रजापतिस्सामेति मोऽपाद्धवम् ।  
 ततो वै यूयमेव भविष्यथ पराऽसुरा भविष्यन्तीति ॥३॥ तम्पुरुषः  
 प्रजापतिस्सामेऽत्युपासत । ततो वै देवा अभवन् पराऽसुराः । स  
 यो हैवं विद्वान्पुरुषः प्रजापतिस्सामेऽत्युपास्ते भवसात्मना पराऽस्य  
 द्विषन् भ्रातृव्यो भवति ॥४॥ १।४९॥

पञ्चदशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । पञ्चदशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

७ महीम्-। ८ मज्ज्या । ९-न्ते । १० समैत्; तत्पश्चात्,  
 'तद्यत्सार्धं समैत्त्वं' (!) पुनः है । ११ जयिता ॥

१ षथ्य । २-यत् । ३-हिं ॥

देवा वै विजिग्याना<sup>१</sup> अब्रुवन्द्वितीयं करवामहै । माऽद्वितीया  
 भूमेति । तेऽब्रुवन् सामैव<sup>२</sup> द्वितीयं करवामहै । सामैव नो द्वितीय-  
 मस्त्विति ॥१॥ त इमे द्यावापृथिवी अब्रुवन् समेतं साम प्रजनयत-  
 मिति ॥२॥ सौऽसावस्या<sup>३</sup> अवीभत्सत । सौऽब्रवीद्बहु वा एतस्यां  
 किं च किं च कुर्वन्सधिष्ठीवन्सधिचरन्सध्यासते । पुनीतन्वेनामपूता  
 वा इति ॥३॥ ते गाथामब्रुन्त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति ।  
 शतसनिस्स्या इति । तथेति । ते गाथयाऽपुनन् । तस्मादुत गाथया  
 शतं मुनोति ॥४॥ ते कुम्ब्यामब्रुवन् त्वया पुनामेति । किं तत-  
 स्स्यादिति । शतसनिस्स्या इति । तथेति । ते कुम्ब्या-  
 ऽपुनन् । तस्मादुत कुम्ब्यां शतं मुनोति ॥५॥ ते नाराशंसीमब्रु-  
 वन् त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति । शतसनिस्स्या<sup>१०</sup> इति ।  
 तथेति । ते नाराशंस्याऽपुनन् । तस्मादुत नाराशंस्या शतं मुनोति  
 ॥६॥ ते रैभीमब्रुवन् त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति । शतस-  
 निस्स्या<sup>१०</sup> इति । तथेति । ते रैभ्याऽपुनन् । तस्मादुत रैभ्या शतं

१. विजिज्ञाना । २ वा । ३ सा । ४ अवीहत्- । ५-ष्टिव- ।  
 ६-नि,-नी । ७-भ्य- । ८ '५' पुनः । लिखा है । ९ तेन । १० शतनी ।  
 ११-भिन्न । १२ त ॥

सुनोति ॥७॥ सेयम्पूता । अथाऽमुमब्रवीद्बहु वै किं च किं च  
पुमाँश्चरति । त्वमनुपुनीष्वेति ॥८॥ १।५०॥

षोडशेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स ऐलवेनाऽपुनीत । पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता  
ऋचः पूतानि यजूषि पूतमनूक्तम्पूतं सर्वम्भवति य एवं वेद ॥१॥  
ते समेस्य साम प्राजनयताम् । तद्यत्समेस्य साम प्राजनयतां तत्सा-  
न्नस्सामत्वम् ॥२॥ तदिदं साम सृष्टमद उत्क्रम्य लेलायदतिष्ठत् ।  
तस्य सर्वे देवा ममत्विन आसन्मम ममेति ॥३॥ तेऽब्रुवन्वीद-  
म्भजामहा इति । तस्य विभागे न समपादयन् । तान्प्रजापतिर-  
ब्रवीदपेत । मम वा एतत् । अहमेव वो विभक्ष्यामीति ॥४॥  
सोऽग्निमब्रवीच्चं वै मे ज्येष्ठः पुत्राणामसि । त्वम्प्रथमो वृणीष्वेति  
॥५॥ सोऽब्रवीन्मन्द्रं साम्नो वृणेऽन्नाद्यमिति । स य एतद्गायाद-  
न्नाद एव सोऽसन्मासु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्राँसमेतद्गायन्त-  
मुपवदादिति ॥६॥ अथेन्द्रमब्रवीच्चमनुवृणीष्वेति ॥७॥ सोऽब्र-

१३ तम ।

१-लव्-।, ऐलवैनां । २-वाम । ३ प्रजू- ४-अत् । ५ मे ।  
६ 'वीऽद्रम्' के लिये स्थान खाली है, वीदां । ७ भविष्य-। ८ श्रियम् ।  
९ गायत्राच् । १० इमीमात् । ११ अथ । १२ सोमम् ।

वीदुग्रं<sup>१३</sup> साम्नो वृणे<sup>१४</sup> श्रियमिति । स य एतद्गायाच्छ्रीमानेव सोऽस-  
 न्मामु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्राँसमेतद्गायन्तमुपवदादिति ॥८॥  
 अथ सोममब्रवीच्चमनुवृणीष्वेति ॥९॥ सोऽब्रवीद्वल्गुं<sup>१५</sup> साम्नो वृणे  
 प्रियमिति । स य एतद्गायात्प्रिय एव स कीर्तेः प्रियश्चक्षुषः प्रिय-  
 स्सर्वेषामसन् मामु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्राँसमेतद्गायन्तमुप-  
 वदादिति ॥१०॥ अथ बृहस्पतिमब्रवीच्चमनुवृणीष्वेति ॥११॥  
 सोऽब्रवीत्क्रौञ्चं साम्नो वृणे ब्रह्मवर्चसमिति । स य एतद्गायाद्ब्रह्म-  
 वर्चस्येव सोऽसन्मामु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्राँसमेतद्गायन्तमुप-  
 वदादिति ॥१२॥ १।५१॥

षोडशेऽनुवाके द्वितीयः ऋण्डः ।

अथ विश्वान्देवानब्रवीद्भूयमनुवृणीध्वमिति ॥१॥ तेऽब्रुवन्वैश्व-  
 देवं साम्नो वृणीमहे प्रजननमिति । स य एतद्गायात्प्रजावानेव सोऽस-  
 दस्मानु<sup>१</sup> देवानामृच्छाद्य एवं विद्राँसमेतद्गायन्तमुपवदादिति ॥२॥  
 अथ पशून्ब्रवीद्भूयमनुवृणीध्वमिति ॥३॥ तेऽब्रुवन्वायुर्वा अस्माक-  
 मीशे । स एव नो वरिष्यत<sup>३</sup> इति । ते वायुश्च पशवश्चाब्रुवन्निरुक्तं<sup>४</sup> साम्नो

१३ वल्गु । १४ प्रियम् । १५ नास्ति, स य .....सोऽब्रवीद् ९ में ।

१६ गायत्रच् । १७ नास्ति । १८ नुवृ- ।

१ 'म' अधिक है । २ नीचे से 'च स वायुं' अधिक लेता है ।

३ वरिष्ठ । ४ अनिर- ।

वृणीमहे पशव्यमिति । स य एतद्गायात्पशुमानेव सोऽसदस्मानु च  
 स वार्युं च देवानामृच्छाद्य एवं विद्राँसमेतद्गायन्तमुपवदादिति ॥४॥  
 अथ प्रजापतिरब्रवीदहमनुवारिष्य इति ॥५॥ सोऽब्रवीदनिरुक्तं  
 साम्नो वृणे स्वर्ग्यमिति । स य एतद्गायात्स्वर्गलोक एव सोऽसन्मामु  
 स देवानामृच्छाद्य एवं विद्राँसमेतद्गायन्तमुपवदादिति ॥६॥  
 अथ वरुणमब्रवीत्त्वमनुवृणीष्वेति ॥७॥ सोऽब्रवीद्यद्वो न कश्चना-  
 ऽवृत तदहम्परिहरिष्य इति । किमिति । अपध्वान्तं साम्नो वृणेऽपश-  
 व्यमिति । स य एतद्गायादपथुरेव सोऽसन्मामु स देवानामृच्छाद्य  
 एतद्गायादिति ॥८॥ तानि वा एतान्यष्टौ गीतागीतानि साम्नः ।  
 इमान्यु ह वै सप्तगीतानि । अथेयमेव वारुणयागाऽगीता ॥९॥ स  
 यां ह कां चैवं विद्वानेतासां सप्तानामागानां गायति गीतमेवास्य  
 भवत्येतानु कामान्नाध्नोति य एतासु कामाः । अथेयामेव वारुणी-  
 मार्गां न गायेत् ॥१०॥ १।५२॥

षोडशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः । षोडशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

५-युश । ६ 'इति' तक शेष नहीं लिखा । ७ ति । ८ स्वर्गम् ।  
 ९ समुत् । १०-दृष्य-क-, यत् । ११ अपपद्धमातम्, अपध्मातम् । १२  
 पशु- । १३ ऋद्धाद् । १४-द्य, स्थ । १५-त्र । १६ कामा । १७ नीरुध्र-,  
 निर्ऋध्नोति ॥

द्रयं वावेदमग्र आसीत्सच्चैवासच्च ॥१॥ तयोर्यत् सत्  
 तत्साम तन्मनस्स प्राणः। अथ यदसत्सर्क<sup>१</sup> सा वाक् सोऽपानः ॥२॥  
 तद्यन्मनश्चप्राणश्च तत्समानम् । अथयावाक् चापानश्चतत्समानम् ।  
 इदमायतनम्मनश्च प्राणश्चेदमायतनं<sup>२</sup> वाक् चापानश्च । तस्मात्पुमा-  
 न्दाक्षिणतो योषामुपशेते ॥३॥ सेयमृगास्मिन् सामन् मिथुनमै-  
 च्छत । तामपृच्छत् का त्वमसीति । साहमस्मीत्यब्रवीत् । अथ वा  
 अहममोऽस्मीति ॥४॥ तद्यत्सा चाऽमश्चतत् सामाऽभवत्  
 तत्साम्नस्सामत्वम् ॥५॥ तौ वै सम्भवावेति । नेत्यब्रवीत्स्वसा  
 वै मम त्वमस्यन्यत्र मिथुनमिच्छस्वेति ॥६॥ साऽब्रवीन्न वै तं विन्दा-  
 मि येन सम्भवेयम् । त्वयैव सम्भवानीति । सा वै पुनीष्वेत्यब्रवीत् ।  
 अपृता वा असीति ॥७॥ साऽपुनीत यदिदं विप्रां वदन्ति तेन ।  
 साऽब्रवीत्क्वेदम्भविष्यतीति । प्रत्यूहेत्यब्रवीत् । धीर्वा एषा । प्रजानां  
 जीवनं वा एतद्भविष्यतीति । तथेति । तत्प्रत्यौहत । तस्मादेषाधीरेव  
 प्रजानां जीवनमेव ॥८॥ पुनीष्वेत्यब्रवीत् । साऽपुनीत गाथया  
 साऽपुनीत कुम्ब्यासाऽपुनीत नाराशंस्या साऽपुनीत पुराणेति-

१ म्यक-अस्म्यदद्य भवितेऽति, (अस्त्य) भवितेति । २-ना ।

३ उपवशेते । ४-म । ५ सम्भवेत् । यम् । ६ 'वा' अधिक है । ७ प्रा,  
 रिप्रा । ८ त्वे । ९ त्यत् । १०-म्भ-, 'वा' अधिक है ।

हासेन साऽपुनीत यदिदमादाय नाऽऽगायन्ति तेन ॥१॥ साऽब्र-  
वीत्केदम्भविष्यतीति । प्रत्यूहेत्यब्रवीत् । धीर्वा एषा । प्रजानां  
जीवनं वा एतद्रविष्यतीति । तथेति । तत्प्रत्यौहत् । तस्मादेषा  
धीर्वैव प्रजानां जीवनम्बेव ॥१०॥ पुनीष्वैवेत्यब्रवीत् ॥११॥ १।५३॥

सप्तदशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सा मधुनाऽपुनीत । तस्मादुत ब्रह्मचारी मधु नाऽश्रीयाद्वेदस्य  
पलाव इति । कामं ह त्वाचार्यदत्तमश्रीयात् ॥१॥ अथर्क् सामा-  
ब्रवीद्ब्रह्म वै किं च किं च पुमाँश्चरति । त्वमनुपुनीष्वेति । स  
भरण्डकेष्णेनाऽपुनीत । पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता ऋचः  
पूतानि यजूषिं पूतमनूक्तम्पूतं सर्वम्भवति य एवं वेद ॥२॥ ताभ्यां  
सदो मिथुनाय पर्यश्रयन् । तस्मादुपवसथीयां रात्रिं सदसि न  
शयीत् । अत्र ह्येतावृक्सामे उपवसथीयां रात्रिं सदसि सम्भवतः ।  
स यथा श्रेय स उपद्रष्टैवं हि शश्वदीश्वरोऽनुलब्धः पराभवितोः  
॥३॥ अथो आहुरुद्रातुमुखे सम्भवतः । उद्रातुरेव मुखं नैत्ते-

११ इमम् । १२ मादायना, आदायना ॥

१. सारे पद का पुनर्लेख है । २ स ' कामम् ' के स्थान में ।  
मा सर्वत्र है । ३ हरुण्डकेष्णेना, भरण्ड, भरुण्डकोक्षणेना । ४-चन् ।  
५-धीयाम्, -शीयाम् । ६-ई । ७ यीत, येत । ८-ध्व- । ९ अद् ।  
१० नुनुलव, अनुनुलव-



तेति ॥४॥ तद् वा आहुः काममेवोद्गतुर्मुखमीक्षेत । उपवसथीयाभे-  
 वैतां रात्रिं सदसि न शयीत । अत्र हेवैतावृक्सामे उपवस्थीयां<sup>१२</sup>  
 रात्रिं सदसि सम्भवत इति ॥५॥ तां सम्भविष्यन्नाहाऽमोऽहम-<sup>१३</sup>  
 स्मि सा त्वं सा त्वमस्यमोऽहम् । सा मामनुव्रता भूत्वा प्रजाः प्रज-<sup>१४</sup>  
 नयावैह । एहि सम्भवावहा इति ॥६॥ तां सम्भवन्नत्यरिच्यत<sup>१५</sup>  
 सोऽब्रवीन्न वै त्वाऽनुभवामि । विराड् भूत्वा प्रजनयावेति ।<sup>१६</sup>  
 तथेति ॥७॥ तौ विराड्भूत्वा प्राजनयताम् । हिङ्कारश्चाऽऽहावश्च<sup>१७</sup>  
 प्रस्तावश्च प्रथमा चोद्गीथश्च मध्यमा च प्रतिहारश्चोत्तमा च निधनं  
 च वषट्कारश्चैव<sup>१८</sup> विराड् भूत्वा प्राजनयताम् । ते अमुमजनयतां<sup>१९</sup>  
 योऽसौ तपति । ते व्यद्ववताम्<sup>२०</sup> ॥८॥ १।५४॥

सप्तदशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

मदध्यभून्मदध्यभूद्दिति । तस्मादाहुर्मथुपुत्र इति ॥१॥  
 तस्मादुतस्त्रियो मधु नाऽश्नन्ति पुत्राणामिदं व्रतं चराम इति वदन्तीः  
 ॥२॥ तदयं तृचोऽनुदश्रयत । इयमेव<sup>२</sup> गायत्र्यन्तरिक्षं<sup>३</sup> त्रिष्टुबसौ  
 जगती । तस्यैतत्तृचः ॥३॥ स उपरिष्ठात्सामाऽभ्याहितं तपति ।

११ न । १२-थी- । १३ 'रगा' अधिक है । १४-प्र- । १५ संभवत ।  
 १६ आत्यरिच्यते । १७-हं- । १८ च । एवम् । १९ प्रज- ।  
 २० व्यद्वपताम्, भ्यद्ववताम्, व्यद्वपताम् (?) ॥

१-आ । २ इदम् । ३-ईक्ष- ।

सोऽध्रुव इवासीदलेलायदिव । स नोर्ध्वोऽतपत् ॥४॥ स देवा-  
नब्रवीदुन्मा गायतेति । किं ततस्स्यादिति । श्रियं वः प्रयच्छेयम् ।  
मामिह हृहेतेति ॥५॥ तथेति । तमुदगायन् । तमेतदत्राऽहृहन् ।  
तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा देवानां श्रीः ॥६॥ तत एतदूर्ध्वस्तपति ।  
स नार्वाङ्गतपत् ॥७॥ स ऋषीनब्रवीदनु मा गायतेति । किं  
ततस्स्यादिति । श्रियं वः प्रयच्छेयम् । मामिह हृहेतेति ॥८॥ तथेति ।  
तमन्वगायन् । तमेतदत्राऽहृहन् । तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा ऋषीणां  
श्रीः ॥९॥ तत एतदर्वाङ् तपति । स न तिर्यङ् अतपत् ॥१०॥  
स गन्धर्वाप्सरसोऽब्रवीदामा गायतेति । किं ततस्स्यादिति ।  
श्रियं वः प्रयच्छेयम् । मामिह हृहेतेति ॥११॥ तथेति । तमागायन् ।  
तमेतदत्राऽहृहन् । तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा गन्धर्वाप्सरसां  
श्रीः ॥१२॥ तत एतत् तिर्यङ् तपति ॥१३॥ तानि वा एतानि  
त्रीणि साम्न उद्गीतमनुगीतमागीतम् । तद्यथेदं वयमागार्योद्गायाम  
एतदुद्गीतम् । अथ यद्यथागीतं तदनुगीतम् । अथ यत्किंचेति सा-  
म्नस्तदागीतम् । एतानि ह्येव त्रीणि साम्नः ॥१४॥ १।५५॥

सप्तदशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः । सप्तदशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

४ अ-ध- ५ हुंहेते । ६ उदगात् । ७-हत् । ८ तप्- । ९ तिर्यदं ।  
१० त । ११ तिर्यदं । १२ आगयो, आगेयो- । १३-यम् ॥

आपो वा इदमग्रे महत्सलिलमासीत् । स ऊर्मिर्भूमिमस्कन्दत् ।  
 ततो हिरण्यमयौ कुक्ष्या<sup>२</sup> समभवतां ते एवर्कसामे<sup>३</sup> ॥१॥ सेयमृगिदं  
 सामाऽभ्यप्लवत्<sup>४</sup> । तामपृच्छत् का त्वमसीति । साहमस्मीत्यब्रवीत् ।  
 अथ वा अहममोऽस्मीति । तद्यत्सा चाऽमश्च तत्साम्नस्सामत्वम् ॥२॥  
 तौ वै सम्भवावेति । नेत्यब्रवीत्स्वसा वै मम त्वमसि । अन्यत्र  
 मिथुनमिच्छस्वेति ॥३॥ सा पराप्लवत् मिथुनमिच्छमाना । सा  
 समास्सहस्रं सप्ततीः पर्यप्लवत् ॥४॥ तदेष श्लोकः—

स्त्री स्मैवाऽग्रे संचरतीच्छन्ती सलिले पतिम् ।

समास्सहस्रं सप्तती स्ततोऽजायत पश्यत, इति ॥५॥

असौ वा आदित्यः पश्यतः<sup>९</sup> । एष एव तदजायत । एतेन  
 हि पश्यति ॥६॥ साऽविच्चा<sup>११</sup> न्यप्लवत् । साऽब्रवीन्न<sup>१२</sup> वै तं विन्दामि  
 येन सम्भवेयम् । त्वयैव सम्भवानीति ॥७॥ सा वै द्वितीयामिच्छ-  
 स्वत्यब्रवीन्न<sup>१३</sup> वै मैकोऽद्यंस्यसीति । सा द्वितीयां<sup>११</sup> विच्चा<sup>११</sup> न्यप्लवत्  
 ॥८॥ ( तृतीयाम् ) इच्छस्वैवैत्यब्रवीन्नो<sup>१४</sup> वाव मा द्वे<sup>१५</sup> उद्यंस्यथ<sup>१७</sup>  
 इति । सा तृतीयां<sup>१३</sup> विच्चा<sup>१७</sup> न्यप्लवत् । सोऽब्रवीदत्र वै मोऽद्यंस्यथेति<sup>१८</sup>

१-द । २ कुक्ष्यौ । ३ येष । ४ कसामे- । ५ ह्यप्ल- । ६ पपरान-  
 ७ सस्ती । ८-ति । ९ पश्यः । १० तम् । ११ पित्वा । १२ नास्ति  
 सा.....न्यप्लवत् । १३-यम् । १४ वै । १५ वा । १६ स्यात् छोड़ा  
 हुआ है, ध्वे । १७ अब्र- १८-स्यसी ।

॥६॥ स यदेकयाग्रे समवदत्<sup>१९</sup> तस्मादेकचे<sup>२०</sup> साम । अथ यद्वे अपा-  
 सेधत्तस्माद्द्वयोर्न कुर्वन्ति । अथ यत् तिस्रभिस्समपादयत्<sup>२१</sup> तस्माद्दु-  
 तृचेसाम ॥१०॥ ता अब्रवीत्पुनीध्वं न पूता वै स्थेति ॥११॥ १।५६॥

अष्टादशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सा गायत्री गाथयाऽपुनीत नाराशंस्यात्रिष्टुब्रैभ्या जगती ।  
 भीमम्बत<sup>२</sup> मलमपावधिषतेति । तस्माद्भीमलाधियो वा एताः । धियो  
 वा इमा मलमपावधिषता<sup>३</sup>ति । तस्माद्दु भीमलाः । तस्माद्दु गायतां<sup>४</sup>  
 नाऽश्रीयात्<sup>५</sup> । मलेन ह्येते जीवन्ति ॥१॥ अथर्क्<sup>६</sup> सामाऽब्रवीद्ब्रह्म वै  
 किं च किं च पुमाँश्चरति । त्वमनुपुनीष्वेति । स ऊर्ध्वगणेना-  
 ऽपुनीत ॥२॥ पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता ऋचः पूतानि  
 यजूषि पूतमनूक्तम्पूतं सर्वम्भवति य एवं वेद ॥३॥ ताभ्यां  
 दिशो मिथुनाय पर्याँहन् । तां सम्भविष्यन्नह्यताऽमोऽहमस्मि सा  
 त्वं सा त्वमस्यमोऽहमिति ॥४॥ तामेतदुभयतो वाचाऽत्सरिच्यत<sup>१३</sup>  
 हिङ्गारेण पुरस्तावस्तोभेन मध्यतो निधनेनोपरिष्ठात् । अतितिस्रो<sup>१४</sup>  
 ब्राह्मणायनीस्सदृशी रिच्यते य एवं वेद ॥५॥ तयोर्यस्सम्भवतो-

१६-पद्-। २० तिस्र-। २१ सम्प-॥

१-स्योत् । २ व । ३-थे । ४-ता । ५ ऽग्नी-। ६ क्के । ७-तानी ।

८-ता । ९ नूक्-। १०-ष्यन्त् । ११ अब्रवचयत्, अह्वयन्त । १२ साम  
 १३-त् । १४ त्यरुच्यते ।

रुध्वश्शूषोऽद्रवत् (प्राणास्) ते । ते प्राणा एवोर्ध्वा अद्रवन् ॥६॥  
 सोऽसावादिसस् एष एव उदशिरेव गी चन्द्रमा एव थम् ।  
 सामान्येव उदच एव गी यजूष्येव थमित्यधिदेवतम् ॥७॥ अथा-  
 ऽध्यात्मम् । प्राण एव उद्वागेव गी मन एव थम् । स एषोऽधिदेवतं  
 चाऽध्यात्मं चोद्गीथः ॥८॥ स य एवमेतदधिदेवतं चाऽध्यात्मं  
 चोद्गीथं वेदैतेन हास्य सर्वेणोद्गीतम्भवसेतस्मादु एव सर्वस्मादा-  
 वृश्च्यते य एवं विद्रांसमुपवदति ॥९॥ १।५७।

अष्टादशेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तद्यदिदमाहुः क उदगासीरिति क एतमादिसमगासीरिति  
 ह वा एतत्पृच्छन्ति ॥१॥ एतं ह वा एतं त्रय्या विद्यया गायन्ति ।  
 यथा वीणागायिनो गापयेयुरेवम् ॥२॥ स एष हृदः कामानाम्पूर्णो  
 यन्मनः । तस्यैषा कुल्या यद्वाक् ॥३॥ तद्यथा वा अपा हृदात्कु-  
 ल्ययोऽपरामुपनयन्स्वेवमेवैतन्मनसोऽधि वाचोद्गाता यजमानम्  
 यस्य कामान् प्रयच्छति ॥४॥ स य उद्गातारं दक्षिणाभिराराधयति

१५ चु- । १६ द्र- । १७ ऽद्धा- । १८ गाथ- । १९-गीथ- ।  
 २० भवत्येति, भवन्ति ॥

१-सी । २ प्रच्छन्त्य् । ३ नृत्या । ४-गायिनो, गायय्- । ५ हृद्- ।  
 ६ कूल- । ७ यत् । ८ वात् । ९-त्र । १० अदो । ११-यन्त्य्, -यन्ते,  
 -यन्त्य् । १२-ना । १३ दक्षिणोभि । १४ राध- ।

तं सा कुल्योऽपधावति । य उ एनं नाऽऽराधयति स उ तामपि-  
 हन्ति ॥५॥ अथ वा अतः<sup>१५</sup> प्रत्तिश्चैव<sup>१६</sup> प्रतिग्रहश्च । तद्रूमामिति<sup>१७</sup> वै  
 प्रदीयते । तद्वाचा यजमानाय प्रदेयम्नसाऽऽत्मने<sup>१८</sup> । तथा ह सर्वं  
 न प्रयच्छति ॥६॥ तद्यदिदं सम्भवतो रेतोऽसिच्यत<sup>१९</sup> तदशयत्<sup>२०</sup> ।  
 यथा हिरण्यमविकृतं<sup>२१</sup> लेलायदेवम् ॥७॥ तस्य सर्वे देवा ममात्विन  
 आसन्मम ममेति । तेऽब्रुवन्वीदं करवामहा इति । तेऽब्रुवञ्छ्रेयो वा<sup>२२</sup>  
 इदमस्मत् । आत्मभिरेवैनद्विकरवामहा इति ॥८॥ तदात्मभिरेव  
 व्यकुर्वत । तेषां वायुरेव हिङ्गार आसाऽग्निः प्रस्ताव इन्द्र आदि-  
 स्सोमवृहस्पती उद्गीथोऽश्विनौ प्रतिहारो विश्वे देवा उपद्रवः<sup>२३</sup>  
 प्रजापतिरेव निधनम् ॥९॥ एता वै सर्वा देवता एता हिरण्यम्<sup>२४</sup> ।  
 अस्य सर्वाभिर्देवताभिस्स्तुतम्भवति य एवं वेद । एताभ्य उ एव स  
 सर्वाभ्यो देवताभ्य आटृश्च्यते य एवं विद्रांसमुपवदति ॥१०॥ १।५८॥

अष्टादशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

अथ ह ब्रह्मदत्तश्चैकितानेयः कुरु<sup>१</sup>जगामाऽभिप्रतारिणं<sup>२</sup> कात्त-  
 सेनिम् । स हाऽस्मै मधुपर्कं ययाच ॥१॥ अथ हास्य वै प्रपद्य<sup>३</sup> पुरो-

१५ अधः । १६ प्रतिश् । १७ धुं- । १८ आत्- । १९ सिध्य- ।  
 २० दश- । २१ अपि- , अपितृतं । २२ या । २३ सोमावृ-इ । २४ हिरण्यम् ॥

१ कू- , आरैन् । २ एक में यहां हि समाप्ति है । ३-य ।

हितोऽन्ते निषसाद शौनकः । तं हाऽनामन्व्य मधुपर्कम्पौ ॥२॥  
 तं होवाच किं विद्वाभो दालभ्याऽनामन्व्य मधुपर्कम्पिवसीति ।  
 सामवैर्यम्प्रपद्येति होवाच ॥३॥ तं ह तत्रैव पप्रच्छ यद्वा यौ  
 तद्रेत्याइति । हिङ्गारो वा अस्य स इति ॥४॥ यदग्नौ तद्रेत्याइ-  
 इति । प्रस्तावो वा अस्य स इति ॥५॥ यदिन्द्रे तद्रेत्याइति ।  
 आदिर्वा अस्य स इति ॥६॥ यत्सोमवृहस्पत्योस्तद्रेत्याइति । उद्-  
 गीथो वा अस्य स इति ॥७॥ यदश्विनोस्तद्रेत्याइति । प्रतिहारो  
 वा अस्य स इति ॥८॥ यद्विश्वेषु देवेषु तद्रेत्याइति । उपद्रवो  
 वा अस्य स इति ॥९॥ यत्प्रजापतौ तद्रेत्याइति । विधनं वा  
 अस्य तदिति होवाच । आर्षेयं वा अस्य तद्वन्धुता वा अस्य  
 सेति ॥१०॥ स होवाच नमस्तेऽस्तु भगवो विद्वानपा मधुपर्कमिति  
 ॥११॥ अथ हेतरः पप्रच्छ किं देवसं सामवैर्यम्प्रपद्येति । यद्देवसा-  
 सु स्तुवत इति होवाच तद्देवसमिति ॥१२॥ तदेतत् साध्वेव  
 प्रत्युक्तम् । व्याप्तिर्वा अस्यैषेति होवाच ब्रूहेवेति । मेदं ते नमो-  
 ऽकर्मेति होवाच । मैव नोऽतिप्राप्तीरिति ॥१३॥ स होवाचाऽप्रच्यं

४-मन्त्रः । ५ सामवैर्या, 'र' रहित । ६ तत । ७ सोमाव-  
 ८ 'द-' का पुनर्लेख । ९ नास्ति । १० अव्य । ११-वत्या ।  
 १२ सामवैर्या । १३-उत्तम ।

वाव त्वा देवतामप्रक्ष्यं वाव त्वा देवतायै देवताः । वाग्देवसं साम  
वाचो मनो देवता मनसः पशवः पशूनामोषधय ओषधीनामापः ।  
तदेतदद्भ्यो<sup>१४</sup> जातं सामाऽप्सु प्रतिष्ठितमिति ॥१४॥ १।५-६॥

अष्टादशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

देवासुरा अस्पर्धन्त । ते देवा मनसोदगायन् । तदेषामसुरा  
अभिदु<sup>२</sup>स पाप्मना समसृजन् । तस्माद्बहु किं च किं च मनसा  
ध्यायति । पुण्यं चैनेन ध्यायति पापं च ॥१॥ ते वाचोदगायन् ।  
तां तथैवाऽकुर्वन् । तस्माद्बहु किं च किं च वाचा वदति । सत्यं<sup>३</sup>  
चैनया वदसन्तं च ॥२॥ ते चक्षुषोदगायन् । तत्तथैवाऽकुर्वन्  
तस्माद्बहु किं च किं च चक्षुषा पश्यति । दर्शनीयं चैनेन पश्यत्य  
दर्शनीयं च ॥३॥ ते श्रोत्रेणोदगायन् । तत्तथैवाऽकुर्वन् । तस्माद्बहु  
किं च किं च श्रोत्रेण शृणोति । श्रवणीयं चैनेन शृणोत्यश्रवणीयं  
च ॥४॥ तेऽपानेनोदगायन् । तं तथैवाऽकुर्वन् । तस्माद्बहु किं च  
किं चाऽपानेन जिघ्रति । सुरभि चैनेन जिघ्रति दुर्गन्धि च ॥५॥  
ते प्राणेनोदगायन् । अथासुरा आद्रवँस्तथा करिष्याम इति  
मन्यमानाः ॥६॥ स यथाऽश्मानमृत्वा लोष्टो विध्वँसेतैवमेवाऽसुरा

१४ भ्यो ।

१ ऽगाय- २-द्रक्ष्य अथवा-द्रत्य । ३-क्षज्- ४ व । ५ कूर-  
६-स्य । ७ वै । ८ नास्ति । ९-गात् ।



व्यध्वँसन्तं<sup>१०</sup> । स एषोऽश्माऽऽखणं<sup>११</sup> यत्प्राणः ॥७॥ स यथाऽश्मान-  
माखणमृत्वा<sup>१२</sup> लोष्टो विध्वँसत एवमेव स विध्वँसते य एवं विद्राँ-  
समुपवदति ॥८॥ १।६०॥

अष्टादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । अष्टादशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

[ इति प्रथमोऽध्यायः । ]

—:०:—

---

१० सते, पन्ता । ११-शो । १२ आणोम ।

# [ अथ द्वितीयोऽध्यायः । ]

देवानां वै षडुद्गातार आसन् वाक् च मनश्च चक्षुश्च  
 श्रोत्रं चाऽपानश्च प्राणश्च ॥१॥ तेऽध्रियन्त तेनोद्गात्रा दीक्षामहै  
 येनाऽपहस्य मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमियामेति ॥२॥ तेऽब्रुवन्  
 वाचोद्गात्रा दीक्षामहा इति । ते वाचोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव  
 वाचा वदति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥३॥  
 तां<sup>१</sup>पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव वाचा पापं वदति स एव स  
 पाप्मा ॥४॥ तेऽब्रुवन् न वै नोऽयम<sup>२</sup> मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीत् ।  
 मनसोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥५॥ ते मनसोद्गात्राऽदीक्षन्त । स  
 यदेव मनसा ध्यायति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवे-  
 भ्यः ॥६॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव मनसा पापं ध्यायति  
 स एव स पाप्मा ॥७॥ तेऽब्रुवन् नो<sup>३</sup> न्वाव नोऽयम<sup>४</sup> मृत्युं न  
 पाप्मानमसवाक्षीत् । चक्षुषोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥८॥ ते चक्षुषो-  
 द्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव चक्षुषा पश्यति तदात्मन आगायदथ य  
 इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥९॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव  
 चक्षुषा पापमपश्यति ( स एव स पाप्मा ) ॥१०॥ तेऽब्रुवन् नो<sup>५</sup> न्वाव

१-म । २ 'य' अधिक है । ३-त्यु । ४ ब्रवीन् । ५ न्व । ६ अवत्यव्- । ७-मान्- ।

नोऽयममृत्युं न पाप्मानमखवाक्षीत् । श्रोत्रेणोद्गात्रा दीक्षामहा इति  
 ॥१.१॥ ते श्रोत्रेणोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव श्रोत्रेण शृणोति  
 तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥१.२॥ तत्पाप्मा-  
 ऽन्वसृज्यत । स यदेव श्रोत्रेण पापं शृणोति स एव स पाप्मा  
 ॥१.३॥ तेऽब्रुवन्नो न्वाव नोऽयममृत्युं न पाप्मानमखवाक्षीत् ।  
 अपानेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१.४॥ तेऽपानेनोद्गात्राऽदीक्षन्त ।  
 स यदेवाऽपानेनाऽपानिति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामा-  
 स्तान्देवेभ्यः ॥१.५॥ तम्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेवाऽपानेन पापं  
 गन्धमपानिति स एव स पाप्मा ॥१.६॥ तेऽब्रुवन्नो न्वाव नोऽय-  
 ममृत्युं न पाप्मानमखवाक्षीत् । प्राणेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१.७॥  
 ते प्राणेनोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव प्राणेन प्राणिति तदात्मन  
 आगायदथ इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥१.८॥ तम्पाप्मानाऽन्वसृज्यत ।  
 न ह्येतेन प्राणेन पापं वदति न पापं ध्यायति न पापमपश्यति न  
 पापं शृणोति न पापं गन्धमपानिति ॥१.९॥ तेनाऽपहस्य मृत्युमपहस्य  
 पाप्मानं रूग्ं लोकमायन् । अपहस्य हैव मृत्युमपहस्य पाप्मानं रूग्ं  
 लोकमेति य एवं वेद ॥२.०॥ २।१॥

प्रथमेऽनु राके प्रथमः खण्डः ।

सा या सा वागासीत्सोऽधिरभवत् ॥१॥ अथ यत्तन्मन  
 आसीत् स चन्द्रमा अभवत् ॥२॥ अथ यत्तच्चक्षुरासीत् स  
 आदिसोऽभवत् ॥३॥ अथ यत्तच्छ्रोत्रमासीत्ता इमा दिशोऽभवन् ।  
 ता उ एव विश्वे देवाः ॥४॥ अथ यस्सोऽपान आसीत्स बृहस्पतिरभवत् ।  
 यदस्यै वाचो बृहस्यै पतिस्तस्माद्बृहस्पतिः ॥५॥ अथ यस्स प्राण  
 आसीत्स प्रजापतिरभवत् । स एष पुत्री प्रजावानुद्गीयो यः प्राणः ।  
 तस्य स्वर एव प्रजाः । प्रजावान्भवति य एवं वेद ॥६॥ तंहैतमेके  
 प्रसक्तमेव गायन्ति प्राणा ३ प्राणा ३ प्राणा ३ हुम्भा ओवा इति ॥७॥  
 तदु होवाच शात्र्यायनिस्तत एतमर्हति प्रसक्तं गातुम् । यद्वा  
 वाचा करोति तदेतदेवाऽस्य कृतम्भवतीति ॥८॥ अथ वा अत  
 ऋक्साम्नोरेव प्रजातिः । स यद्धिङ्गुरोसभ्येव तेन क्रन्दति । अथ  
 यत्प्रस्तौस्यैव तेन प्लवते । अथ यदादिमादत्ते रेत एव तेन सिञ्चति ।  
 अथ यदुद्गायति रेत एव तेन सिक्तं सम्भावयति<sup>५</sup> । अथ यत्प्रति-  
 हरति रेत एव तेन सम्भूतम्प्रवर्धयति । अथ यदुपद्रवति रेत एव  
 तेन प्रवृद्धं विशरोति । अथ यन्निधनमुपैति रेत एव तेन विकृतम्प्रज-

१ यत् । २ अतम्, अथ । ३ कुर्वति । ४ ए । ५-भेव्-, नास्ति  
 भति । अथ यत्प्रतिहरति ।

नयति । सैर्ष्वसाम्नाः प्रजातिः ॥६॥ स य एवमेतामृक्साम्नोः  
प्रजातिं वेद प्र हैनमृक्सामनी जनयतः ॥१०॥ २।२॥

प्रथमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । प्रथमेऽनुवाकस्तुमाहः ॥

—————:०:—————

एष एवेदमग्र आसीद्य<sup>१</sup> एष तपति । स एष सर्वेषाम्भूतानां  
तेजो हर इन्द्रियं वीर्यमादायोर्ध्व उदक्रामव ॥१॥ सोऽकामयते-  
कमेवाऽक्षरं स्वादु मृदु<sup>३</sup> देवानां वनामैति<sup>५</sup> ॥२॥ स तपोऽतप्यत ।  
स तपत्स्यैकमेवाऽक्षरमभवत् ॥३॥ तं देवाश्चर्वयश्चोपसमैप्सन् ।  
अथैषोऽसुरान्भूतहनोऽसृजतैतस्य पाप्मनोऽनन्वागमाय ॥४॥ तं  
वाचोपसमैप्सन् । ते वाचं समारोहन् । तेषां वाचन्पर्यादत्त ।  
तस्मात्पर्यादत्ता वाक् । सखं च ह्येनया वदखनृतं च ॥५॥ तम्म-  
नसोपसमैप्सन् । ते मनस्समारोहन् । तेषाम्मनः पर्यादत्त ।  
तस्मात्पर्यादत्तम्मनः[ः]स् । पुण्यं च ह्येनेन ध्यायति पापं च ॥६॥  
तं चक्षुसोपसमैप्सन् । ते चक्षुस्समारोहन् । तेषां चक्षुः पर्यादत्त ।  
तस्मात्पर्यादत्तं चक्षुः । दर्शनीयं च ह्येनेन पश्यत्यदर्शनीयं च ॥७॥

६ साम्नोः, कसाम्नोः ।

१ स । २-या । ३ मृदु । ४ नास्ति । ५ एति । ६ ऐवा ।  
७ ' उदेवानाम् ' पूर्व से पुनः द्वै । ८ पर्य्यत्तं ।

तं श्रोत्रेणोपसमैप्सन् । ते श्रोत्रं समारोहन् । तेषां श्रोत्रम्पर्यादत्त ।  
 तस्मात्पर्यात्तं श्रोत्रम् । श्रवणीयं चेनेन शृणोत्यश्रवणीयं च ॥८॥  
 तमपानेनोपसमैप्सन् । तेऽपानं समारोहन् । तेषामपानम्पर्यादत्त ।  
 तस्मात्पर्यात्तोऽपानः । सुरभि च ह्येनेन जिब्रति दुर्गन्धि च ॥९॥  
 तन्ग्राणेनोपसमैप्सन् । तन्ग्राणेनोपसमाप्सुवन् ॥१०॥ अथाऽसुरा  
 भूतहन आद्रवन्मोहयिष्याम इति गन्दमानाः ॥११॥ स यथा-  
 ऽऽमान्मृत्ना लोष्टो विध्वंसतैवमेवाऽसुरा व्यध्वंसन्त । स एषोऽऽमा-  
 ऽऽखणो यत्प्राणः ॥१२॥ स यथाऽऽमानमारुह्यमृत्ना लोष्टो  
 विध्वंसत एवमेव स विध्वंसते य एवं विद्रांसमुपवदति ॥१३॥ २।३॥

४ तीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स एष वशी दीप्ताग्र उद्गीथो यत्प्राणः<sup>१</sup> । एष हीदं सर्वं वशेकुरुते  
 ॥१॥ वशी भवति वशे<sup>२</sup> स्वान्कुरुते य एवं वेद । अस्य ह्यसावग्रे  
 दीप्यते<sup>३</sup> अमुष्य<sup>४</sup> वासः ॥२॥ तं हेतमुद्गीथं शाश्वत्यायनिराचष्टे वशी  
 दीप्ताग्र इति । दीप्ताग्रा ह वा अस्य कीर्तिर्भवति य एवं वेद ॥३॥  
 आभूतिरिति कारीरादयः प्राणं वा अनुप्रजाः पशव आभवन्ति ।  
 स य एवमेतमाभूतिरित्नुपास्त एव प्राणेन प्रजयापशुभिर्भवति ॥४॥

६ पर्यात्त, पर्याप्तं ।

१ एषां त हृदं सर्वं वशेकुरुते ऐसा पाठ दंते हैं । २-शो ।

३ ऽमुष्-। ४ अतः ।

सन्भूतिरिति सात्ययज्ञयः । प्राणं वा अनुप्रजाः पशवस्सम्भवन्ति ।  
 स य एवमेतं सन्भूतिरित्युपास्ते समे [व] प्राणेन प्रजया पशुभि-  
 र्भजति ॥२॥ प्रवृत्तिरिति शेट् ॥ प्राणं वा अनुप्रजाः पशवः  
 प्रभवन्ति । स य एवमेतन्नभूतिरित्युपास्ते प्रैव प्राणेन प्रजया  
 पशुभिर्भजति ॥६॥ भूतिरिति भाह्वचिन्ः । प्राणं वा अनुप्रजाः  
 पशवो भवन्ति । स य एवमेतन्नभूतिरित्युपास्ते भात्येव प्राणेन  
 प्रजया पशुभिः ॥७॥ आरोग्योऽनपरुद्ध इति पार्श्वशैलनः ।  
 एष ह्यन्यमपरुणाद्वि नैतमन्यः । एष ह वाऽस्य द्विषः तन्भ्रातृव्यम-  
 परुणाद्वि य एवं वेद ॥८॥ ॥

द्वितःयेऽनुवाके द्वितःयः खण्डः ।

एकवीर इत्यारुणोदः । एको ह्येव वीरो यत्प्राणः । आ हा  
 ऽस्यैको वीरो वायवाञ्जायते य एवं वेद ॥१॥ एकपुत्र इति चैकितानेयः ।  
 एको ह्येव पुत्रो यत्प्राणः ॥२॥ स उ एव द्विपुत्र इति । द्वौ हि  
 प्राणापानौ ॥३॥ स उ एव त्रिपुत्र इति । त्रयो हि प्राणोऽपानो  
 व्यानः ॥४॥ स उ एव चतुष्पुत्र इति । चत्वारो हि प्राणोऽपानो

५-भूर् । ६ शलि- । ७ 'प्रजया' अधिक है । ८ भूर् । ९ अ-रोद्धा ।  
 १०-णद्वि । ११ से । १२-त । १३-बन्- ।

१-ह । २ त्य । ३-णय, 'कं.' के स्थान में सर्वत्र 'एका' । ४-य ।  
 ५ द्विप्- ।

व्यानस्समानः ॥५॥ स उ एव पञ्चपुत्र इति । पञ्च हि प्राणोऽपानो  
 व्यानस्समानोऽवानः ॥६॥ स उ एव षट्पुत्र इति । षड् हि प्राणो-  
 ऽपानो व्यानस्समानोऽवान उदानः ॥७॥ स उ एव सप्तपुत्र इति  
 सप्त हीमे शीर्षण्याः प्राणाः ॥८॥ स उ एव नवपुत्र इति सप्त हि  
 शीर्षण्याः प्राणा द्वाववाञ्चौ ॥९॥ स उ एव दशपुत्र इति । सप्त-  
 शीर्षण्याः प्राणा द्वाववाञ्चौ नाभ्यां दशमः ॥१०॥ स उ एव  
 बहुपुत्र इति । एतस्य हीयं सर्वाः प्रजाः ॥११॥ एतं ह स्म वैतदुद्गीथं  
 विद्वांसः पूर्वब्राह्मणाः कामागायिन आहुः कति ते पुत्रानागास्याम  
 इति ॥१२॥ १५॥

द्विर्त्येऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

स यदि ब्रूयादेकम आगायेति प्राण उद्गीथ इति विद्वानेकमनसा  
 ध्यायेत् । एको हि प्राणः । एकोहाऽस्याऽऽजायते ॥१॥ स यदि  
 ब्रूयाद्द्वौ म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्द्वौ मनसा ध्यायेत् ।  
 द्वौ हि प्राणायानौ द्वौ हेवाऽस्याऽऽजायते ॥२॥ स यदि ब्रूयात्त्रीन्म आ-  
 गायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वांस्त्रीन्मनसा ध्यायेत् । त्रयो हि प्राणो

६-ना । ७-अभि । ८-आं । ९-वसुपुत्र । १०-यम, दयम ।  
 ११-गैत ॥

१-एक- । २-त्रयो । ३-‘व्यानः’ अधिक है । ४-‘स हेवाऽस्याऽऽजा-  
 यन्ते’ अधिक है । ५-मन ।



ऽपानोव्यानः । त्रयो हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥३॥ स यदि ब्रूयाच्चतुरो म  
 आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्रोँश्चतुरो मनसा ध्यायेत् । चत्वारो  
 हि प्राणोऽपानो व्यानस्समानः । चत्वारो हैवास्याऽऽजायन्ते ॥४॥  
 स यदि ब्रूयात्पञ्च म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्पञ्चमनसा  
 ध्यायेत् । पञ्च हि प्राणोऽपानो व्यानस्समानोऽवानः । पञ्च हैवाऽस्या  
 ऽऽजायन्ते ॥५॥ स यदि ब्रूयात् षण्म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव  
 विद्वान् षण्मनसा ध्यायेत् । षड् हैवाऽपानोव्यानस्समानोऽवान  
 उदानः । षड् हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥६॥ स यदि ब्रूयात्सप्तम आगा-  
 येति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान् सप्तमनसा ध्यायेत् । सप्त हीमे  
 शीर्षण्याः प्राणाः । सप्त हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥७॥ स यदि ब्रूयाच्चव  
 म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्चव मनसा ध्यायेत् । सप्त  
 शीर्षण्याः प्राणा द्वाववाञ्चौ । नव हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥८॥ स  
 यदि ब्रूयाद्दश म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्दश मनसा  
 ध्यायेत् । सप्त शीर्षण्याः प्राणा द्वाववाञ्चौ नाभ्यां दशमः । दश हैवा  
 ऽस्याऽऽजायन्ते ॥९॥ स यदि ब्रूयात्सहस्रम् आगायेति प्राण उद्गीथ  
 इत्येव विद्वान् सहस्रमनसा ध्यायेत् । सहस्रं हैत आदित्यरश्मयः ।  
 तेऽस्य पुत्रः । सहस्रं हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥१०॥ एवं ह वै तमुद्गीथ

नार आदृणारः कक्षीवाँस्त्रसदस्युरिति पूर्वमहाराजादश्रौत्रियास्सह-  
 स्रुत्रमुपनिषेदुः । ते ह सर्व एव सहस्रपुत्रा आसुः ॥११॥ स य एवै<sup>१३</sup>  
 वेद सहस्रं हेवाऽस्य पुत्रा भवन्ति ॥१२॥ २।६॥

द्वितीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । द्वितीयेऽनुवाकरत्नमाप्तः ।

शर्यातो<sup>१</sup> वै मानवः प्राच्यां स्थल<sup>२</sup>यामयजत<sup>३</sup> । तस्मिन् ह धूता-  
 न्युद्रीथेऽपित्वमा<sup>४</sup>परे ॥१॥ तं देवा बृहस्पतिनोद्गात्रा दीक्षामहा  
 इति पुरस्तादागच्छन्नयं त उद्गायत्विति । बम्बेना<sup>६</sup>ऽऽजद्विषेण  
 पितरो दक्षिणतो<sup>७</sup>ऽयं त उद्गायत्वित्युशनसा काव्येना<sup>८</sup>ऽसुराः  
 पश्चादयं त उद्गायत्विययास्तेना<sup>९</sup>ऽऽङ्गिरेतेन मनुष्या उत्तरतो-  
 ऽयं त उद्गायत्विति ॥२॥ स हे<sup>१०</sup> ज्ञां वके हन्तेना<sup>११</sup> पृच्छानि  
 कियतो<sup>१२</sup> वा एक ईशे कियत एकः कियत एक इति ॥३॥ स होवाच  
 बृहस्पतिं यन्मेत्वमुद्गायैः किं ततस्स्यादिति ॥४॥ स होवाच देवे-  
 ष्वेव श्रीस्स्याद्देवेष्वीशा स्वर्गमुत्वांलोकं गमयेयमिति ॥५॥ अथ  
 होवाच बन्मजद्विषन्मेत्वमुद्गायैः किं ततस्स्यादिति ॥६॥ स

१२ जेन । १३ यद् ।

१ शर्या- २ स्थलगात्र । ३ अजयत । ४ ऽपिसग्रम् ।  
 ५ परेतिरे । ६ बिम्ब- । ७ दक्षिणतो । ८ कांस्तेना । ९-रां १० इवातः ।  
 ११ अ गं ह्यस्तेन, अयं द्विष्येना । १२ क्रिय । १३-तिः । १४ 'अ म' अधिक  
 है । १५ आरित, स होवाच 'ततस्स्यादिति' ।

होवाच पितृष्वेव श्रीस्स्यात्पितृष्वीशा स्वर्गमु त्वां लोकं गमयेयमिति  
 ॥७॥ अथ होवाचोशनसं काव्यं यन्मे<sup>१६ १७</sup> त्वमुद्गायेः किं ततस्स्यादिति  
 ॥८॥ स होवाचाऽसुरेष्वेव श्रीस्स्यादसुरेष्वीशा स्वर्गमु त्वां लोकं<sup>१८</sup>  
 गमयेयमिति ॥९॥ अथ होवाचाऽयास्यमाङ्गिरसं यन्मे<sup>१९</sup> त्वमुद्गायेः किं  
 ततस्स्यादिति ॥१०॥ स होवाच देवानेव देवलोके दध्याम्मनुष्या-<sup>२०</sup>  
 न्मनुष्यलोके<sup>२१</sup> पितृन् पितृलोके नुदेयाऽस्माल्लोकादसुरान् स्वर्गमु त्वां<sup>२२</sup>  
 लोकं गमयेयमिति ॥११॥२॥७॥

तृतीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स होवाच त्वं मे भगव उद्गाय य एतस्य सर्वस्य यशो[ऽसी]ति  
 ॥१॥ तस्य हाऽयास्य एवोज्जगौ । तस्मादुद्गाता वृत् उत्तरतो  
 निवेशनं लिप्सेत । एतद् नाऽऽरुद्ध निवेशनं यदुत्तरतः ॥२॥  
 उत्तरत आगतो यास्य आङ्गिरसश्शर्यातस्य मानवस्योज्जगौ । स  
 प्राणेन देवान्देवलोके ऽधादपानेन मनुष्यान्मनुष्यलोके व्यानेन  
 पितृन् पितृलोके हिङ्गारेण वज्रेणाऽस्माल्लोकादसुराननुदत् ॥३॥  
 तान् होवाच दूरं गच्छतेति । स दूरो ह नाम लोकः । तं ह जग्मुः ।  
 त एतेऽसुरा असम्भाव्यम्पराभूताः ॥४॥ कृन्दोभिरेव वाचा

१६ य । १७ जे । १८-शाः । १९ न्वं । २०-ध्यात् । २१-तुं ।  
 २२ 'ड' अविक है । २३ है ॥

१-शस । २-तृन् । ३ असंक्षेपम्-

शर्यातिम्मानवं स्वर्गं लोकं गमयांचकार ॥५॥ ते होचुरसुरा एत तं  
वेदाम यो नोऽयामित्यमधत्तेति । तत् आगच्छन्<sup>५</sup> । तमेखाऽपश्यन् ॥६॥  
तेऽब्रुवन्नयं वा आस्य इति । यदब्रुवन्नयं वा आस्य इति तस्मादय-  
मास्यः । अयमास्यो ह वै नामैषः । तमयास्य इति परोक्षमाच-  
क्षते ॥७॥ स प्राणो वा अयास्यः । प्राणो ह वा एनान् स  
नुनुदे ॥८॥ स य एवं विद्वानुद्गायति प्राणेनैव देवान्देवलोके  
दधात्पानेन<sup>८</sup> मनुष्यान्मनुष्यलोके व्यानेन<sup>९</sup> पितॄन्<sup>२</sup> पितृलोके  
हिङ्गारेणो<sup>९</sup> वज्रेणाऽस्माल्लोकाद्विषन्तम्भ्रातृव्यं नुदते ॥९॥१०॥

तृतीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तं ह ब्रूयाद्दूरं गच्छेति । स यमेव लोकमसुरा अगच्छंस्तं ह वै  
गच्छति ॥१॥ छन्दोभिरेव वाचा यजमानं स्वर्गं लोकं गमयति ॥२॥  
ता एता व्याहृतयः<sup>३</sup> । प्रेत्येति वाग्[इति]भूर्भुवस्स्वारित्यु[उदिति] ॥३॥  
तद्यत्प्रेति तत्प्राणस्तदयं लोकस्तदिमं लोकमस्मिँलोक आभजति ॥४॥  
एत्सपानस्तदसौ लोकस्तदमुं लोकममुष्मिँलोक आभजति ॥५॥  
वागिति तद्ब्रह्म तदिदमन्तरिक्षम् ॥६॥ भूर्भुवस्स्वारिति सा त्रयी-  
विद्या ॥७॥ उदिति सोऽसावादित्यः । तद्यदुदित्युदिव श्लेष-

४ शय्या-। ५ त । ६-छस् । ७-असौ । ८ पान्-। ९ पद्विक्-।  
१०-पान् ॥

१-आ । २ स्या-। ३ सत् ।

यति ॥८॥ तद्यदेकमेवाऽभिसम्पद्यते तस्मादेकवीरः । एको ह तु  
सन्वीरो वीर्यवान् भवति । आहाऽस्यैको<sup>५</sup> वीरो वीर्यवान् जायते<sup>६</sup>  
य एवं वेद ॥९॥ तदु होवाच शाठ्यायनिर्वहुपुत्र एष उद्गीथ<sup>७</sup> इत्ये-  
वोपासितव्यम् । बहवो ह्येत आदित्य<sup>८</sup> रश्मयस्तेऽस्य पुत्राः । तस्मा-  
द्बहुपुत्र एष उद्गीथ इत्येवोपासितव्यमिति ॥१०॥२।९॥

तृतीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

देवासुरास्समयतन्तेखाहुः । न ह वै तद्देवासुरास्सम्येतिरे ।  
प्रजापतिश्च ह वै तन्मृत्युश्च सम्येताते ॥१॥ तस्य ह प्रजापतेर्देवाः  
प्रियाः पुत्रा अन्त आसुः । तेऽध्रियन्त तेनोद्गात्रा दीक्षामहै येना-  
ऽपहस मृत्युमपहस पाप्मानं स्वर्गं लोकमियामेति ॥२॥ तेऽब्रुवन्वा-  
चोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥३॥ ते वाचोद्गात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य<sup>२</sup>  
इदं वागागायद्यदिदं वाचा वदति यदिदं वाचा भुञ्जते ॥४॥  
ताम्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव वाचा पापं वदति स एव स पाप्मा ॥५॥  
तेऽब्रुवन् न वै नोऽयममृत्युं न पाप्मानमस्यवाचीत्<sup>३</sup> । मनसोद्गात्रा  
दीक्षामहा इति ॥६॥ ते मनसोद्गात्रा दीक्षन्त । तेभ्य इदम्पान

४ इत्येष-।५-ए।६-यावान्।७-ए(इत्य)।८-आदित्यंस्य।९-त ॥

१-याय । २ ' नोद्गात्रा दीक्षामहा इति ' अधिक है पर ' ते '  
और ' भ्य ' के बीच लाल रङ्ग से काटा गया है । ३ अचवत्य-।

आगायद्यदिदम्नसा ध्यायति यदिदम्नसा भुञ्जते ॥७॥ तत्पा-  
 प्माऽन्वसृज्यत । स यदेव मनसा पापं ध्यायति स एव स  
 पाप्मा ॥८॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीव ।  
 चक्षुषोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥९॥ ते चक्षुषोद्गात्राऽदीक्षन्त ।  
 तेभ्य इदं चक्षुरागायद्यदिदं चक्षुषा पश्यति यदिदं चक्षुषा  
 भुञ्जते ॥१०॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव चक्षुषा पापम्पश्यति  
 स एव स पाप्मा ॥११॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयम्मृत्युं न पाप्मा-  
 नमसवाक्षीव । श्रोत्रेणोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१२॥ ते श्रोत्रेणो-  
 द्गात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य इदं श्रोत्रमागायद्यदिदं श्रोत्रेण शृणोति  
 यदिदं श्रोत्रेण भुञ्जते ॥१३॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव  
 श्रोत्रेण पापं शृणोति स एव स पाप्मा ॥१४॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव  
 नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीव । प्राणेनोद्गात्रा दीक्षामहा  
 इति ॥१५॥ ते प्राणेनोद्गात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य इदं प्राण आगाय-  
 द्यदिदं प्राणेन प्राणिति यदिदं प्राणेन भुञ्जते ॥१६॥ तत्पाप्मा-  
 ऽन्वसृज्यत । स यदेव प्राणेन [पापं] प्राणिति स एव स  
 पाप्मा ॥१७॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीव ।  
 अनेन मुख्येन प्राणेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१८॥ तेऽनेन

मुख्येन प्राणेनोद्गात्राऽदीक्षन्त ॥१६॥ सोऽब्रवीन्मृत्युरेष एषा स  
उद्गाता येन मृत्युमसेष्यन्तीति ॥२०॥ न ह्येतेन प्राणेन पापं  
वदति न पापं ध्यायति न पापम्पश्यति न पापं शृणोति न पापं  
गन्धमपानिति ॥२१॥ तेनाऽपहस्य मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं  
लोकमाथन्<sup>५</sup> । अपहस्य हैव मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमेति य  
एवं वेद ॥२२॥२१०॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स यथा हत्वा प्रमृष्टाऽतीयादेवमेवैतम्मृत्युमत्यायन् ॥१॥  
स वाचम्प्रथमामत्यवहत् । ताम्परेण मृत्युं<sup>२</sup> न्यदधात् । सोऽग्निर-  
भवत् ॥२॥ अथ मनोऽत्यवहत्<sup>३</sup> । तत्परेण मृत्युं<sup>२</sup> न्यदधात् । स  
चन्द्रमा अभवत् ॥३॥ अथ चक्षुरत्यवहत् । तत्परेण मृत्युं<sup>२</sup> न्यदधात् ।  
स आदित्योऽभवत् ॥४॥ अथ श्रोत्रमत्यवहत् । तत्परेण  
मृत्युं<sup>२</sup> न्यदधात् । ता इमा दिशोऽभवन् । ता उ एव विश्वे देवाः  
॥५॥ अथ प्राणमत्यवहत् । तम्परेण मृत्युं<sup>२</sup> न्यदधात् । स वायुर-  
भवत् ॥६॥ अथाऽऽत्मने<sup>४</sup> केवलमेवाऽन्नाद्यमागायत् ॥७॥ स एष

७-यम् । ८ गमयन् ।

१ स अधिक है, 'अत्यायन्' के स्थान में-यत् । २-यु । ३-न् ।

४ दया ।

एवाऽयास्यः । आस्ये<sup>५</sup> धीयते<sup>६</sup> । तस्मदयास्यः । यद्वेवा<sup>७</sup> [ऽयम्]  
 आस्य<sup>८</sup> रमते तस्माद्वेवाऽयास्यः ॥८॥ स एष एवाऽऽङ्गिरसः ।  
 अतो<sup>९</sup> हीमान्यङ्गानि रसं लभन्ते । तस्मादाङ्गिरसः<sup>१०</sup> । यद्वेवैषा-  
 मङ्गानां रसस्तस्मा द्वेवाऽऽङ्गिरसः ॥९॥ तं देवा अब्रुवन् केवलं  
 वा आत्मनेऽन्नाद्यमागासीः । अनु न एतास्मिन्ननाद्य आभज<sup>११</sup> ।  
 एतदस्याऽनामयत्वमस्तीति<sup>१२ १३</sup> ॥१०॥ तं वै प्रविशतेति । स वा  
 आकाशान्<sup>१४</sup> कुरुष्वेति । स इमान् प्राणानाकाशान्<sup>१५ १६</sup> कुरुत ॥११॥  
 तं वागेव भूत्वाऽग्निः प्राविशन्मनो<sup>१८</sup> भूत्वा चन्द्रमाश्चक्षुर्भूत्वा  
 ऽऽदित्यश्चोत्रम्भूत्वा दिशः प्राणो भूत्वा वायुः ॥१२॥ एषा वै  
 दैवी परिषदैवी सभा दैवी संसत् ॥१३॥ गच्छति ह वा एतां<sup>१७</sup>  
 दैवीम्परिषदं दैवीं सभां दैवीं संसदं य एवं वेद ॥१४॥२११॥

चतुर्थेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

यत्रो ह वैक<sup>१</sup> चैता देवता निस्पृशन्ति न ह्यैव तत्र कश्चन  
 पाप्मान्यङ्गः परिशिष्यते ॥१॥ स विद्यान्नेह कश्चन पाप्मान्यङ्गः  
 परिशे<sup>२</sup>क्ष्यते सर्वमेवैता<sup>३</sup> देवताः पाप्मानं निधक्ष्यन्तीति । तथा ह्यैव

५ आसे । ६ ध्यति । ७ एगँ । ८ स्ये । ९-ंऽयास्यः । १० अङ्- ।  
 ११ अः । १२ आमयत्वम् । १३ असी । १४ आकाशात् ।  
 १५ आशासनम् । १६ कुरुत । १७ '-ं' नास्ति । १८ प्रवी- ॥

१ चे । २ क्षते । ३ एवम् । ४ एता ।



भवति ॥२॥ य उ ह वा एवंविदमृच्छति<sup>५</sup> यथैता देवता ऋत्वा  
नीयादेवं न्येति<sup>७</sup> । एतासु ह्येवेनं देवतासु प्रपन्नमेतासु वसन्तमुप-  
वदति ॥३॥ तस्य हैतस्य नैव काचनाऽऽर्तिरस्ति य एवं वेद । य  
एवैनमुपवदति स आर्तिमाच्छति<sup>९</sup> ॥४॥ स य एनमृच्छादेव तादेवता  
उपसृत्य ब्रूयादयम्माऽऽरत्<sup>११</sup> स इमामार्तिं<sup>१२</sup> न्येत्विति । तां हैवाऽऽर्ति  
न्येति ॥५॥ यावदावासा<sup>१३</sup> उ हाऽस्येमे प्राणा अस्मिँलोक एतावदा-  
वासा<sup>१३</sup> उ हाऽस्यैता देवता अमुष्मिँलोके भवन्ति ॥६॥ तस्माद्  
हैवं विद्वान्नावाऽगृहतायै<sup>१४</sup> विभीयान्नाऽलोकतायै । एता मे देवता  
अस्मिँलोके गृहान् करिष्यन्ति । एता अमुष्मिँलोके भवन्ति ।  
तस्माद् लोकम्प्रदास्यन्तीति<sup>१६</sup> ॥७॥ तस्माद् हैवं विद्वान्नावाऽगृहतायै  
विभीयान्नाऽलोकतायै । एता मे देवता अस्मिँलोके गृहेभ्यो  
गृहान् करिष्यन्ति स्वेभ्य आयतनेभ्य इति हैव विद्याद् [एता]  
देवता<sup>१८</sup> अमुष्मिँलोके लोकम्प्रदास्यन्तीति ॥८॥ तस्माद् हैवं

५-विद् वा विद । ६-दुच्छति । ७-नेति । ८-तीर् । ९-आच्छति ।  
१०-एम् । ११-रात् । १२-अत्ति । १३-दावशा । १४-ग्रह- । १५-अस्मिन् ।  
१६-प्रवदा- । १७-‘आयतनेभ्य’ अधिक है । १८-एव ता ॥

विद्वान्नैवाऽगृहतायै विभीषान्नाऽलोकतायै एता म एतदुभयं  
संनस्यन्तीति हैव विद्यात् । तथा हैव भवति ॥६॥२।१२॥

चतुर्थेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ।

देवा वै ब्रह्मणो वत्सेन<sup>१</sup> वाचमदुहन् । अग्निर्ह वै ब्रह्मणो  
वत्सः ॥१॥ सा या सावाग्रब्रह्मैव तत् । अथ योऽग्निर्मृत्युस्तः ॥२॥  
ज्ञामेतां वाचं यथा धेनुं वत्सेनोपसृज्य प्रज्ञां दुहीतैवमेव देवा वाचं  
सर्वान्कामानदुहन् ॥३॥ दुहे ह वै वाचं सर्वान्कामान्य एवं वेद ।  
स हैषोऽनानृतो वाचं देवीमुदिन्धे<sup>४</sup> वद वद वदेति ॥४॥ तद्यदिह<sup>६</sup>  
पुरुषस्य पापं कृतम्भवति तदाविष्करोति । यदिहैनदपि रहसीव  
कुर्वन्मन्यते<sup>५</sup>थ हैनदाधिरेव करोति । तस्माद्वाव पापं न  
कुर्यात् ॥५॥२।१३॥

पञ्चमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एष उ ह वाव देवानां नेदिष्ठमुपचर्यो यदग्निः ॥१॥ तं  
साधूपचरेत् । य एनमस्मिँलोके साधूपचरति<sup>१</sup> तमेषोऽमुष्मिँलोके

१ पस्तेन, पत्सेन । २ वज्र- । ३-२ । ४ जहे । ५ उद्दिग्धे ।  
६ अग्निह । ७-त । ८ अथ- । ९ 'एष उ ह वा' दूसरे अनुवाक का  
यहां अधिक है ॥

१ चरति ।

साधूपचरति । अथ य एनमस्मिलोके नाऽऽद्रियते तमेषोऽभ्युष्मि-  
लोके नाऽऽद्रियते । तस्माद्वा अग्निं साधूपचरेत् ॥२॥ तं चैव  
हस्ताभ्यां स्पृशेन्न पादाभ्यां न दण्डेन<sup>२</sup> ॥३॥ हस्ताभ्यां स्पृशति  
यदस्याऽन्तिकमवनेनिके । अथ यदभिप्रसारयति तत्पादा-  
भ्याम् ॥५॥ स एनमास्पृष्ट ईश्वरो दुर्धायां धातोः । तस्माद्वा  
अग्निं साधूपचरति । सुधायां हैवैनं दधाति ॥६॥२॥१॥४॥

पञ्चमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

एष उ ह वाव देवानाम्महाशनतमो यदाग्निः ॥१॥ तन्न  
व्रत्यमददानोऽश्रीयात् । यो वै महाशनेऽनश्रत्यश्नातीश्वारो हैनम-  
भिषङ्क्तोः<sup>३</sup> । पूतिमिव<sup>४</sup> हाऽश्रीयात्<sup>६</sup> ॥२॥ अथो ह प्रोक्तेऽशने ब्रूयात्  
समिन्त्स्वाऽग्निमिति । स यथा प्रोक्तेऽशने श्रेयाँसम्परिवेष्टवै  
ब्रूयात्तादृक्<sup>७</sup> तत् ॥३॥ एतदु ह वाव साम यद्वाक् । यो वै चक्षु-  
स्साम श्रोत्रं सामेत्युपास्ते न ह तेन करोति ॥४॥ अथ य  
आदित्यस्साम चन्द्रमास्सामेत्युपास्ते न हैव तेन करोति ॥५॥  
अथ यो वाक् सामेत्युपास्ते स एवाऽनुष्ठया साम वेदं । वाचा हि

२ तण्डेनम, तण्डेनम ।

१ प्र- । २ ददासीनो । ३ अभिष्( ष )ङ्क्ताः ।  
४-इत् । ५ इवमिव । ६ ऽग्नी- । ७ तम् । ८ ना । ९ यद् ।

साम्नाऽऽत्विज्यं क्रियते ॥६॥ स यो वाचस्वरो जायते सोऽ  
ग्निर्धाग्वेव वाक् । तदत्रैकधा साम भवति ॥७॥ स य एवमेतदे-  
कधा साम भवद्वेदैवं हैतदेकधा साम भवतीत्येकधेव श्रेष्ठस्वा-  
नाम्भवति ॥८॥ तस्मादु हैवंविदमेव साम्नाऽऽत्विज्यं कारयेत् ।  
स ह वाव साम वेद य एवं वेद ॥६॥२॥१५॥

पञ्चमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । पञ्चमोऽनुवाकरसमाप्तः ॥

## [ तृतीयोऽध्यायः । ]

एका ह वाव कृत्स्ना देवताऽर्धदेवता एवाऽन्याः । अयमेव  
योऽयम्पवते ॥१॥ एष एव सर्वेषां देवानां ग्रहाः ॥२॥ स हैषो-  
ऽस्तं नाम । अस्तमिति हेह पश्चाद्ग्रहानाचक्षते ॥३॥ स यदादिसो-  
ऽस्तमगादिति ग्रहानगादिति हैतव । तेन सोऽसर्वः । स एतमेवा-  
ऽप्येति ॥४॥ अस्तं चन्द्रमा एति । तेन सोऽसर्वः । स एतमेवाऽप्ये-  
ति ॥५॥ अस्तं नक्षत्राणि यन्ति । तेन तान्यसर्वाणि ।  
तान्येतमेवाऽपियन्ति ॥६॥ अन्वग्निर्गच्छति । तेन सोऽसर्वः । स  
एतमेवाऽप्येति ॥७॥ एषहः । एति रात्रिः । तेन ते असर्वे । ते  
एतमेवाऽपीतः ॥८॥ मुह्यन्ति दिशो न वै ता रात्रिम्प्रज्ञायन्ते ।  
तेन ता असर्वाः । ता एतमेवाऽपियन्ति ॥९॥ वर्षति च पर्जन्य  
उच्च गृह्णाति । तेन सोऽसर्वः । स एतमेवाऽप्येति ॥१०॥ क्षीयन्त  
आप एवमोषधय एवं वनस्पतयः । तेन तान्यसर्वाणि ।  
तान्येतमेवाऽपियन्ति ॥११॥ तद्यदेतत्सर्वं वायुमेवाऽप्येति तस्माद्वा-

१ पँचा । २-रः । ३-ताः । ४ तां । ५ 'स साम वेद' अधिक है ।

६ एष- , ओषा- ।

युरेव साम ॥१२॥ स ह वै सामवित्स [कृत्स्नं] साम वेद य एवं  
 वेद ॥१३॥ अथाऽध्यात्मम् । न वै स्वप्न वाचा वदति । सेयमेव  
 प्राणमप्येति ॥१४॥ न मनसा ध्यायति । तदिदमेव प्राणमप्ये-  
 ति ॥१५॥ न चक्षुषा पश्यति । तदिदमेव प्राणमप्येति ॥१६॥  
 न श्रोत्रेण शृणोति । तदिदमेव प्राणमप्येति ॥१७॥ तद्यदेतत्सर्व-  
 म्प्राणमेवाऽभिसमेति तस्मात्प्राण एव साम ॥१८॥ स ह वै  
 सामवित्स कृत्स्नं साम वेद य एवं वेद ॥१९॥ तद्यदिदमाहुर्न  
 षताऽद्य वातीति[स] हैतत्पुरुषेऽन्तर्निरमते स पूर्णस्स्वेदमान  
 आस्ते ॥२०॥ तद् शौनकं च कापेयमभिप्रतारिणं च[काक्षसेनिम्]  
 ब्राह्मणः परिवेविष्यमाणा उपावव्राज ॥२१॥३१॥

प्रथमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तौ ह विभिन्ने । तं ह नाऽऽद्वैते को वा कोवेति मन्यमानौ  
 ॥१॥ तौ होपजगौ ।

महात्मनश्चतुरो देव एकः कस्स जगार भुवनस्य गोपाः ।

तं कापेयं न विजानन्त्यकेऽभिप्रतारिन् बहुधा निविष्टम् ॥

७ ऽप्रम । ८-यति । ९-मिते । १०-गा । ११-काश् १२ विष्या-।

१३-प्राजा ॥

१ द्विम्-। २ द्वैते । ३ स्तो । ४ काक्षपेय । ५ निविष्टम् ।

इति ॥२॥ स होवाचाऽभिप्रतारीमं वाव प्रपद्य प्रतिब्रूहीति ।

त्वया वा अयम्प्रत्युच्य इति ॥३॥ तं ह प्रत्युवाच—

आत्मा देवानामुत मर्त्यानां हिरण्यदन्तो रपसो न सृजः ।

महान्तमस्य महिमानमाहुरनश्मानो यददन्तमिति ॥

इति ॥४॥ महात्मनश्चतुरो [देव] एक इति । वाग्वा अभिः ।

स महात्मा देवः । स यत्र स्वपिति तद्वाचम्प्राणो गिरति ॥५॥

मनश्चन्द्रमास्स महात्मा देवः । स यत्र स्वपिति तन्मनः प्राणो

गिरति ॥६॥ चक्षुरादित्यस्स महात्मा देवः । स यत्र स्वपिति

तच्चक्षुः प्राणो गिरति ॥७॥ श्रोत्रं दिशस्ता महात्मानो देवाः ।

स यत्र स्वपिति तच्छ्रोत्रं प्राणो गिरति ॥८॥ तद्यन्महात्मनश्चतुरो

देव एक इत्येतद्ध तद् ॥९॥ कस्स जगारेति । प्रजापतिर्वै कः । स

हैतज्जगार ॥१०॥ भुवनस्य गोपा इति । स उ वाव भुवनस्य गोपाः

॥११॥ तं कापेय न विजानन्त्येक इति । न ह्येतमेके विजानन्ति ॥१२॥

अभिप्रतारिन् बहुधा निविष्टमिति । बहुधा ह्येवैष निविष्टो यत्प्राणः

॥१३॥ आत्मा देवानामुत मर्त्यानामिति । आत्मा ह्येष देवाना-

६ म(अ)म, मा । ७ वय्या, यय्या । ८ अया । ९ वाव । १०-युञ्जे ।

११ इति । १२-याच । १३ मत्य्- । १४ परसो । १५ जु । १६ मभि- ।

१७ यदि । १८ दत्तम, दैतम । १९ अति । २० पाय्, वा । २१ या ।

२२ स्वतिपिति । २३-न, इस के पश्चात् प्रा । २४-अर् । २५ महात्मा

अधिक द्वे । २६ क । २७ सो । २८ जगैर- । २९-पद्य । ३०-अो ।

मुत मर्त्यानाम् ॥१४॥ हिरण्यदन्तो रपसो न सूनुरिति । न ह्येष  
 सूनुः । सूनुरूपा<sup>३६</sup> ह्येष सन्न<sup>३२</sup> सूनुः ॥१५॥ महान्तमस्य महिमानमा-  
 हुरिति । महान्तं<sup>३३</sup> ह्येतस्य महिमानमाहुः<sup>३४</sup> ॥१६॥ अनद्यमानो  
 यददन्तमचीति । अनद्यमानो ह्येषोऽदन्तमचि ॥१७॥१२॥

प्रथमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ॥

तस्यैष श्रीरात्मा समुद्रूढा<sup>१</sup> यदसावादिसः । तस्माद्गायत्रस्य स्तोत्रे  
 णाऽवान्यान्नेच्छ्रिया<sup>२</sup> अवच्छिद्या इति ॥१॥ स एष एवोक्तम् ।  
 यत्पुरस्तादवानिति तदेतदुक्तस्य शिरो यद्वादि ए<sup>४</sup> तरस दादिणः पत्नो  
 यदुत्तरतस्स<sup>५</sup> उत्तरः पत्नो यत्पश्चात्[तत्]पुञ्जम् ॥२॥ अथमेव  
 प्राण उक्तस्याऽऽत्मा । स य एवमेतमुक्तस्याऽऽत्मानमात्मन्प्रतिष्ठितं<sup>६</sup>  
 वेद स हाऽमुष्मिँ<sup>७</sup> लोके साङ्गस्सतनुस्[सर्वस्]सम्भवति ॥३॥  
 शश्वद् वा अमुष्मिँलोके यदिदम्गुरुषस्यऽऽरुडौ<sup>८</sup> शिश्रं कर्णौ नासिके  
 यत्किं चाऽनस्थिकं न सम्भवति ॥४॥ अथ य एवमेतमुक्तस्या-  
 ऽऽत्मानमात्मन्प्रतिष्ठितं वेद स हैवाऽमुष्मिँलोके साङ्गस्सतनुस्सर्व-  
 स्सम्भवति ॥५॥ तदेतद्रैश्वामित्रमुक्तम् । तदन्नं वै विश्वम्प्राणो मित्रम्

३१-से । ३२ नस् । ३३ स् । ३४ आहुर् । और 'इति महान्त  
 ह्येतस्य महिमाहुः' अधिक है । ३५ अन्तम् । ३६ सूनूर-॥

१ समाद्र- । २ बद्ध- । ३ वा इति । ४-इणः । ५ सद् । ६ तद् ।  
 ७ सांगतस् । ८-तद् । ९ अक्त- ।



॥६॥ तद् विश्वामित्रश्रमेण तपसा व्रतचर्येणोन्द्रस्य प्रियं धामो-  
 पजगाम ॥७॥ तस्मा उ हैतत्प्रोवाच यदिदम्मनुष्यानागतम् ॥८॥  
 तद् स उपनिषसाद ज्योतिरेतदुक्थमिति ॥९॥ ज्योतिरिति द्वे  
 अक्षरे प्राण इति द्वे अन्नमिति द्वे । तदेतदन्न एव प्रतिष्ठितम् ॥१०॥  
 अथ हैनं जमदग्निरुपनिषसादाऽऽयुरेतदुक्थमिति ॥११॥ आयुरिति  
 द्वे अक्षरे प्राण इति द्वे अन्नमिति द्वे । तदेतदन्न एव प्रतिष्ठितं ॥१२॥  
 अथ हैनं<sup>१४</sup> वसिष्ठ उपनिषसाद गौरेतदुक्थमिति । तदेतदन्नमेव ।  
 अन्नं हि गौः ॥१३॥ तदाहुर्यदस्य प्राणस्य पुरुषश्शरीरमथ केना-  
 ऽन्ये प्राणाश्शरीरवन्तो भवन्तीति ॥१४॥ स ब्रूयाद्यद्वाचा वदति  
 तद्वाचश्शरीरं यन्मनसा ध्यायति तन्मनसश्शरीरं यच्चक्षुषा पश्यति  
 तच्चक्षुषश्शरीरं यच्छ्रोत्रेण शृणोति तच्छ्रोत्रस्य शरीरम् । एवमु  
 हाऽन्ये प्राणाश्शरीरवन्तो भवन्तीति ॥१५॥३॥३॥

प्रथमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

तदेतदुक्थं सप्तविधम् । शस्यते स्तोत्रियोऽनुरूपो धाय्या-  
 प्रगाथस्सूक्तं निवित्परिधानीया ॥ १ ॥ इयमेव स्तोत्रियो

१० प्र-। ११ तद् । १२ उत्थ-। १३ (-साद ) गौर, धायुगौर ।  
 १४-व । १५ उ. उद् । १६ ऽन्येन ।

१ ऽग्निर् ४ अधिक द्वे । २-नीयम् । ३ नास्ति ।

अग्निरनुरूपो वायुर्धार्ग्याऽन्तरिक्षं प्रगाथो द्यौस्सूक्तमादित्यो निवित् ।  
 तस्माद्ब्रह्मचा उदिते निविदमधीयन्ते । आदित्यो हि निवित् ।  
 दिशः परिधानीयेत्यधिदेवतम् ॥२॥ अथाध्यात्मम् । आत्मैव  
 स्तोत्रियः प्रजाऽनुरूपः प्राणो धार्ग्या मनः प्रगाथश्शिरस्सूक्तं  
 चक्षुर्निविच्छ्रोत्रम्परिधानीया ॥३॥ तद्वैतदेके त्रिष्टुभा परिदधत्य-  
 नुष्टभैके । त्रिष्टुभात्वेव परिदध्यात् ॥४॥ तद्वैतदेके एता व्याहृती-  
 रभिव्याहृत्य शंसन्ति महान्महा<sup>९</sup> समधत्त देवो देव्या समधत्त  
 ब्रह्म ब्राह्मण्या<sup>१०</sup> समधत्त । तद्यत्समधत्त समधत्तेति ॥५॥ तस्मा-  
 दिदानीम्पुरुषस्य शरीराणि प्रतिसंहितानि । पुरुषो हेतदुक्थम्  
 ॥६॥ महान्महा समधत्तेति । अग्निर्वै महानियमेव मही ॥७॥  
 देवो देव्या समधत्तेति । वायुर्वै देवोऽन्तरिक्षं देवी ॥८॥ ब्रह्मा  
 ब्राह्मण्या समधत्तेति । आदित्यो वै ब्रह्म द्यौर्ब्राह्मणी ॥९॥ तासां  
 वा एतासां देवतानां द्र्योर्द्वयोर्देवतयोर्नव-नवाऽन्तराणि सम्पद्यन्ते ।  
 एतादिमै<sup>१५</sup> लोकास्त्रिणवा<sup>१६</sup> भवन्ति ॥१०॥ तद्ब्रह्म वै त्रिष्टुत् ।  
 तद्ब्रह्माऽभिव्याहृत्य शंसन्ति । एष उ एव स्तोमस्सोऽनुचरः ॥११॥

४ आस्या, आर्या । ५ प्राग्- । ६ धार्ग्या । ७ घात्नी- ।  
 ८ तदुक्थम् अधिक है (हाशिवे में) ? । ९-घ । १०-महा । ११ इदानी ।  
 १२-वा । १३-घौ । १४-यो । १५-घौ । १६-कौ । १७ वा । १८ सा ।

यदिममाहुरेकस्तोम इत्ययमेव योऽयम्पवते । एषोऽधिदेवतम् ।  
 प्राणोऽध्यात्मम् । तस्य शरीरमनुचरः ॥१२॥ तद्यथा ह वै मणौ  
 मणिसूत्रं सम्प्रोतं स्याद्-॥१३।३।४॥

प्रथमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

१-एवं हैतस्मिन्सर्वमिदं सम्प्रोतं गन्धर्वाप्सरसः पशवो  
 मनुष्याः ॥१॥ तद् मुञ्जस्सामश्रवसः प्रययौ । तस्मै ह श्वाजनिर्वै-  
 श्यः प्रेयाय ॥२॥ तस्य हाऽन्तरिक्षात्पतित्वा नवनीतपिण्ड उरासि  
 निपपात । तं हाऽऽदायाऽनुदर्शौ ॥३॥ ततो ह वै स्तोमं ददर्शाऽन्तरिक्षे  
 विततम्बहुशोभमानम् । तस्यो ह युक्तिं ददर्श ॥४॥ बहिष्पवमान-  
 भासद्य टीत्रं विपि प्राणय इति कुर्यात् टीत्रं गृहित्रं अपान्य इति  
 वाचा । दिदृक्षे तैवाऽक्षिभ्यं शुश्रूषे तैव कर्णाभ्याम् । स्वयामिदम्म-  
 नोयुक्तम् ॥५॥ तद्यत्र वा इषुरत्यग्रो भवति न वै स ततो  
 हिनस्ति तद् वा एतं नोपाप्नुयात् । प इत्येवाऽपान्यात् । तद्यथा  
 बिम्बेन मृगमानये देवमेवैनमेतया देवतयाऽऽनयति । स युक्तः  
 करोति । एष एवापि युक्तः ॥६॥३॥५॥

प्रथमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

१६-रन्तम् ॥

१ एवम् (एवा) के पहले पञ्चम कं० का द्वि० वाक्य । २ मौञ्ज- ३  
 साहश्- ४ तमस्मै । ५ प्रेयाय । ६ ततो ७-अ । ८-इ । ९ टीत्र, पहला  
 अक्षर ङ भी हो । १० गृहित्र । ११ अस्ति । हनस्ति । १२ यद् । १३-वा । १४-ति ॥

योऽसौ साम्नः प्रक्तिं वेद प्र हास्मै दीयते ॥१॥ ददा इति ह वा  
 अयमाग्निर्दीप्यते तथेति वायुः पवते हन्तेति चन्द्रमा ओभित्या-  
 दित्यः ॥२॥ एषा ह वै साम्नः प्रक्तिः । एतां ह वै साम्नः प्रक्तिं  
 सुदक्षिणः क्षैमिर्विदां चकार ॥३॥ तां हैतां होतुर्वाऽऽज्ये गायन्मै-  
 त्रावरुणस्य वा तां ददा तथा हन्ता हिम्भा ओवा इति ।  
 प्र ह वा अस्मै दीयते ॥४॥ [सो] ऽप्यन्यान् बहूनुपर्युपरि य  
 एवमेतां साम्नः प्रक्तिं वेद ॥५॥ य उ ह वा अबन्धुर्वन्धुमत्साम  
 वेद यत्र हाऽप्येनं न विदुर्यत्र रोषन्ति यत्र परीवचक्षते तद्वाऽपि  
 श्रैष्ठ्यमाधिपत्यमन्नाद्यम्पुरोधाम्पर्येति ॥६॥ अग्निर्ह वा  
 अबन्धुर्वन्धुमत्साम । कस्माद्वा ह्येनं दावोः कस्माद्वा पर्यादृत्य  
 मन्थन्ति स श्रैष्ठ्यायाऽऽधिपत्यायाऽन्नाद्याय पुरोधायै जायते  
 ॥७॥ स यत्र ह वा अप्येवंविदं न विदुर्यत्र रोषन्ति यत्र परीव-  
 चक्षते तद्वाऽपि श्रैष्ठ्यमाधिपत्यमन्नाद्यम्पुरोधाम्पर्येति ॥८॥ १६॥

द्वितीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स्वयमु तत्र यत्रैनं विदुः ॥१॥ सुदक्षिणो ह वै क्षैमिः प्राचीनशा-  
 लिर्जावालौ ते ह सन्नह्यचारिण आसुः ॥२॥ ते हेमे बहु जप्यस्य

१ प्रति । २ तदान्, ददान् । ३ प्रक्तिः, प्रवृत्तिः । ४ तौ ।  
 ६ 'हन्ता' अधिक है । ७ नास्ति । ८ अप्य् । ९-हून्य । १०-उप ।  
 ११-धु । १२-वा । १३ श्रेष्ठ- । १४-आये । १५ परि ॥

१-शाःलिर् । २ है ।

चाऽन्यस्य चाऽनूचिरे<sup>३</sup> प्राचीनशालिश्च<sup>४</sup> जाबालौ च ॥३॥ अथ ह  
 स्म सुदक्षिणः<sup>५</sup> क्षैमिर्यदेव यज्ञस्याञ्जो यत्सुविदितं तद् स्मैव  
 पृच्छति ॥४॥ त उ ह वा अपोदिता व्याक्रोशमानाश्चेरुश्यद्रो<sup>६ ७</sup>  
 दुरनूचान इति ह स्म सुदक्षिणं क्षैमिमाक्रोशन्ति प्राचीनशालिश्च<sup>९</sup>  
 जाबालौ च ॥५॥ स ह स्माऽऽह सुदक्षिणः क्षैमिर्यत्र भूयिष्ठाः  
 कुरुपञ्चालास्मागता भवितारस्तन्न एष संवादो नाऽनुपदष्टे शूद्रा  
 इव संवदिष्यामह इति ॥६॥ ता उ ह वै जाबालौ दिदीक्षाते शुक्रश्च<sup>११</sup>  
 गोश्रुश्च<sup>१३</sup> । तयोर्ह प्राचीनशालिर्वृत उद्गाता ॥७॥ स तद् सुदक्षिणो  
 ऽनुबुबुधे जाबालौ हाऽदीक्षिषातामिति । स ह संग्रहीतारमुवाचा-<sup>१५</sup>  
 ऽऽनयस्वाऽरे जाबालौ हाऽदीक्षिषातां तद्गमिष्याव इति ॥८॥ ३।७॥

द्वितीयेऽनुषाके द्वितीयः खण्डः ।

तस्य ह ज्ञातिका अश्रुमुखा इवाऽऽसुरन्यतरां वा  
 अयमुपागादिति ॥१॥ अथ ह स्म वै यः पुराब्रह्मवाद्यं वदत्यन्य-  
 तरामुपागादिति ह स्मेनम्मन्यन्ते । अथो ह स्मैनम्मृत्मिवैवोपासते  
 ॥२॥ तं ह संग्रहीतोवाचाऽथ यद्गवस्ते ताभ्यां न कुशलं

२ है । ३ ऽरूच-१४-शालाश् । ५-शा । ६ प्य-१-आ । ७ चोरुश ।  
 ८-आ । ९ अक्रोश-१० क्षीश । ११-पतिष्य-१२ वदी-१३-रुश ।  
 १४ प्र-१५ संसं-१६ दिदीक्ष-१७-यास्वा ॥

कथेत्थमात्थेति ॥३॥ ओमिति होवाच गन्तव्यम् आचार्यस्सुय-  
 मानमन्यतेति ॥४॥ स ह रथमास्थाय प्रधावयांचकार । तं ह स्म  
 प्रतीक्षन्ते ॥५॥ कं जानीतेति । सुदक्षिण इति । न वै नूनं स  
 इदमभ्यवेद्यादिति । स एवेति ॥६॥ स ह सोपानादेवाऽन्तर्वेद्यव-  
 स्थायोवाचाऽङ्गन्वित्थं गृहपता३ इति । तं ह नाऽनूदतिष्ठा-  
 सत् । स होवाचाऽनूत्थाता म एधि । कृष्णाजिनोऽसी[ति] ।  
 तदिमे कुरूपञ्चाला अविदुरनूत्थातैव त इति होचुः ॥७॥ तं ह  
 कनीयान्भ्रातोवाचाऽनुत्तिष्ठ । भगव उद्गातारमिति । तं हा  
 ऽनूत्तस्थौ ॥८॥ स होवाच त्रिवै गृहपते पुरुषो जायते ।  
 पितुरेवाऽग्रेऽधि जायतेऽथ मातुरथ यज्ञात् ॥९॥ त्रिवैव त्रियत  
 इति । स यद् वा एनमेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति-॥१०॥३८

द्वितीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

-तत्प्रथममिष्यते ॥१॥ अन्धमिव वै तमो योनिः । लोहि-  
 तस्तोको वा वै स तदाभवत्यपां वा स्तोकः । किं हि स तदा-  
 भवति ॥२॥ स यस्तां देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भवति या

२ त्- । ३ आचर्- । ४ सूय- । ५-ष्टम्- । ६-ऊद्धा- ।  
 ७ म् । ८ 'इति' अधिक है । ९ आतो । १० वा । ११ अनुत्तिष्ठ ।  
 १२ त्रिव् । १३ अ, ऊ । १४ नास्ति । १५ त्रियत ॥

१ अन्य- । २ वो । ३ स् ।

चैनं तम्मृत्युमतिवहति स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥३॥ अथ  
 य एनमेतदीत्तयन्ति ताद्वितीयम्भ्रयते । वपन्ति केशश्मश्रूणि ।  
 निकृन्तन्ति नखान् । प्रत्यञ्जन्त्यङ्गानि । प्रत्यचत्यङ्गुलीः ।  
 अपवृत्तोऽपवेष्टित आस्ते । न जुहोति । न यजते । न योषितं  
 चरति । अमानुषीं वाचं वदति । मृतस्य वावैषं तदा रूपम्भवति  
 ॥४॥ स यस्तां देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भवति या चैनं  
 तम्मृत्युमतिवहति स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥५॥ अथ य  
 एनमेतदस्माल्लोकात्प्रेतंचित्यामादधाति तद् तृतीयम्भ्रयते ॥६॥ स  
 यस्तां देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भवति या चैनं तम्मृत्यु-  
 मतिवहति स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥७॥ एतावद्वैवोक्त्वा  
 रथमास्थाय प्रधावयांचकार ॥८॥ तं ह जाबालम्प्रत्येतं कनीयान्  
 भ्रातोवाच काम्भवाञ्छुद्रको वाचमवादीति । हस्तिना गाधमैषी-  
 रिति ॥९॥ प्र हैवैनं तच्छ्रशंस यः कथमवोचद्गव इति । यस्त्रयाणा-  
 म्मृत्यूनां साम्नाऽतिवाहं वेद स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥१०॥३॥६॥

द्वितीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

४ चे । ५ दि-१६-अजत्य् । ७ यज्- । ८ अच- । ९ यौष्-१० स ।  
 ११ 'का' अधिक है । १२ यन्त्स् । १३-तीति । १४ वा । १५ वहतीति'  
 अधिक है । १६-वच् ॥

तं वाव भगवस्ते पितोद्गातारममन्यतेति होवाच । तदु ह  
 प्राचीनशाला विदुर्य एषामयं वृत उद्गाताऽऽस<sup>३</sup> । तस्मिन् ह ना-  
 ऽनुविदुः ॥१॥ ते होचुरनुधावत कारुडवियमिति । तं हाऽनु-  
 सस्रुः<sup>५</sup> । ते ह कारुडवियमुद्गातारं चक्रिरे ब्रह्माण्मप्राचीन-  
 शालिम ॥२॥ तं हाऽभ्यवेद्योवाचैवमेष ब्राह्मणो मोघाय  
 वादाय नाऽग्लायत् । स नाऽणु साम्नोऽन्विच्छतीति । अति हैवैनं  
 तच्चक्रे ॥३॥ स यद् वा एनमेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्च-  
 त्यादित्यो हैनं तद्योन्यां रेतो भूतं<sup>९१</sup> सिञ्चति । स हाऽस्य तत्र  
 मृत्योरीशे<sup>१२</sup> ॥४॥ अथो यदेवैनमेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति<sup>१३</sup>  
 तद् वाव स ततोऽनुसम्भवति प्राणं च । यदा ह्येव रेतस्सिक्तं  
 प्राण आविशत्यथ तत्सम्भवति<sup>१४</sup> ॥५॥ अथो यदेवैनमेतद्दीक्षयन्त्य-  
 म्रिहैवैनं तद्योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति । स हैवाऽस्य तत्र  
 मृत्योरीशे<sup>१५</sup> ॥६॥ अथो यामेवैतां वैसर्जनीयामाहुतिमध्वर्युर्जुहोति  
 तामेव स ततोऽनुसम्भवति छन्दांसि चैव<sup>१६</sup> ॥७॥ अथ य एनमे-

१-ए । २ विषुर् । ३ सः । ४ कान्त्यावयम् । ५-छः ।  
 ६ ब्राह्मणम् । ७-पेक्षया । ८ न्वीच्- । ९ रणम् । १० नास्ति । ११ रत्- ।  
 १२-ओ । १३ 'अथोवाच' अधिक है । १४ 'अथो य एनमेतद्दी-  
 क्षयन्त्य'.....'तत्रमृत्योरीशे' अधिक है । १५ 'अथो यदेवैनमे-  
 तद्दीक्षयन्ति' अधिक है । १६ आसि ।



तदस्माल्लोकात्प्रेतं<sup>१७</sup> चित्यामादधति चन्द्रमा हैवैनं तद्योन्यां रेतो  
भूतं सिञ्चति । स उ हैवाऽस्य तत्र मृत्योरीशे ॥८॥ अथो यदेवैन-  
मेतदस्माल्लोकात्<sup>१७</sup> प्रेतं चित्यामादधत्यथो या एवैता अवोत्तणी-  
या आपस्ता एव स ततोऽनुसम्भवाति प्राणम्भेव । प्राणो ह्यापः ॥९॥  
तं ह वा एवंविदुद्गाता यजमानमोमित्येतेनाक्षरेणाऽऽदित्यमृत्यु-  
मतिवहति वागित्यग्निं हुमिति वायुम्भा इति चन्द्रमसम् ॥१०॥  
तान्<sup>१९</sup> वा एतान्मृत्यून् साम्नोद्गाताऽऽत्मानं च यजमानं चाऽति-  
वहत्योमित्येतेनाक्षरेण प्राणेनाऽमुनाऽऽदित्येन ॥११॥

तस्यैष श्लोकः—

उतैषां ज्येष्ठ<sup>२०</sup> उत वा किनष्ठ उतैषाम्पुत्र उत वा पितैषाम् ।

एको ह देवो मनसि प्रविष्टः पूर्वो ह जज्ञे स उ गर्भेऽन्तः—

इति ॥१२॥ तद्यदेशोऽभ्युक्त<sup>२१</sup> इममेव पुरुषं योऽयमाच्छन्नो<sup>२२</sup>  
ऽन्तरोमित्येतेनैवाक्षरेण प्राणेनैवाऽमुनैवाऽऽदित्येन[... ] ॥१३॥३॥१०

द्वितीयेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । द्वितीयोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

त्रिहं<sup>२</sup> वै पुरुषो अ्रियते त्रिर्जायते<sup>३</sup> ॥१॥ स हैतदेव प्रथममिन्नयते  
यद्रेतस्सिक्तं सम्भूतम्भवति । स प्राणमेवाऽभिसम्भवति । आशाम-

१७—आन् । १८—चन्तीति । १९ सा । २० ज्येष्ठ । २१ त्वु- ।  
२२ अक्षयन् ॥

१ हे । २ 'स हैतदेव प्रथममिन्नयते त्रिर्जायते' अधिक है । ३ सम्भू-

भिजायते ॥२॥ अथैतद्वितीयमिन्द्रियते यदीक्षते । स छन्दांस्येवा-  
 ऽभिसम्भवति । दक्षिणामभिजायते ॥३॥ अथैतत् तृतीयमिन्द्रियते  
 यन्मिन्द्रियते । स श्रद्धामेवाऽभिसम्भवति । लोकमभिजायते ॥४॥  
 तदेतत् व्यावृत्तायत्रं गायति । तस्य प्रथमयाऽऽवृत्तेममेव लोकं जयति  
 यदु चाऽस्मिँलोके । तदेतेन चैनम्प्राणेन समर्धयति यमभिसम्भवत्येतां  
 चाऽस्मा<sup>१०</sup> आशाम् प्रयच्छति यामभिजायते ॥५॥ अथ द्वितीययाऽऽवृत्ते-  
 दमेवाऽन्तरिक्षं जयति यदु चान्तरिक्षे । तदेतैश्चैनं छन्दोभिस्स-  
 मर्धयति यान्यभिसम्भवति । एतां चास्मै दक्षिणाम्प्रयच्छति याम-  
 भिजायते ॥६॥ अथ तृतीययाऽऽवृत्ताऽमुमेव लोकम् जयति यदु  
 चाऽमुष्मिँलोके । तदेतया चैनं श्रद्धया समर्धयति ययैवैनमेतच्छ्रद्ध-  
 याऽग्राहभ्यादधति समयमितो भविष्यतीति । एतं चास्मै लो-  
 कम्प्रयच्छति यमभिजायते ॥७॥३।१.१॥

तृतीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एतद्वै तिस्रभिरावृद्धिरिमाँश्च लोकाञ्जयत्येतैश्चैनम्भूतैस्समर्धय-  
 ति यान्यभिसम्भवति ॥१॥ अथ वा अतो हिङ्कारस्यैव । तं ह<sup>३</sup> स्वर्गे  
 लोके सन्तम्भृत्युरन्वेस<sup>५</sup>शनया ॥२॥ श्रीर्वा एषा प्रजापतिस्सान्नो

४ ओव । ५-म । ६ त्रिय- । ७-अन्ति । ८ इम-(!) । ९-मृध- ।  
 १० 'न्यभिसम्भवति' अधिक है लाल रंग से कटा हुआ । ११ घ ।  
 १२ ऽश्राव् । १३-आ ।  
 १ वोक्- । २-मृध- । ३ नास्ति । ४ सितम् । ५ अनेति । ६ धी ।

यदिङ्कारः । तमिदुद्गाता श्रिया प्रजापतिना हिङ्कारेण मृत्युमपसेध-  
 ति ॥३॥ हुम्मेत्याह माऽत्र नु गा यत्रैतद्यजमान इति हैतत् ॥४॥  
 स यथा श्रेयसा सिद्धः पापीयान् प्रतिविजते एवं हैवाऽस्मान्मृत्युः  
 पाप्मा प्रतिविजते ॥५॥ यन्मेत्याह चन्द्रमा वै मा मासः । एष  
 ह वै मा मासः । तस्मान्मेत्याह । भा इति हैतत्परोक्षेणैव । यस्मादेव  
 मेत्याह यदेव मेत्याहैवानि त्रीणि । तस्मान्मेति ब्रूयात् ॥६॥३।२२॥

तृतीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

हुम्भा इति ब्रह्मवर्चसकामस्य । भातीव हि ब्रह्मवर्चसम् ॥१॥  
 हुम्बो इति पशुकामस्य । वो इति ह पशवो वाश्यन्ते ॥२॥ हुम्  
 बगिति श्रीकामस्य । षगिति ह श्रियम्पणायन्ति ॥३॥ हुम्  
 भा ओवा इत्येतदेवोपगीतम् ॥४॥ महदिवाऽभिपरिवर्तयन् गाये-  
 दिति ह स्माऽऽह नाको महाग्रामो महानिवेशो भवतीति । स यथा  
 स्थाणुमर्पयित्वेतरेण वेतरेण वा परियायात् तादृक्तत् ॥५॥ तदु  
 होवाच शाठ्यायनिः कस्मै कामाय स्थाणुमर्पयेत् । अथोपगीतमे-  
 वैतत् । नैवैतदाद्रियेतेति ॥६॥ [इति] नु हिङ्काराणाम् । अथ वा

७ एद् । ८ ' इति ' अधिक है । ९-विच- । १० ए एवम् ।  
 ११ भाग । १२ ऐव ॥

१ वो । २ श्रिङ्क-सु । ३-भा, अयित्वा । ४-रेव । ५-पर्व्या-  
 ६-ईत् । ७-आद्- । ८-हिङ्कार- ।

अतो निधनमेव । औवा इति द्वे अक्षरे । अन्तो वै साम्नो निधन-  
मन्तस्वर्गो लोकानामन्तो ब्रह्मस्य विष्टपम् ॥७॥ तमेतदुद्गाता  
यजमानमोमिसेतेनाक्षरेणान्ते स्वर्गे लोके दधाति ॥८॥ य उ  
ह वा अपत्तो वृक्षाग्रं गच्छसव वै स ततः पद्यते । अथ यद्वै पत्नी  
वृक्षाग्रे यदसिधारायां यत्तुरधारायामास्ते न वै स ततोऽवपद्यते ।  
पत्ताभ्यां हि संयत आस्ते ॥९॥ तमेतदुद्गाता यजमा-  
नमोमिसेतेनाक्षरेण स्वरपत्तं कृत्वाऽन्ते स्वर्गे लोके दधाति । स  
यथा पक्ष्यविभ्यदासीतैवमेव स्वर्गे लोकेऽविभ्यदास्तेऽथाऽऽचरति  
॥१०॥ ते ह वा एते अक्षरे देवलोकश्चैव मनुष्यलोकश्च । आदि-  
त्यश्च ह वा एते अक्षरे चन्द्रमाश्च ॥११॥ आदित्य एव देवलोक-  
श्चन्द्रमा मनुष्यलोकः । ओमित्यादित्यो वागिति चन्द्रमाः ॥१२॥  
तमेतदुद्गाता यजमानमोमिसेतेनाक्षरेणाऽऽदित्यं देवलोकं गमय-  
ति । १३॥१३॥

तृतीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

तं हाऽऽगतम्पृच्छति कस्त्वमसीति । स यो ह नाम्ना वा गो-  
त्रेण वा प्रब्रूते तं हाऽऽह यस्तैऽयम्मय्यात्माऽभूर्देव ते स इति ॥१॥

तस्मिन् हाऽऽत्मन् प्रतिपत् । तमृतवस्सम्पदार्यपदग्रहीतमपकर्षन्ति ।  
 तस्य हाऽहोरात्रे लोकमाप्नुतः ॥२॥ तस्मा उ द्वैतेन<sup>३</sup> प्रब्रुवीत<sup>४</sup> को-  
 ऽहमस्मि सुवस्वम् । स त्वां स्वर्ग्यं<sup>५</sup> स्वरगामिति ॥३॥ को ह वै  
 प्रजापतिरथ हैवंविदेव सुवर्गः । स हि सुवर्गच्छति ॥४॥ तं हा-  
 ऽऽह यस्त्वमसि सोऽहमस्मि योऽहमस्मि स त्वमस्येहीति ॥५॥  
 स एतमेव मुकृतरसम्प्रविशति । यदु ह वा अस्मिँल्लोके मनुष्या  
 यजन्ते<sup>६</sup> यत्साधु कुर्वन्ति तदेषामूर्ध्वमन्नाद्यमुत्सीदति । तदमुं  
 चन्द्रमसम्मनुष्यलोकम्प्रविशति ॥६॥ तस्यैदम्मानुषनिकाशन-  
 मण्डमुदरे<sup>७०</sup> ऽन्तस्सम्भवति । तस्योर्ध्वमन्नाद्यमुत्सीदति स्तनावभि<sup>७३</sup> ।  
 स यदाजायतेऽथाऽस्मै माता स्तनमन्नाद्यम्प्रयच्छति ॥७॥ अजातो  
 ह वै तावत्पुरुषो यावन्न यजते स यज्ञेनैव जायते । स यथाऽण्ड  
 म्प्रथमनिर्भिण्णमेवमेव ॥८॥ तदा तं ह वा एवंविदुद्राता यज-  
 मानमोमित्येतेनाऽत्तरेणाऽऽदित्यं देवलोकं गमयति । वागि-  
 त्यस्मा उत्तरेणाऽत्तरेण चन्द्रमसमन्नाद्यमदितिम्प्रयच्छति ॥९॥  
 अथ यस्यैतदविद्वानुद्रायति न हैवैनं देवलोकं गमयति नो

२ त । ३ तेन । ४-ब्रव्-, -वीत् । ५-गम । ६ सुस्वर्-, -म ।  
 ७ जायन्ते । ८-स- । ९-यै । १०-य-निक्-इसके पश्चात् 'इदम' । ११ अदरे ।  
 १२-ब्रव्- । १३-नाच् । १४ जायते । १५-स । १६-यच्छिति । १७ ना ।

एनमन्नाद्येन समर्धयति<sup>१८</sup> ॥१०॥ स यथाऽण्डं विदिग्धं<sup>१९</sup> शयीता-  
 ऽन्नाद्यमलभमानमेवमेव विदिग्धश्चेत्तेऽन्नाद्यमलभमानः<sup>२०</sup> ॥११॥  
 तस्माद्दु हेवंविदमेवोद्गापयेत् ॥ एवंविदिहैवोद्गातरिति हृतः  
 प्रतिगृणुयात् ॥१२॥१३॥१४॥<sup>२१</sup>

तृतीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

—:०:—

वागिति हेन्द्रो विश्वामित्रायोक्थमुवाच । तदेतद्विश्वामित्रा  
 उपासते वाचमेव ॥१॥ मनुर्हं वसिष्ठाय ब्रह्मात्ममुवाच । तस्मादा-  
 हुर्वासिष्ठमेव ब्रह्मोति ॥२॥ तद्दु वा आहुरेवंविदेव ब्रह्मा । क उ  
 एवंविदं वासिष्ठमर्हतीति ॥३॥ प्रजापतिः प्राजिजनिषत् । स  
 तपोऽतप्यत् । स ऐक्षत इन्त नु प्रतिष्ठां जनये<sup>३</sup> ततो याः प्रजास्त्रक्ष्ये  
 ता एतदेव प्रतिष्ठास्यन्ति चाऽप्रतिष्ठाश्चरन्तीः प्रदधिष्यन्त इति ॥४॥  
 स इमं लोकमजनयदन्तरिक्षलोकममुं<sup>५</sup> लोकमिति । तानिमौखी-  
 ल्लोकाञ्जनयित्वाऽभ्यश्राम्यत् ॥५॥ तान् समतपत् । तेभ्यस्संतप्ते-  
 भ्यस्त्रीणि शुक्राण्युदायन्नाग्निः पृथिव्या वायुरन्तरिक्षादादिसो  
 दिवः ॥६॥ स एतानि शुक्राणि पुनरभ्येवाऽतपत् । तेभ्यस्संतप्तेभ्य

१८-सृध्-। १९-आ । २०-आः । २१-शृणु-॥

१ है । २ उत्थ- । ३ जाये, जनये । ४ ऋक्- । ५ ताम् । ६-मु ।

७ सम्भवं । ८ स्स । ९-त् ।

स्त्रीरयेव शुक्रायुदायन्तृग्वेद एवाऽग्नेर्यजुर्वेदो वायोस्सामवेद  
 आदिसात् ॥७॥ स एतानि शुक्राणि पुनरभ्येवाऽतपत् । तेभ्यं-  
 संसतमेभ्यस्त्रीरयेव शुक्रायुदायन्भूरिक्षेवर्वेदाद्भुव इति यजुर्वेदा-  
 त्स्वरिति सामवेदात्तदेव ॥८॥ तद्ध वै त्रय्यै विद्यायै शुक्रम् ।  
 एतावदिदं सर्वम् । स यो वै त्रयीं विद्यां विदुषो लोकस्सोऽस्य  
 लोको भवति य एवं वेद ॥९॥३।१५॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अयं वाव यज्ञो योऽयम्पवते । तस्य वाक् च मनश्च वर्तन्यौ ।  
 वाचा च ह्येष एतन्मनसा च वर्तते ॥१॥ तस्य होताऽध्वर्युरुद्राते-  
 सन्यतरां वाचा वर्तनिं संस्कुर्वन्ति । तस्मात्ते वाचा कुर्वन्ति ।  
 ब्रह्मैव मनसाऽन्यतराम् । तस्मात्स तूष्णीमास्ते ॥२॥ स यद्ध सो-  
 ऽपि स्तूयमाने वा शस्यमाने वा वावद्यमान आसीताऽन्यतरामेवा-  
 ऽस्यापि तर्हि स वाचा वर्तनिं संस्कुर्यात् ॥३॥ स यथा पुरुष  
 एकपाद्यन् भ्रेषन्नेति रथो वैक्वचक्रो वर्तमान एवमेव तर्हि यज्ञो  
 भ्रेषन्नेति ॥४॥ एतद्ध तद्विद्वान् ब्राह्मण उवाच ब्रह्माणम्पातरनु-

षाक उपाकृते<sup>५</sup> वा वद्यमानमासीनमर्थं<sup>६</sup> वा इमे तर्हि यज्ञस्याऽन्तर-  
 गुरिति । अर्थं<sup>६</sup> हि ते तर्हि यज्ञस्याऽन्तरीयुः<sup>७</sup> ॥५॥ तस्माद्ब्रह्मा  
 प्रातरनुवाक उपाकृते वाचयम आसीताऽऽपरिधानीयाया आ वषट्  
 कारादितरेषां स्तुतशस्त्राणामेवाऽऽसंस्थायै पवमानानाम् ॥६॥  
 स यथा पुरुष उमया<sup>११ १२</sup> पाद्यन् श्रेषं न न्येति रथो<sup>१३</sup> बोभयानक्रो-  
 वर्तमान एवमेतर्हि यज्ञो श्रेषं न न्येति ॥७॥३।१६॥

चतुर्थेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

स यदि यज्ञ ऋक्तो श्रेषन्नियाद्ब्रह्मणे प्रब्रूतेत्याहुः । अथ यदि  
 यजुष्टो ब्रह्मणे प्रब्रूतेत्याहुः । अथ यदि सामतो ब्रह्मणे प्रब्रूतेत्याहुः ।  
 अथ यद्यनुपस्मृतात् कुत इदमजनीति ब्रह्मणे प्रब्रूतेत्येवाऽऽहुः ॥१॥  
 स ब्रह्मा प्राङ् उदेत् स्रवेणाऽऽग्नीध्र आज्यं जुहुयाद्भुवस्स्वरिले-  
 ताभिर्व्याहृतिभिः ॥२॥ एता वै व्याहृतयस्सर्वप्रायश्चित्तयः । तद्यथा  
 लवणेन सुवर्णं संदध्यात् सुवर्णेन रजतं रजतेन त्रपु त्रपुणा  
 लोहायसं लोहायसेन कार्ष्णायसं कार्ष्णायसेन दारु दारु च चर्म

५-ओ । ६ 'आस्र-' द्विवार पढ़ा गया है । ७-न । ८-गु-  
 कर । ९-ऽन्तर्युः । १०-अ । ११-पाद् । १२ यद् । १३ नै ॥

१ ई- । २-पो । ३ रथ । ४ प्रन्द, प्रा । ५ विदध्- । ६-पुं

७ कर-



च श्लेष्मणैवमेवैवं विद्वाँस्तत्सर्वं भिषज्यति ॥३॥ तदाहुर्यदहौषीन्मे  
 ग्रहान्मेऽग्रहीदित्यध्वर्यवे दक्षिणानयन्संशंसिन्मे वषट् अकर्म इति  
 होत्र उदगासीन्म इत्युद्गात्रेऽथ किं चक्रुषे ब्रह्मणे तूष्णीमासीनाय  
 समावतीरेवेतरे<sup>१२</sup> ऋत्विग्भिर्दक्षिणा नयन्तीति ॥४॥ स ब्रूयादर्ध-  
<sup>१३ १४ १५ १६</sup>  
 भाग्व वै स यज्ञस्याऽर्धं ह्येष यज्ञस्य वहतीति । अर्धा ह स्म वै  
 पुरा ब्रह्मणे दक्षिणा नयन्तीति । अर्धा इतरेभ्य ऋत्विग्भ्यः ॥५॥  
 तस्यैष श्लोको—

मयीदम्नये भुवनादि सर्वम्, मयि लोका मयि दिशश्चतस्रः ।

<sup>१७</sup>  
 मयीदम्नये निमिषद्यदेजति, मय्याप ओषधयश्च सर्वा, इति ॥६॥

मयीदम्नये भुवनादि सर्वमिषेवंविदं ह वावेदं सर्वम्भुवनमन्वा-  
 यत्तम् ॥७॥ मयि लोका मयि दिशश्चतस्र इषेवंविदि ह वावलोका  
 एवंविदि दिशश्चतस्रः ॥८॥ मयीदम्नये निमिषद्यदेजति मय्याप  
 ओषधयश्च सर्वा इषेवंविदि<sup>१८</sup> ह वावेदं सर्वम्भुवनम्प्रतिष्ठितम् ॥९॥  
 तस्मादु हैवंविदेमेव ब्रह्माणं कुर्वीत । स ह वाव<sup>१९</sup> ब्रह्मा य एवं  
 वेद ॥१०॥३॥१७॥

चतुर्थेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

८ इयेष्म (संदध्यात्) ण कोष्ठ लाल रंग में कटा हुआ । ९-षप् ।  
 १० अकृण् । ११ मय् । २० 'एव' नास्ति । २१ आशांसीन् । १२-रेर् ।  
 १३-आघ् । १४ नास्ति । १५ यै । १६ ष । १७ मतिही । १८-व् । १९ षव ।

अथ वा अतस्तोमभागानामेवाऽनुमन्त्राः ॥१॥ तद्वैतदेके  
 स्तोमभागेरेवाऽनुमन्त्रयन्ते । तत्तथा न कुर्यात् ॥२॥ देवेन सवित्रा  
 प्रसूतः प्रस्तोतर्देवेभ्यो वाचमिष्येत्यु हैकेऽनुमन्त्रयन्ते सविता वै  
 देवानाम्प्रसविता सवित्रा प्रसूता इदमनु मन्त्रयामह इति वदन्तः ॥  
 बहु तथा न कुर्यात् ॥३॥ भूर्भुवस्स्वगित्यु हैकेऽनुमन्त्रयन्त एषा  
 वै त्रयीविद्या त्रय्यै वेदं विद्ययाऽनुमन्त्रयामह इति वदन्तः । तदु  
 तथा नो एव कुर्यात् ॥४॥ ओमिसेवानुमन्त्रयेत् ॥५॥ अथैष  
 वसिष्ठस्यैकस्तोमभागानुमन्त्रः । तेन हैतेन वसिष्ठः प्रजातिकामो-  
 ऽनुमन्त्रयां चक्रे देवेन सवित्रा प्रसूतः प्रस्तोतर्देवेभ्यो वाचमिष्य  
 भूर्भुवस्स्वरोमिति । ततो वै स बहुः पजया पशुभिः प्राजायत ॥६॥  
 स एव तेन वसिष्ठस्यैकस्तोम भागानुमन्त्रेणाऽनुमन्त्रयेत् बहुरेव  
 प्रजया पशुभिः प्राजायते । इयं त्वेवस्थितिरोमिसेवाऽनुमन्त्रयेत्  
 ॥७॥३॥१८॥

चतुर्थेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

१ स्तोमा- २ नु । ३ कुर्वाद् । ४ रं । ५ ने ' ए ' लाल में कटा,  
 ए । ६-ई । ७ त्रय्ये । ८ ऽव । ९-याया । १०-हु । ११-जाया ।  
 १२ प्राज्- । १३ तस्तोम- । १४-येते । १५ इय । १६ पञ्चमः ।  
 १७-इता ॥

अथैष वाचा वज्रमुदगृह्णाति । यदाह सोमः पवत इति वोपावर्त-  
 ध्वमिति वा वाचैव तद्वाचो वज्रं विगृह्यते वाचस्सत्येनातिमुच्यते ।  
 तस्मादोमित्येवाऽनुमन्त्रयेत् ॥१॥ देवा वा अनया<sup>२</sup> त्रय्या  
 [ विद्यया ] सरसयोर्ध्वास्स्वर्गं लोकमुदक्रामन् । ते मनुष्या-  
 णामन्वागमाद्धिभ्यतस्त्रयं<sup>३</sup> वेदमपीलयन् ॥२॥ तस्य पीलयन्त  
 एकमेवात्तरं नाऽशक्नुवन्पीलयितुमिति यदेतत् ॥३॥ एष उ  
 ह वाव सरसः । सरसा ह वा एवंविदस्त्रयी विद्या भवति ॥४॥  
 स यां ह वै त्रय्या विद्यया सरसया जितिं जयति यामृद्धिमृध्नोति  
 जयति तां जितिमृध्नोति तामृद्धिं य एवं वेद ॥५॥ एतद्ध वा  
 अत्तरं त्रय्यै विद्यायै प्रतिष्ठा<sup>४</sup> । ओमिति वै होता प्रतिष्ठित ओमित्य-  
 ध्वयुरोमित्युद्गाता ॥६॥ एतद्ध वा अत्तरं वेदानां त्रिविष्टपम् ।  
 एतस्मिन्वा अत्तरं ऋत्विजो यजमानमाधाय स्वर्गे लोके समुदूहन्ति  
 तस्मादोमित्येवानुमन्त्रयेत् ॥७॥३११-६॥

चतुर्थेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

:०:

गुहासि देवोऽस्युपवा स्युप तं वायस्व योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं  
 द्विष्मः ॥१॥ महिनासि बहुलासि बृहत्यासि रोहिण्यस्यपन्नाऽसि ॥२॥

१ य । २-अं । ३ विम्-१ ४ त्रैय-१ ५ प्रतिष्ठं । ६-ए ।

१ देवास्मि । २ प्य । ३ वैयस्वि । ४ महिका ।

सम्भूर्देवोऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि  
भूयासम् ॥३॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येमि । उप ते  
ता दिशामि ॥४॥ नाम मे शरीरस्मे प्रतिष्टा मे । तन्मे त्वयि  
तन्मे मोऽपहृथा इतीमाम्पृथिवीमवोचत् ॥५॥ तमियमागतम्पृथिवी  
प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥६॥  
यद्राव मे त्वयीत्याह तद्राव मे पुनर्देहीति ॥७॥ किं नु ते मयीति ।  
नाम मे शरीरस्मे प्रतिष्टा मे । तन्मे त्वयि तन्मे पुनर्देहीति ।  
तदस्मा<sup>१४</sup> इयम्पृथिवी पुनर्ददाति ॥८॥ तामाह प्र मा वहेति ।  
किमभीति । अग्निमिति तमग्निमभिप्रवहति<sup>९</sup> ॥९॥ सोऽग्निमाहा-  
ऽभिजिदस्य<sup>१०</sup>भिजय्यासम्<sup>११</sup> । लोकाजिदसि लोकं जय्यासम् ।  
अत्तिरस्यन्नमद्यासम् । अन्नादो भवति यस्त्वैवं वेद ॥१०॥  
सम्भूर्देवोऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि  
भूयासम् ॥११॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येमि ।  
उप ते ता दिशामि ॥१२॥ तपो मे तेजो मेऽन्नस्मे वाङ् मे । तन्मे  
त्वयि । तन्मे मोऽपहृथा<sup>१२</sup> इत्यग्निमवोचत् ॥१३॥ तं तथैवाऽऽगत-

५ आभूरिति । ६ स । ७ मधी । ८ म । ९-हन्ति ।

१० 'अभिजिदस्य' दो वार आचा है । ११ जय्य-। १२-थाय ।

१३ तस्मा । १४ अस्माय ॥

मग्निः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकस्सह नावयं लोक इति ॥१४॥  
 यद्वाव मे त्वयीत्याहु तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥१५॥ किं नु ते  
 मयीति । तपो मे तेजो मेऽन्नम्मे वाङ् मे । तन्मे त्वायि । तन्मे  
 पुनर्देहीति । [तद्] अस्मा<sup>१२</sup> अग्निर्पुनर्ददाति ॥१६॥ तमाह प्र मा  
 वहेति ॥१७॥३२०॥

पञ्चमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

किमभीति । वायुमिति । तं वायुमभिप्रवहति ॥१॥ स वायु-  
 माह यत्पुरस्ताद्वासीन्द्रो राजा भूतो वासि । यदक्षिणतो वासीशानो  
 भूतो वासि । यत्पश्चाद्वासि वरुणो राजा भूतो वासि । यदुत्तरतो  
 वासि सोमो राजा भूतो वासि । यदुपरिष्ठादववासि प्रजापतिर्भूतो-  
 ऽववासि<sup>१</sup> ॥२॥ त्रासो<sup>२</sup>ऽस्येकत्रासोऽनवसृष्टो<sup>३</sup> देवानाम्बिलमप्यथा<sup>४</sup> ॥३॥  
 तव प्रजास्तवौषधयस्तवाऽऽपो विचलितमनुविचलन्ति ॥४॥ सम्भू-  
 र्देवो<sup>५</sup>ऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि  
 भूयासम् ॥५॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टानाऽहं तव ताः पर्येमि । उप  
 ते ता दिशामि ॥६॥ प्राणापाणौ मे श्रुतम्मे । तन्मे त्वयि । तन्मे  
 मोऽपहृथा इति वायुमवोचत् ॥७॥ तं तथैवागतं वायुः प्रतिनन्दत्ययं  
 ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥८॥ यद्वाव मे त्वयी-

साह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥६॥ किं नु ते मयीति । प्राणापानौ  
 मे श्रुतस्मे । तन्मे त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मै वायुः पुन-  
 र्ददाति ॥१०॥ तमाह प्र मा वहेति । किमभीति । अन्तरिक्षलोक-  
 मिति । तमन्तरिक्षलोकमभिप्रवहति ॥११॥ तं तथैवाऽऽगतमन्तरिक्ष  
 लोकः प्रति नन्दस्वयं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक  
 इति ॥१२॥ यद्वाव मे त्वयीसाह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥१३॥ किं  
 नु ते मयीति । अयस्म आकाशः स मे त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति ।  
 तमस्मा आकाशमन्तरिक्ष लोकः पुनर्ददाति ॥१४॥ तमाह प्र मा  
 वहेति ॥१५॥३।२१॥

पञ्चमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

किमभीति । दिश इति । तं दिशोऽभिप्रवहति ॥१॥ तं तथै-  
 वागतं दिशः प्रतिनन्दस्वयं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक  
 इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्विसाह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥ किं  
 नु तेऽस्मास्विति । श्रोत्रमिति । तदस्मै श्रोत्रं दिशः पुनर्ददति ॥४॥  
 ता आह प्र मा वहतेति । किमभीति । अहोरात्रयोर्लोकमिति ।  
 तमहोरात्रयोर्लोकमभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवागतमहोरात्रे प्रति-  
 नन्दतोऽयं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव

मे युवयोरिष्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तमिति ॥७॥ किं नु त आवयोरिति ।  
अक्षितिरिति । तामस्मा अक्षितिमहोरात्रे पुनर्दत्तः ॥८॥ ते आह  
प्र मा वहतमिति ॥९॥ ३१२२॥

पञ्चमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

किमभीति । अर्धमासानिति । तमर्धमासानभिप्रवहतः ॥१॥  
तं तथैवागतमर्धमासाः प्रतिनन्दन्त्ययं<sup>२</sup> ते भगवो लोकः । स ह  
नोऽयं लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्त्रिष्याह तद्वाव मे पुनर्दत्ते-  
ति ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्त्रिति । इमानि लुद्राणि पवाणि । तानि  
मे युष्मासु । तानि मे प्रति संधत्तेति । तान्यस्यार्धमासाः पुनः  
प्रति संदधति<sup>३</sup> ॥४॥ तानाह प्र मा वहतेति । किमभीति । मासा-  
निति । तम्मासानभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवागतम्मासाः  
प्रतिनन्दन्त्ययं<sup>२</sup> ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥  
यद्वाव मे युष्मास्त्रिष्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥७॥ किं नु तेऽस्मा-  
स्त्रिति । इमानि स्थूलानि पर्वाणि । तानि मे युष्मासु । तानि मे  
प्रति संधत्तेति । तान्यस्य मासाः पुनः प्रति संदधति ॥८॥  
तानाह प्र मा वहतेति ॥९॥ ३१२३॥

पञ्चमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

किमभीति । ऋतूनिति । तमृतूनभिप्रवहन्ति ॥१॥ तं  
 तथैवाऽऽगतमृतवः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं  
 लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति  
 ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति । इमानि ज्यायांसि पर्वाणि । तानि मे  
 युष्मासु तानि मे प्रतिसंधत्तेति । तान्यस्यर्तवः पुनः प्रतिसंधति  
 ॥४॥ तानाह प्र मा वहतेति । किमभीति । संवत्सरमिति । तं  
 संवत्सरमभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवाऽऽगतं संवत्सरः प्रतिनन्द-  
 त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे  
 त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥७॥ किं नु ते मयीति । अयम्म  
 आत्मा । स मे त्वयि तन्मे पुनर्देहीति । तमस्मा आत्मानं  
 संवत्सरः पुनर्ददाति ॥८॥ तमाह प्र मा वहति ॥९॥१२४॥

पञ्चमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः ।

किमभीति । दिव्यान् गन्धर्वानिति तं दिव्यान् गन्धर्वानभि-  
 प्रवहति ॥१॥ तं तथैवाऽऽगतं दिव्या गन्धर्वाः प्रतिनन्दन्त्ययं ते  
 भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मा-  
 स्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति ।



गन्धो<sup>२</sup> मे मोदो मे प्रमोदो मे । तन्मे युष्मासु । तन्मे पुनर्दत्तेति  
 तदस्मै दिव्या गन्धर्वाः पुनर्ददाति ॥४॥ तानाह प्र मा वहतेति ।  
 किमभीति । अप्सरस इति । तमपसरसोऽभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं  
 तथैवाऽऽगतमप्सरसः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं  
 लोक इति ॥६॥ यद्वा<sup>३</sup>व मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति  
 ॥७॥ किं नु तेऽस्मास्विति । हसो मे क्रीळा मे मिथुनम्मे । तन्मे  
 युष्मासु । तन्मे पुनर्दत्तेति । तदस्मा अप्सरसः पुनर्ददाति ॥८॥  
 ता आह प्र मा वहतेति ॥९॥३।२५॥

पञ्चमेऽनुवाके षष्ठः खण्ड ।

किमभीति । दिवमिति । तं दिवमभिप्रवहन्ति ॥१॥ तं  
 तथैवाऽऽगतं द्यौः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं  
 लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥३॥  
 किं नु ते मयीति । तृप्तिरिति । सकृत्तृप्तेव ह्येषा । तामस्मै तृप्तिं  
 द्यौः पुनर्ददाति ॥४॥ तमाह प्र मा वहतेति । किमभीति । देवानिति ।  
 तं देवानभिप्रवहति ॥५॥ तं तथैवाऽऽगतं देवाः प्रतिनन्दन्त्ययं ते  
 भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे युष्मास्वि-

२ गन्धर्वो । ३ युयद् ॥

साह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥७॥ किं नु तेऽस्मास्विति । अमृतमिति ।  
तदस्मा अमृतं देवाः पुनर्ददति ॥८॥ तानाह प्र मा वहेतेति ॥९॥ ३।२६॥

पञ्चमेऽनुवाके सप्तमः खण्डः ।

किमभीति । आदित्यमिति । तमादित्यमभिप्रवहन्ति ॥१॥ स  
आदित्यमाह विभूः पुरस्तात्सम्पत् पश्चात् । सम्यङ् त्वमसि ।  
समीचो मनुष्यानरोषी रूपतस्त ऋषिः पाप्मानं हन्ति । अपहत-  
पाप्मा भवति यस्त्वैव वेद ॥२॥ सम्भूदेवोऽसि समहम्भूयासम् ।  
आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि भूयासम् ॥३॥ यास्ते प्रजा  
उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येमि । उप ते ता दिशामि ॥४॥ ओजो  
मे बलम्मे चक्षुर्मे । तन्मे त्वयि तन्मे मोऽपहृथा इत्यादित्यमवोचत् ॥५॥  
तं तथैवाऽऽगतमादित्यः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह  
नावयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे त्वयीसाह तद्वाव मे पुनर्देही-  
ति ॥७॥ किं नु ते मयीति । ओजो मे बलम्मे चक्षुर्मे । तन्मे  
त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मा आदित्यः पुनर्ददति ॥८॥  
तमाह प्र मा वहेति । किमभीति । चन्द्रमसमिति । तं चन्द्रमसमभि-

२-दाति ॥

१-वत् । २ सम्भूदे । ३ अरोतिषि 'ति' लाळ से कटा हुआ है, ।  
। ४ त्व् । ५ एवम् । ६-भूतिर् । ७ भृतिर् । ८ ऽऽगता । ९ नास्ति ।  
१० त्वीयी, त्वी यीति । ११ चन्द्र-

प्रवहति ॥६॥ स चन्द्रमसमाह सत्यस्य पन्था न त्वा जहाति<sup>१३</sup> ।  
 अमृतस्य<sup>१४</sup> पन्था न त्वा जहाति ॥१०॥ नवो नवो भवसि जाय-  
 मानो भरो नाम ब्राह्मणं उपास्से । तस्मात्ते सत्या उभये देवमनुष्या  
 अन्नाद्यम्भरन्ति । अन्नादो भवति यस्त्वैवं वेद ॥११॥ सम्भूर्देवो-  
 ऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि  
 भूयासम् ॥१२॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येमि ।  
 उप ते ता दिशामि ॥१३॥ मनो मे रतो मे प्रजा मे पुनस्सम्भू-  
 तिर्मे<sup>१५</sup> तन्मे त्वयि तन्मे मोऽपहृथा इति चन्द्रमसमवोचत् ॥१४॥ तं  
 तथैवाऽऽगतं चन्द्रमाः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । सह नावयं  
 लोक इति ॥१५॥ यद्वाव मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥१६॥  
 किं नु ते मयीति । मनो मे रतो मे प्रजा मे पुनस्सम्भूतिर्मे<sup>१६</sup> । तन्मे  
 त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मै चन्द्रमाः पुनर्ददति ॥१७॥  
 तमाह प्र मा वहेति ॥१८॥ ३२७॥

पञ्चमेऽनुवाके ऽष्टमः खण्डः ।

किमभीति । ब्रह्मणो लोकमिति । तमादित्यमाभिप्रवहति ॥१॥  
 स आदित्यमाह प्र मा वहेति । किमभीति । ब्रह्मणो लोकमिति ।

११ चन्- १२ वा । १३-आस । १४ नास्ति, अमृतस्य पयधा  
 .....देवोऽसि समहम् । १५-ति । १६ मे, म । १७ किं नु ॥

१ प्रथमो । २ ब्राह्म-

तं चन्द्रमसमभिप्रवहति<sup>३</sup> । स एवमेते देवते अनुसंचरति<sup>४</sup> ॥२॥  
 एषोऽन्तोऽतः परः प्रवाहो नास्ति । यानु काँश्चाऽतः प्राचो लोका-  
 नभ्यवादिष्म<sup>६</sup> ते सर्व आप्ता भवन्ति ते जितास्तेष्वस्य सर्वेषु काम-  
 चारो भवति य एवं वेद ॥३॥ स यदि कामयेत पुनरिहाऽऽजाये-  
 येति यस्मिन् कुलेऽभिध्यायेद्यदि ब्राह्मणकुले यदि राजकुले  
 तस्मिन्नाजायते । स एतमेव लोकम्पुनः प्रजानन्नभ्यारोहन्नेति ॥४॥  
 तदु होवाच शाक्यायनिर्वहुव्याहितो वा अयम्बहुशो लोकः । एतस्य  
 वै कामाय नु<sup>९</sup> ब्रुवते [वा] श्राम्यन्ति वा क एतत्प्रास्य पुनरिहेया-  
 दत्रैव स्यादिति ॥५॥३।२८॥

पञ्चमेऽनुवाके नवमः खण्डः । पञ्चमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

:०:

उच्चैश्श्रवा<sup>१</sup> ह कौपयेयः<sup>२</sup> कौरव्यो राजाऽऽस । तस्य ह केशी<sup>३</sup>  
 दार्भ्यः पाञ्चालो राजा स्वस्त्रिय<sup>४</sup> आस । तौ हाऽन्योन्यस्य प्रिया-  
 वासतुः ॥१॥ स होच्चैश्श्रवाः<sup>१</sup> कौपयेयोऽस्माल्लोकात् प्रेयाय ।  
 तस्मिन् ह प्रेते केशी<sup>३</sup> दार्भ्योऽरस्ये मृगयां च वाराऽप्रिनं विनिनी-

३-अन्ति, । ४ 'एषात्यमभिप्रवहति । मा वहेऽति । किमभीऽति ।  
 ब्राह्मणां लोकमिति.....देवते अनु संचरति' अधिक है । ५ इस्मि ।  
 ६-दिष्ट । ७ तेषु । ८ 'वा' अधिक है । ९ श्रुवते । १० 'वा' अधिक है ।

१-ऐश्र- । २ कौव- । ३ केशी, केश्य । ४ स्वस्त्री- । ५ 'गा' लाज रङ्ग  
 में कटा हुआ अधिक है ।

षष्ठाणः ॥२॥ स ह तथैव पल्ययमानो मृगान् प्रसरन्<sup>६</sup> तरेणै-  
 वोच्चैश्च<sup>७</sup> कौपेयमधिजगाम ॥३॥ तं होवाच दृप्यामि स्त्री ३-  
 जानामीति । न दृप्यसीति होवाच जानासि । स एवास्मि यम्मा  
 मन्यस इति ॥४॥ अथ यद्भगव आहुरिति होवाच य आविर्भव-  
 त्यन्येऽस्य लोकमुपयन्तीत्यथ कथमशको म आविर्भवितुमिति ॥५॥  
 ओमिति होवाच यदा वै तस्य लोकस्य गोप्तारमविदेऽतस्त आवि-  
 रभूवमप्रियं चास्य विनेष्याम्यनु<sup>१०</sup> चैनं शासिष्यामीति ॥६॥ तथा  
 भगव इति होवाच । तं वै नुत्वा परिष्वजा इति । तं ह स्म  
 परिष्वजमानो यथा धूमं वापीयाद्वायुं वाकाशं वाग्न्यर्चिं वाऽपोवैवं<sup>१२</sup>  
 ह स्मैनं व्येति । न ह स्मैनम्परिष्वज्जायोपलभते ॥७॥ ३।२-६॥

षष्ठेऽनुषाके प्रथमः खण्डः ।

स होवाच यद्वै ते पुरा रूपमासीत्तत्ते रूपम् । न तु त्वा परि-  
 ष्वज्जायोपलभ इति ॥१॥ ओमिति होवाच ब्राह्मणो वै मे साम  
 विद्वान् साम्नोद्गायत् । स मेऽशरीरेण साम्ना शरीराख्यधूनोत् ।  
 तद्यस्य वै किल साम विद्वान् साम्नोद्गायति देवतानामिव सलोकतां  
 गमयतीति ॥२॥ पतङ्गः प्राजापत्य इति होवाच प्रजापतेः प्रियः

६ प्रस्त-। ७ ऽवैश्च-। ८ य । ९ अत । १० वा ।  
 ११ हे । १२ वै ॥

१ ऽव । २ ने । ३-गोयो । ४ ऽप लभते । ५-रारय्य ।

पुत्र आस । स तस्मा एतत् सामाब्रवीत् । तेन स ऋषीणामुद-  
 गायत् । त एत ऋषयो धूतशरीरा इति ॥३॥ एतेनो एव  
 साम्नेति होवाच प्रजापतिर्देवानामुदगायत् । त एत उपरि देवा  
 धूतशरीरा इति । ४॥ तस्मिन् हैनमनुशशास । तं हानुशिष्यो-  
 वाच यस्मैवैतत् साम विद्यात् स स्मैव त उद्गायत्विति ॥५॥ स  
 हानुशिष्ट आजगाम । स ह स्म कुरुपञ्चालानाम्ब्राह्मणानुपट्ट-  
 च्छमानश्चरति ॥६॥३।३०॥

षष्ठेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

व्यूहच्छन्दसा वै द्वादशाहेन यक्ष्यमाणोऽस्मि । स यौ  
 वस्तत्साम वेदं यदहं वेद स एव म उद्गास्यति । मीमांसध्वमिति  
 ॥१॥ तस्मै ह मीमांसमानानामेकश्चन [ न ] सम्प्रत्यभिदधाति  
 ॥२॥ स ह तथैव पल्ययमानश्मशाने वा वने वाऽऽवृत्तिशिया-  
 नमुपाधावयांचकार । तं ह चायमानः प्रजहौ ॥३॥ तं हो-  
 वाच कोऽसीति । ब्राह्मणोऽस्मि प्रातृदो भाल्ल इति ॥४॥ स किं  
 वेत्थेति । सामेति ॥५॥ ओमिति होवाच । व्यूहच्छन्दसा वै  
 द्वादशाहेन यक्ष्यमाणोऽस्मि । स यदि तत्साम वेत्थ यदहं वेद त्व-

६ आ । ७ तं । ८ वे । ९-ष्टा । १०-पाजे-॥

१-क्षम-। २ यदि । ३ त्वम । ४ वेत्थ । ५ श्मश्रुनाम् । ६ वावःसाध । ७ न ।  
 ८ उव, उप । ९ च्छायान, जायान । १०-क्षम-। ११ 'यदहं वेत्थ' अघिफ है ।

मेव म उद्गास्यासि । मीमांसस्वेति ॥६॥ तस्मै ह मीमांसमानस्त-  
 देव<sup>१३</sup> सम्प्रत्यभिदधौ ॥७॥ तं होवाचाऽयम्भ उद्गास्यतीति ॥८॥  
 तस्मै ह कुरुपञ्चालानाम्ब्राह्मणा असूयन्त आहुरेषु ह वा अयं<sup>१५</sup>  
 कुल्येषु सत्सूद्गास्याति । कस्मा अयमलमिति ॥ ६ ॥ अलम् न्वै<sup>१६</sup>  
 महामिति हस्माऽह । सैवाऽलम्भस्याऽलम् मतायैद्वतस्य हाऽल-  
 मैवोज्जगौ । तस्मादालम्भैलाजोद्गातेत्याख्यापयन्ति ॥१०॥११३१॥

पष्टेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

तद् सात्यकीर्ता आहुर्या वयं देवतामुपास्महे एकमेव वयं तस्यै  
 देवतायै रूपं गव्यादिशाम एकं वाहन एकं हस्तिन्येकम्पुरुष एकं  
 सर्वेषु भूतेषु । तस्या एवेदं देवतायै सर्वं रूपमिति ॥१॥ तदेतदेकमेव  
 रूपमप्राण एव । यावद्देवेव प्राणेन प्राणिति तावद्रूपमभवति तद्रू-  
 पमभवति ॥२॥ तदथ यदा प्राण उत्क्रामति दार्वेवेव भूतोऽनर्थ्यः  
 परिशिष्यते न किञ्चन रूपम् ॥३॥ तस्यान्तरात्मा तपः । तस्मा-  
 त्तप्यमानस्योष्णतरः प्राणो भवति ॥४॥ तपसोऽन्तरात्माग्निः ।  
 स निरुक्तः । तत्मात्स दहाति ॥५॥ अथाधिदेवतम् । इयमेवैषा

१२-ति से ठीक किया हुआ । १३ 'त' अधिक है । १४ नास्ति 'इति' ।  
 १५-पान्च- । १६ आसू- । १७ कुलेषु । १८ ऽगास- । १९ अर्गम । २० न्ये  
 इसके आगे 'म' लाल रंग में कटा हुआ है । २१ 'म' अधिक है । २२ एवौ ॥

१ यद् । २ एयो । ३-ए । ४-घः । ५ दति । ६-देव- । ७-ए- ।

देवता योऽयन्नापो<sup>६</sup> । तस्मिन्नेतस्मिन्नापोऽन्तः । तदन्नम् । सो-  
 ऽरून् उपासितव्यः । यदास्मिन्नापोऽन्तस्तेनाऽरून् ॥६॥ तस्या-  
 न्तरात्मा तपस् । तस्मादेष आतपत्युष्णतरः पवते ॥७॥ तपसो-  
 ऽन्तरात्मा विद्युत्वा स निरुक्तः । तस्मात्सोऽपि दहति ॥८॥ तानि  
 वा एतानि चत्वारि साम प्राणो वाङ्मनस्स्वरः । स एष प्राणो  
 वाचा करोति मनो नेत्रः । तस्य स्वर एव प्रजाः । प्रजावान्  
 भवति य एवं वेद ॥६॥३॥३२॥

षष्ठेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

स यो वायुः प्राण एव सः । योऽग्निर्वागेव सा । यश्चन्द्रमा  
 मन एव तद् । य आदित्यस्स्वर एव सः । तस्मादेतमादित्यमाहु-  
 स्स्वर एतीति ॥१॥ स यो ह वा अमूर्देवता उपास्ते या अमूरधि-  
 देवतं दूरूपा<sup>२</sup> वा एता दुरनुसम्प्राप्या<sup>३</sup> इव । कस्तद्वेद्यद्येता अनु  
 वा सम्प्राप्नुयान्न वा ॥२॥ अथ य एना अध्यात्ममुपास्ते स हा-  
 ऽन्तिदेवो भवति । निर्जीर्यन्तीव वा इत एता । [ व ] अस्य वा  
 एताश्शरीरस्य सह प्राणेन निर्जीर्यन्ति । क उ एव तद्वेद यद्येता  
 अनु वा सम्प्राप्नुयान्न वा<sup>५</sup> ॥३॥ अथ य एना उभयीरेकथा भव-

‘तानि वासितव्यां (!) नदस्मिन्नापोऽन्तस्-तस्मात्सोऽपि  
 दहति’ दोबारा आया है ॥

१ यवा । २-रूपा । ३-आपा । ४ चा । ५ वै । ६ उभेधीर ।



न्तीर्वेद स एवानुष्टुया साम वेद स आत्मानं वेद स ब्रह्मवेद ॥४॥  
 तदाहुः प्रादेशमात्राद्वा इत एता एकम्भवन्ति । अतो ह्ययम्प्राण-  
 स्स्वर्य उपर्युपरि वर्तन इति ॥५॥ अथ हैक आहुश्चतुरंगुलाद्वा इत  
 एता एकम्भवन्तीति । अतो ह्येवायम्प्राणस्स्वर्य उपर्युपरि  
 वर्तत इति ॥६॥ स एष ब्राह्मण आवर्तः । स य एवमेतम्ब्रह्मण  
 आवर्तं वेदाऽभ्येनम्प्रजाः पशव आवर्तन्ते सर्वमायुरेति ॥७॥ स  
 यो हैवं विद्वान्प्राणेन प्राणयाऽपानेनाऽपान्य मनसैता उभयोर्दे-  
 षता आत्मन्येत्य मुख आधत्ते तस्य सर्वमाप्तम्भवति सर्वं जितम् ।  
 न हास्य कश्चन कामोऽनाप्तो भवति य एवं वेद ॥८॥३१३३॥

षष्ठेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः ।

तदेतन्मिथुनं यद्वाक्च प्राणश्च । मिथुनमृक्सामे । आचतुरं  
 वाच मिथुनम्प्रजननम् ॥१॥ तद्यत्राऽद् आह सोमः पवत इति  
 वोपावर्तध्वमिति वा तत्सहैव वाचा मनसा प्राणेन स्वरेण हिङ्-  
 कुर्वन्ति । तद् हिङ्कारेण मिथुनं क्रियते ॥२॥ सहैव वाचा मनसा  
 प्राणेन स्वरेण निधनमुपयन्ति । तन्निधनेन मिथुनं क्रियते ॥३॥  
 तत्सप्तविधं साम्नः । सप्तकृत्व उद्गाताऽऽत्मानं च यजमानं च  
 शरीरात्प्रजनयति ॥४॥ यादृशस्यो ह वै रेतो भवति तादृशं

७-अ । ८ स्वय्य । ९-रि (!) । १०-ल इद् । ११ ब्रह्मण ॥

१ पाप । २-कार । ३-आ ।

सम्भवति यदि वै पुरुषस्य पुरुष एव यदि गोगैरेव यद्यश्वस्याश्व  
 एव यदि मृगस्य मृगएव । यस्यैव रेतो भवति तदेव सम्भवति ॥५॥  
 तद्यथा हे वै सुवर्णं हिरण्यमग्नौ प्रास्यमानं कल्याणतरं कल्याण-  
 तरम्भवति एवमेव कल्याणतरेण कल्याणतरेणात्मना सम्भवति  
 य एवं वेद ॥६॥ तदेतदृचाभ्यनूच्यते ॥७॥ ३।३४॥

षष्ठेऽनुवाके षष्ठः खण्डः ।

पतङ्गमक्तमसुरस्य मायया हृदा पश्यन्ति मनसा  
 विपश्चितः । समुद्रे अन्तः कवयो विचक्षते मरीची-  
 नाम्पदमिच्छन्ति वेधस इति ॥१॥ पतङ्गमक्तमिति । प्राणो  
 वै पतङ्गः । पतन्निव हेष्वङ्गेष्वति रथमुदीक्षते । पतङ्ग इत्याचक्षते  
 ॥२॥ असुरस्य माययेति । मनो वा असुरम् । तद्द्वयसुषु रमते ।  
 तस्यैष माययाक्तः ॥३॥ हृदा पश्यन्ति मनसा विपश्चित इति ।  
 हृदैव ह्येते पश्यन्ति यन्मनसा विपश्चितः ॥४॥ समुद्रे अन्तः कवयो  
 विचक्षते इति । पुरुषो वै समुद्र एवंविद् उ कवयः । त इमाम्पु-  
 रुषेऽन्तर्वाचं विचक्षते ॥५॥ मरीचीनाम्पदमिच्छन्ति वेधस इति ।  
 मरीच्य इव वा एता देवता यदान्निर्वायुरादित्यश्चन्द्रमाः ॥६॥ न इ

४ ऋच्या । ५-स्या-॥

१ अक्षम् । २-ताः । ३-प । ४ त । ५ इत् । ६ एवं । ७ सा ।

वा एतासां देवतानाम्पदमस्ति । पदेनो ह वै पुनर्मृत्युरन्वेति ॥७॥  
 तदेतदनन्वितं साम पुनर्मृत्युना । अति पुनर्मृत्युं तरति य एवं  
 वेद ॥८॥३।३५॥

पष्ठेऽनुवाके सप्तमः खण्डः ।

पतङ्गो वाचम्मनसा विभर्ति तां गन्धर्वोऽवदद्गर्भे अन्तः ।  
 तां द्योतमानां स्वर्यम्मनीषामृतस्य पदे कवयो निपान्ति  
 इति ॥१॥ पतङ्गो वाचम्मनसा विभर्तीति । प्राणो वै पतङ्गः । स  
 इमां वाचम्मनसा विभर्ति ॥२॥ तां गन्धर्वोऽवदद्गर्भे अन्तरिति ।  
 प्राणो वै गन्धर्वः पुरुष उ गर्भः । स इमाम्पुरुषेऽन्तर्वाचं वदति ॥३॥  
 तां द्योतमानां स्वर्यम्मनीषामिति । स्वर्या ह्येषा मनीषा यद्वाक् ॥४॥  
 ऋतस्य पदे कवयो निपान्तीति । मनो वा ऋतमेवंविद उ कवयः ।  
 ओमित्येतदेवान्तरमृतम् । तेन यद्वचस्मीमांसन्ते यद्यजुर्यत्साम  
 तदेनां निपान्ति ॥५॥३।३६॥

पष्ठेऽनुवाकेऽष्टमः खण्डः ।

८ वे ।

१-ओ । २-आ । ३ वदति । ४ अन्त- । ५-अ । ६ 'यत्साम'  
 के आगे 'ओमित्ये-ऋतम्' हे ॥

अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा च परा च पथिभिश्चरन्तरम् ।

स सध्रीचीस्स विषूचीर्वसान आ वरीवर्त्ति भुवनेष्वन्तर इति ॥१॥

अपश्यं गोपामनिपद्यमानमिति । प्राणो वै गोपाः । स हीदं सर्वम-  
निपद्यमानो गोपायति ॥२॥ आ च परा च पथिभिश्चरन्तमिति ।  
तद्ये च ह वा इमे प्राणा अमी च रश्मय एतैर्ह वा एष एतदा च  
परा च पथिभिश्चरति ॥३॥ स सध्रीचीस्स विषूचीर्वसान इति ।  
सध्रीचीश्च ह्येष एतद्विषूचीश्च प्रजा वस्ते ॥४॥ आ वरीवर्त्ति भुवने-  
श्वन्तरिति । एष ह्येवैषु भुवनेश्वन्तरावरीवर्त्ति ॥५॥ स एष इन्द्र  
उद्गीथः । स यदैष इन्द्र उद्गीथ आगच्छति नैवोद्गातुश्चोपगातृणां  
च विज्ञायते । इत एवोर्ध्वस्वरुदेति । स उपरि मूर्ध्नो लेलायति ॥६॥  
स विद्यादागमादिन्द्रो नेह कश्चन पाप्मा न्यङ्गः परिशेच्यत इति ।  
तस्मिन् ह न कश्चन पाप्मा न्यङ्गः परिशिष्यते ॥७॥ तदेतद-  
भ्रातृव्यं साम । न ह वा इन्द्रः कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते । स  
यथेन्द्रो न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यत एवमेव [न] कंचन भ्रातृव्य-  
म्पश्यते य एतदेवं वेदाभो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥८॥ ३३७॥

षष्ठोऽनुवाके नवमः खण्डः । षष्ठोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

१-रीच्-इस पाद के प्रारम्भ में 'अर्त्ति' ऐसा अधिक है । २ सस्ते ।  
३-तृणा- । ४-ध्व । ५ आगाद् । ६ परिषे- । ७ एत । ८ भ्र-॥

प्रजापतिम्ब्रह्माऽऽसृजत । तमपश्यममुखमसृजत ॥१॥ तमप्र-  
 पश्यममुखं शयानम्ब्रह्माऽऽविशत् । पुरुष्यं तत् । प्राणौ वै ब्रह्म ।  
 प्राणो वावैनं तदाविशत् ॥२॥ स उदतिष्ठत् प्रजानां जनयिता ।  
 तं रक्षांस्यन्वसचन्त ॥३॥ तमेतदेव साम गायन्नत्रायत् । यद्रायन्न-  
 त्रायत् तद्रायन्नस्य गायन्नत्वम् ॥४॥ त्रायत् एनं सर्वस्मात्पाप्मनो  
 मुच्यते य एवं वेद ॥५॥ तमुपाऽस्मै गायता नर इत्यृचाऽऽश्रव-  
 णीयेनोपागायन् ॥६॥ यदुपाऽस्मै गायता नर इति तेन गायन्नम-  
 भवत् । तस्मादेषैव प्रतिपत्कार्या ॥७॥ पवमानायेन्दावा अभि  
 देवमिया-दुम-भाक्षाता इति षोडशाक्षराण्यभ्यगायन्त १३ षोडशकलं  
 वै ब्रह्म । कलाश एवैनं तद्ब्रह्माऽऽविशत् ॥८॥ तदेतच्चतुर्विंशत्क्षरं  
 गायन्नम् । अष्टाक्षरः प्रस्तावः ११ । षोडशाक्षरं गीतं तच्चतुर्विंशतिस्स-  
 म्पद्यन्ते १४ । चतुर्विंशत्तर्धमासस्संवत्सरः । संवत्सरस्साम ॥९॥ ता  
 ऋचश्शरीरेण मृत्युरन्वैतत् । तद्यच्छरीरवत्तन्मृत्योराप्तम् । अथ यद्-  
 शरीरं तदमृतम् । तस्याऽशरीरेण साम्ना शरीराण्यधूनोत् ॥१०॥

३।३८॥

सप्तमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

१ मुख- । २ अप्रव- । ३-पं । ४-आस्य । ५ अनुसच- । ६ गा-  
 यन्नम् । ७ श्रवसीय- । ८ ऽपेगा- । ९-क्षाम् । ११ प्रास्त- । १२ तम् ।  
 १३-यत् । १४-सास् ॥

ओवा३चोवा३चोवा३च हुम्भा ओवा इति षोडशाक्षरा-  
 रायभ्यगायत । षोडशकलौ वै पुरुषः । कलाश एवास्य तच्छरी-  
 रायधूनोत् ॥१॥ स एषोऽपहतपाप्मा धृतशरीरः । तदेकिक्रया-  
 दृतियुदासंगायसो इत्युदास । आ इति आवृत्त्यात् । वागिति  
 तद्ब्रह्म । तदिदन्तरिक्तं सोऽयं वायुः पवते । हुमिति चन्द्रमाः ।  
 भा इत्यादिसः ॥२॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्भातीत्याच-  
 क्षते ॥३॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्भ्रमिसाचक्षते ॥४॥  
 एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोः कुभ्रमिसाचक्षते ॥५॥ एतस्य  
 ह वा इदमक्षरस्य क्रतोश्शुभ्रमिसाचक्षते ॥६॥ एतस्य ह वा  
 इदमक्षरस्य क्रतोर्वृषभ इसाचक्षते ॥७॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य  
 क्रतोर्देर्भ इसाचक्षते ॥८॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्यो  
 भातीत्याचक्षते ॥९॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोस्सम्भवती-  
 त्याचक्षते ॥१०॥ तद्यत्किं च भा३ इति च भा३ इति च तदेत-  
 न्मिथुनं गायत्रम् । प्र मिथुनेन जायते य एवं वेद ॥११॥  
 ३।३-६॥

सप्तमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तदेतदमृतं गायत्रम् । एतेन वै प्रजापतिरमृतत्वमगच्छदेतेन  
 देवा एतेनर्षयः ॥१॥ तदेतद्ब्रह्म प्रजापतयेऽब्रवीत् प्रजापतिः  
 परभेष्टिने प्राजापत्याय परमेष्ठी प्राजापसो देवाय सवित्रे देवस्सविता-  
 ऽग्रयेऽग्निरिन्द्रायेन्द्रः काश्यपाय काश्यप ऋश्यशृङ्गाय काश्यपाय  
 ऋश्यशृङ्गः काश्यपो देवतरसे श्यावसायनाय काश्यपाय देवतराश्या-  
 वसायनः काश्यपश्शुषाय वाह्वेयाय काश्यपाय श्रुषो वाह्वेयः का-  
 श्यप इन्द्रोताय दैवापाय शौनकायेन्द्रोतो दैवापश्शौनको दृतय  
 ऐन्द्रोतये शौनकाय दृतिरैन्द्रोतिश्शौनकः पुलुपाय प्राचीनयोग्याय  
 पुलुवः प्राचीनयोग्यस्सखयज्ञाय पौलुषये प्राचीनयौग्याय सख-  
 यज्ञः पौलुषिः प्राचीनयोग्यस्सोमशुष्माय साखयज्ञाय प्राचीन-  
 योग्याय सोमशुष्मस्साखयज्ञिः प्राचीनयोग्यो हृत्स्वाशयायाऽऽल्ल-  
 केयाय<sup>७</sup> माहावृषाय राज्ञे हृत्स्वाशय आल्लकेयो माहावृषो राजा  
 जनश्रुताय कारिड्वयाय जनश्रुतः कारिड्वयस्सायकाय जानश्रुते-  
 याये कारिड्वयाय सायको जानश्रुतेयः कारिड्वयो नगरिणो  
 जानश्रुतेयाय कारिड्वयाय नगरी जानश्रुतेयः कारिड्वयश्शङ्गाय<sup>१०</sup>

१ 'काश्यपो' अधिक है । २ श्यावसाय । ३ भूषो, शूषो ।  
 ४, वाख्ने । ५ इन्द्रात्- । ६-पिश् । ७ ल्लोक- । ८ स सात्यायज्ञिः  
 प्राचीनयोग्यो हृत्स्वा' अधिक है । ९ जानुश्-, जानश्- ।  
 १० शिङ्- ।

शाठ्यायनय<sup>११</sup> आत्रेयाय शङ्गशाठ्यायनिरात्रेयो रामाय क्रातुजति-  
याय वैयाघ्रपद्याय रामः क्रातुजतियो वैयाघ्रपद्यः—॥२॥३॥४०॥

सप्तमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

—शङ्गाय बाभ्रव्याय शङ्गो वाभ्रव्यो दत्ताय कात्यायनय<sup>१२</sup>  
आत्रेयाय दत्तः कात्यायनिरात्रेयः कँसाय वारकये कँसो वारकिः  
प्रोष्ठपादाय वारक्याय प्रोष्ठपादो वारक्यः<sup>३</sup> कँसाय वारक्याय<sup>३</sup>  
कँसो वारक्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यः कुबेराय  
वारक्याय कुबेरो वारक्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यो  
जनश्रुताय वारक्याय जनश्रुतो वारक्यस्सुदत्ताय<sup>४</sup> पाराशर्याय  
सुदत्तः पाराशर्योऽषाढायोत्तराय पाराशर्यायाऽषाढ उत्तरः पारा-  
शर्यो विपश्चिते शकुनिमित्राय पाराशर्याय विपश्चिच्छकुनिमित्रः  
पाराशर्यो जयन्ताय पाराशर्याय जयन्तः पाराशर्यः—॥१॥३॥४१॥

सप्तमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

—श्यामजयन्ताय लौहिसाय श्यामजयन्तो लौहिसः पल्लि-  
गुप्ताय लौहिसाय पल्लिगुप्तो लौहिसस्सत्यश्रवसे लौहिसाय<sup>५</sup> सत्य-

११-नाथ ।

१-नाथ, कात्याजय-। २ वर-। ३ प-। ४ सुदत्ता, सुदत्ताय ।

५ अष् (!), आष्-।

१ लोह-।



श्रवा लौहिसः कृष्णधृतये सायकये कृष्णधृतिस्सायकिश्याम-  
 सुजयन्ताय लौहिसाय श्यामसुजयन्तो लौहिसः कृष्णदत्ताय  
 लौहिसाय कृष्णदत्तो लौहिसो मित्रभूतये लौहिसाय मित्रभूति<sup>२</sup>  
 लौहिसश्यामजयन्ताय लौहिसाय श्यामजयन्तो लौहिसस्त्रि-  
 वेदाय कृष्णराताय लौहिसाय त्रिवेदः कृष्णरातो लौहित्यो  
 यशस्विने जयन्ताय लौहित्याय यशस्वी जयन्तो लौहित्यो जयकाय  
 लौहित्याय जयको लौहित्यः कृष्णराताय लौहित्याय कृष्णरातो  
 लौहित्यो दत्तजयन्ताय लौहित्याय दत्तजयन्तो लौहित्यो  
 विपश्चिते दृढजयन्ताय लौहित्याय विपश्चिद्दृढजयन्तो लौहित्यो  
 वैपश्चिताय दार्ढजयन्तये दृढजयन्ताय लौहित्याय वैपश्चितो दार्ढ-  
 जयन्तिदृढजयन्तो लौहित्यो वैपश्चिताय दार्ढजयन्तये गुप्ताय  
 लौहित्याय ॥१॥ तदेतदमृतं गायत्रमथ यान्यन्यानि गीतानि  
 काम्यान्येव तानि काम्यान्येव तानि ॥२॥३॥४॥

सप्तमोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । सप्तमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

२-ति । ३ 'श्यामजयन्तो लौहित्याय' अधिक है । ४ वैविष्- ।

# [ चतुर्थोऽध्यायः ]

श्वेताश्वो दर्शतो हरिनीलोऽसि हरितस्पृशस्समानबुद्धो मा  
 हिंसीः । न मां त्वं वेत्थ प्रद्रव ॥१॥ यदभ्यवचरणो<sup>१</sup>ऽभ्यवैषि  
 स्वपन्तम्पुरुषमकोविदमश्ममयेन<sup>२</sup> वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥२॥  
 यदभ्यवचरणो<sup>१</sup>ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरुषमको विदमयस्मयेन वर्मणा  
 वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥३॥ यदभ्यवचरणो<sup>३</sup>ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पु-  
 रुषमकोविदं लोहमयेन वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥४॥  
 यदभ्यवचरणो<sup>३</sup>ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरुषमकोविदं रजतमयेन वर्मणा  
 वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥५॥ यदभ्यवचरणो<sup>१</sup>ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरु-  
 षमकोविदं सुवर्णमयेन वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥६॥

आयुर्माता<sup>५</sup> मतिः पिता नमस्त आविशोषण ।

प्रहो नामाऽसि विश्वायुस्तस्मै<sup>६</sup> ते विश्वाहा नमो

नमस्ताम्राय नमो वरुणाय<sup>७</sup> नमो जिघांसते ॥७॥ यद्धम राजन्मा मां  
 हिंसीः । राजन् यद्धम मा हिंसीः । तयोस्संविदानयोस्सर्वभायुर-  
 यान्यहम्<sup>८</sup> ॥८॥४१॥

प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

१-णा । २ इति मन्ममयेन । ३ अयाण्य । ४ संक्षेप है ।  
 ५ मातन । ६-वाहाय । ७ रुणाय । ८ अं ॥

पुरुषो वै यज्ञः ॥१॥ तस्य यानि चतुर्विंशतिर्वर्षाणि तत्प्रात-  
 स्सवनम् । चतुर्विंशत्यक्षरा गायत्री । गायत्रंप्रातस्सवनम् ॥२॥  
 तद्ब्रह्मनाम् । प्राणा<sup>२</sup> वै वसवः । प्राणा हीदं सर्वं वस्वाददते ॥३॥  
 स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपदुपद्रवेत्स ब्रूयात्प्राणा<sup>३</sup> वसव इदम्मे  
 प्रातस्सवनं माध्यन्दिनेन सवनेनानुसंतनुतेति । अगदो हैव  
 भवति ॥४॥ अथ यानि चतुश्चत्वारिंशत् वर्षाणि तन्माध्यन्दिनं  
 सवनम् । चतुश्चत्वारिंशदक्षरा त्रिष्टुप् । त्रैष्टुभं माध्यन्दिनं  
 सवनम् ॥५॥ तद्ब्रह्मनाम् । प्राणा वै रुद्राः । प्राणा हीदं सर्वं  
 रोदयन्ति ॥६॥ स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपदुपद्रवेत् स  
 ब्रूयात्प्राणा रुद्रा इदम्मे माध्यन्दिनं सवनं तृतीयसवनेनानुसंत-  
 नुतेति । अगदो हैव भवति ॥७॥ अथ यान्यष्टाचत्वारिंशत्  
 वर्षाणि तत् तृतीयसवनम् । अष्टाचत्वारिंशदक्षरा जगती । जागतं  
 तृतीयसवनम् ॥८॥ तदादिसानाम् । प्राणा वा आदित्याः ।  
 प्राणा हीदं सर्वमाददते ॥९॥ स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपदु-  
 पद्रवेत्स ब्रूयात्प्राणा आदित्या इदम्मे तृतीयसवनमायुषानु-  
 संतनुतेति । अगदो हैव भवति ॥१०॥ एतद् तद्विद्वान् ब्राह्मण

उवाच महिदास ऐतरेय उपतपति किमिदमुपतपसि योऽहमनेनो-  
पतपता न प्रेष्यामीति । स ह षोडशशतं वर्षाणि जिजीव । प्र ह  
षोडशशतं वर्षाणि जीवति नैनम्प्राणस्साम्यायुषो जहाति य एवं  
वेद ॥११॥४१२॥

द्वितीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

त्रयायुषं कश्यपस्य जमदमेस्त्रयायुषम् ।

त्रीण्यमृतस्य पुष्पाणि त्रीण्यायुषि मेऽकृणोः ॥१॥

स नो मयोभूः पितवाविशस्व शान्तिको यस्तनुवे स्योनः ॥२॥

येऽमयः पुरीष्याः प्रिविष्टाः पृथिवीमनु ।

तेषां त्वमस्युत्तमः प्र णो जीवातवे सुव ॥३॥४१३॥

तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

अरण्यस्य वत्सोऽसि विश्वनामा विश्वाभिरक्षणाऽपाम्पक्वो-  
ऽसि बरुणास्य दूतोऽन्तर्धिनाम ॥१॥ यथा त्वममृतोर्मर्त्येभ्योऽन्तर्हितो-

ऽस्येवं त्वमस्मानघायुभ्योऽन्तर्धेहि । अन्तर्धिरसि स्तेनेभ्यः ॥२॥४१४॥

चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ।

१ सम्य् ॥

१ त्रियाय्-। २ त्रीण् । ३ आयुंक्षि । ४-तो । ५ खंतोका ।  
६ य । ७-भ्रों । ८ प्रा ।

१ विश्वोन्-भ्रं । २-क्षमा । ३ ऽर्द्धनाम । ४ त । ५ मर्त्येभ्यो ॥

व्युषि सविता भवस्युदेष्यन् विष्णुरुद्यन्पुरुष उदितो बृहस्पति-  
 रभिप्रयन्मघवेन्द्रो वैकुण्ठो माध्यन्दिने भगोऽपराह्ण<sup>२</sup> उग्रो देवो लो-  
 हितायन्नस्तमिते यमो भवसि ॥१॥ अश्रसु सोमो राजा निशाया-  
 म्पितृराजस्वप्ने मनुष्यान्प्रविशसि पयसा पशून् ॥२॥ विरात्रे  
 भवो भवस्यपररात्रेऽङ्गिरा अग्निहोत्रवेलायाम्भृगुः ॥३॥ तस्य तदे-  
 तदेव मण्डलमूधः । तस्यैतौ स्तनौ यद्वाक् च प्राणश्च । ताभ्या-  
 म्मेधुत्त्वाऽध्यायम्ब्रह्मचर्यम्प्रजाम्पशून् स्वर्गं लोकं सजातवन-  
 स्याम् ॥४॥ एता आशिष आशासे । भूर्भुवस्स्वः । उदिते शुक्रमा-  
 दिश । तदात्मन्दचे ॥५॥४५॥

पञ्चमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

भगेरथो हेत्वाको राजा कामप्रेण यज्ञेन यक्ष्यमाण आस ॥१॥  
 तद् इ कुरूपञ्जालानाम्ब्राह्मणा ऊचुर्भगेरथो ह वा अयमैत्वाको  
 राजा कामप्रेण यज्ञेन यक्ष्यमाणः । एतेन कथां वदिष्याम इति ॥२॥  
 तं हाऽभ्येयुः । तेभ्यो हाऽभ्यागतेभ्योऽपचितीश्चकार ॥३॥ अथ  
 हैषां स भाग आवत्राजोपत्वा केशश्मश्रूणि नखाभिकृत्याऽऽज्ये-

१-ओ । २ पराहेण । ३-ज । ४ त । ५-य । ६ आशिष ।

७ आदिष ॥

१-पाञ्च- । २-यक्ष्म- । ३ एततेव । ४ 'भा' अधिक है ।

५ उपत्वा

नाऽभ्यज्य दण्डोपानहम्बिभ्रत् ॥४॥ तान् होवाच ब्राह्मणा  
 भगवन्तः कतमो वस्तद्वेद यथाऽऽश्रावितप्रत्याश्राविते देवान् गच्छत  
 इति ॥५॥ अथ होवाच कतमो वस्तद्वेद यद्विदुषस्सूद्राता सुहोता  
 स्वध्वर्युस्सुमानुषविदाजायत इति ॥६॥ अथ होवाच कतमो  
 वस्तद्वेद यच्छन्दाँसि प्रयुज्यन्ते यत्तानि सर्वाणि संस्तुतान्यभि-  
 सम्पद्यन्त इति ॥७॥ अथ होवाच कतमो वस्तद्वेद यथा गायत्र्या  
 उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति ॥८॥ अथ होवाच कतमो  
 वस्तद्वेद यथा दक्षिणाः प्रतिगृहीता न हिंसन्तीति ॥९॥४६॥

षष्ठेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एतान् हैनान् पञ्च प्रश्नान् पप्रच्छ ॥१॥ तेषां ह कुरूपञ्चा-  
 लानाम्बको दालभ्योऽनूचान आस ॥२॥ स होवाच यथाऽऽश्रा-  
 वितप्रत्याश्राविते देवान् गच्छत इति प्राच्यां वै राजन् दिश्या-  
 श्रावितप्रत्याश्राविते देवान् गच्छतः । तस्मात्प्राङ् इतिष्ठन्नाश्रावयति  
 प्राङ् तिष्ठन्प्रत्याश्रावयतीति ॥३॥ अथ होवाच यद्विदुषस्सूद्राता  
 सुहोता स्वध्वर्युस्सुमानुषविदाजायत इति यो वै मनुष्यस्य  
 सम्भूतिं वेदेति होवाच तस्य सूद्राता सुहोता स्वध्वर्युस्सुमानुषवि-

दाजायत इति प्राणा उ ह वाव राजन् मनुष्यस्य सम्भूतिरेवेति  
 ॥४॥ अथ होवाच यच्छ्रुन्दांसि प्रयुज्यन्ते यत्तानि सर्वाणि  
 संस्तुतान्यभिसम्पद्यन्त इति गायत्रीमु ह वाव राजन् सर्वाणि  
 छ्रुन्दांसि संस्तुतान्यभिसम्पद्यन्त इति ॥५॥ अथ होवाच यथा  
 गायत्र्या उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति वषट्कारेणो ह  
 वाव राजन् गायत्र्या उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति ॥६॥  
 अथ होवाच यथा दक्षिणाः प्रतिगृहीता न हिंसन्तीति-॥७॥४॥७॥

षष्ठेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

-यो वै गायत्र्यै मुखं वेदेति होवाच तं दक्षिणा प्रतिगृहीता  
 न हिंसन्तीति ॥१॥ अग्निर्ह वाव सजन् गायत्रीमुखम् ।  
 तस्माद्यदग्नावभ्यादधाति भूयानेव स तेन भवति वर्धते । एव-  
 १  
 २  
 मेवैवं विद्वान्ब्राह्मणः प्रतिगृह्णन्भूयानेव भवति वर्धत उ एवेति ॥२॥  
 स होवाचाऽनूचानो वै किलाऽयम्ब्राह्मण आस । त्वामहमनेन  
 यज्ञेनैमीति ॥३॥ तस्य वै ते तथोद्गास्यामीति होवाच स्यै-  
 कराडेव भूत्वा स्वर्गं लोकमेष्यसीति ॥४॥ तस्मा एतेन गाय-  
 त्रेणोद्गीथेनोज्जगौ । स हैकराडेव भूत्वा स्वर्गं लोकमियाय ।

४ सम्भूतिद्गुर, सम्भूतिर्द्धर । ५ है ॥

१ अश्न- । २-यन् । ३ गायत्र सो ।

तेन हैतेनैकराडेव भूत्वा स्वर्गं लोकमेति [य एवं वेद] ॥५॥ ओं  
 वा इति द्वे अक्षरे । ओं वा इति चतुर्थे । ओं वा इति षष्ठे ।  
 हुम्भा ओं वागित्यष्टमे ॥६॥ तेन हैतेन प्रतीदशोऽस्य भयदस्या-  
 ऽऽसमात्यस्योज्जगौ ॥७॥ तं होवाच किं त आगास्याभीति । स  
 होवाच हरीमे देवाश्वा वागायेति । तथेति । तौ हास्मा आजगौ ।  
 तौ हैनमाजग्मतुः ॥८॥ स वा एष उद्गीथः कामानां सम्पदो  
 वा३चो वा३चो वा३च् हुम्भा ओं वागिति । साङ्गो हैव स तनुर-  
 मृतस्सम्भवति य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥९॥४॥८॥

षष्ठेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । षष्ठोऽनुवाकस्तमाप्तः ॥

पुरुषो वै यज्ञः पुरुषो होद्गीथः । अथैत एव मृत्यवो यद-  
 ग्रिर्वायुरादित्यश्चन्द्रमाः ॥१॥ ते ह पुरुषं जायमानमेव मृत्युपाशैर-  
 भिदधति । तस्य वाचमेवाग्निरभिदधाति प्राणं वायुश्चक्षुरादित्यश्-  
 श्रोत्रं चन्द्रमाः ॥२॥ तदाहुस्स वा उद्गाता यो यजमानस्य प्राणो-  
 भ्योऽधि मृत्युपाशानुन्मुञ्चतीति ॥३॥ तद्यस्यैवं विद्वान् प्रस्तौति  
 य एवास्य वाचि मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥४॥ अथ यस्यैवं

४ तोन । ५-शे । ६ सवद् ॥

१ अवा । २ यजा- । ३ उमुञ्- ।



विद्वानुद्गायति य एवास्य प्राणो मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥५॥  
 अथ यस्यैवं विद्वान् प्रतिहरति य एवास्य चक्षुषि<sup>६</sup> मृत्युपाशस्तमे-  
 वास्योन्मुञ्चति ॥६॥ अथ यस्यैवं विद्वान्निधनमुपैति<sup>७</sup> य एवास्य  
 श्रोत्रे मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥७॥ एवं वा एवंविदुद्गाता  
 यजमानस्य प्राणोभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मुञ्चति<sup>८</sup> ॥८॥ तदाहुस्स  
 वा उद्गाता यो यजमानस्य प्राणोभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मुञ्चयैः  
 साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्स्पृणातीति ॥९॥४।९॥

सप्तमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तद्यस्यैवं विद्वान्हिङ्करोति य एवास्य लोमसु मृत्युपाशस्त-  
 स्मादेवैनं स्पृणाति ॥१॥ अथ यस्यैवं विद्वान् प्रस्तौति य एवास्य  
 त्वचि<sup>१</sup> मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥२॥ अथ यस्यैवं विद्वाना-  
 दिमादत्ते य एवास्य मांसेषु मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥३॥  
 अथ यस्यैवं विद्वानुद्गायति य एवास्य स्नावसु मृत्युपाशस्तस्मा-  
 देवैनं स्पृणाति ॥४॥ अथ यस्यैवं विद्वान्प्रतिहरति य एवास्याङ्गेषु  
 मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥५॥ अथ यस्यैवं विद्वानुपद्रवति य  
 एवास्यास्थिषु मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥६॥ अथ यस्यैवं

४-द्वा । ५ उद्गायति । ६ प्राणे । ७ नास्ति । ८ प्रतिहरति ॥

१ क्व-। २ या ।

विद्वान् निधनमुपैति य एवास्य मज्जसु मृत्युपाशस्स तस्मादेवैनं  
 स्पृणाति ॥७॥ एवं वा एवंविदुद्गाता यजमानस्य प्राणेभ्योऽधि-  
 मृत्युपाशानुन्मुच्याथैनं साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्सपृणाति ॥८॥ तदा-  
 हुस्स वा उद्गाता यो यजमानस्य प्राणेभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मुच्याथैनं  
 साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्सपृत्वा स्वर्गे लोके सप्तधा दधातीति ॥९॥  
 स वा एष इन्द्र वैमृध उद्यन् भवति सवितोदितो मित्रस्संगवकाल<sup>३</sup>  
 इन्द्रो वैकुराटो मध्यन्दिने समावर्तमानश्शर्व उग्रो देवो लोहितायन्  
 प्रजापतिरेव संवेशेऽस्तमितः ॥१०॥ तद्यस्यैवं विद्वान् हिङ्करोति य  
 एवास्योद्यतस्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥११॥ अथ यस्यैवं  
 विद्वान् प्रस्तौति य एवास्योदिते स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति  
 ॥१२॥ अथ यस्यैवं विद्वानादिमादत्ते य एवास्य संगवकाले<sup>३</sup>  
 स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१३॥ अथ यस्यैवं विद्वानुद्गायति  
 य एवास्य मध्यन्दिने<sup>६</sup> स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१४॥ अथ  
 यस्यैवं विद्वान् प्रतिहरति य एवास्यापराह्णे स्वर्गो लोकस्तस्मिन्ने-  
 वैनं दधाति ॥१५॥ अथ यस्यैवं विद्वानुपद्रवति य एवास्यास्त-  
 यतस्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१६॥ अथ यस्यैवं विद्वान्नि-

धनमुपैति य एवास्यास्तमिते स्वर्गे लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१७॥  
 एवं वा एवंविदुद्गाता यजमानस्य प्राणोभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मु-  
 च्याथैनं साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्स्पृत्वा स्वर्गे लोके सप्तधा<sup>१</sup>  
 दधाति ॥१८॥१०॥

सप्तमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । सप्तमोऽनुवाकस्तमाप्तः ॥

षड् ढ वै देवतास्स्वयम्भुवोऽग्निर्वायुरसावादित्यः प्राणोऽन्नं  
 वाक् ॥१॥ तादश्रैष्ठ्ये<sup>३</sup> व्यवदन्ताऽहं<sup>५</sup> श्रेष्ठोऽस्म्यहं<sup>६</sup> श्रेष्ठोऽस्म्य<sup>६</sup>? [स्मि]  
 मां श्रियमुपाध्वमिति ॥२॥ ता अन्योन्यस्यै<sup>७</sup> श्रेष्ठतायै नाऽतिष्ठन्त ।  
 ता अब्रुवन्न वा अन्योन्यस्यै<sup>७</sup> श्रेष्ठतायै तिष्ठामह एतां सम्प्रभवामहे<sup>९</sup>  
 यथा श्रेष्ठोऽस्म इति ॥३॥ ता अग्निमब्रुवन्कथं त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥४॥  
 सोऽब्रवीदहं देवानाम्मुखमस्म्यहमन्यासाम्प्रजानाम् । मयाऽऽहुतयो  
 हूयन्ते । अहं देवानामन्नं विकरो<sup>११</sup>म्यहम्मनुष्याणाम् ॥५॥ स यन्न<sup>१२</sup>  
 स्याममुखा एव देवास्स्युरमुखा अन्याः प्रजाः । नाऽऽहुतयो हूयेरन् ।  
 न देवानामन्नं विक्रियेत न मनुष्याणाम् ॥६॥ तत इदं सर्वम्परा-

६ सप्त ॥

१ षड्ढ । २ ड । ३-आ । ४-ठे । ५ ष्ववद्- । ६ श्रेष्- ।  
 ७ अन्या- । ८-है । ९ एत । १० त्वा । ११-कार्- । १२ अ ।  
 १३ हूयन्ते (!) बिख कर हुयन्त् (!) किया गया । १४-ए ।

भवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति <sup>१५</sup> ॥७॥ एवमेवेति होचुर्नैवेह <sup>१८</sup>  
 किञ्चन परिशिष्येत यत् <sup>१६</sup> त्वं न स्या इति ॥८॥ अथ वायुमब्रुव-  
 न्कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥९॥ सोऽब्रवीदहं देवानाम्प्राणोऽस्म्यह- <sup>१७</sup>  
 मन्यासाम्प्रजानाम् । यस्मादहमुत्क्रामामि ततस्स प्रपुवते ॥१०॥  
 स यदहं न स्यां तत इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येते-  
 ति ॥११॥ एवमेवेति होचुर्नैवेह <sup>१६</sup> किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या  
 इति ॥१२॥४११॥

अष्टमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथादित्यमब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥१॥ सोऽब्रवीद-  
 हमेवोद्यन्नहर्भवाभ्यहमस्तंयन्रात्रिः । मया चक्षुषा कर्माणि क्रियन्ते ।  
 स यदहं न स्यां नैवाहस्स्यान्न <sup>१</sup> रात्रिः । न कर्माणि क्रियेरन् ॥२॥  
 तत इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥३॥  
 एवमेवेति होचुर्नैवेह <sup>२</sup> किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥४॥  
 अथ प्राणमब्रुवन् कथमु <sup>३</sup> त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥५॥ सोऽब्रवीत्प्राणो  
 भूत्वाऽग्निर्दीप्यते । प्राणो भूत्वा वायुराकाशमनुभवति । प्राणो  
 भूत्वाऽऽदिस उदेति । प्राणादन्नम्प्राणाद्वाक् <sup>४</sup> ॥६॥ स यदहं न स्यां तत <sup>५</sup>

इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥७॥ एवमेवेति  
 होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥८॥ अथान्न-  
 मब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठमसीति ॥९॥ तदब्रवीन्मयि प्रतिष्ठायाग्निर्दी-  
 प्यते । मयि प्रतिष्ठाय वायुराकाशमनुविभवति । मयि प्रतिष्ठाया-  
 दिस्य उदेति । मदेव प्राणो मद्वाक् ॥१०॥ स यदहं न स्यां तत  
 इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥११॥ एवमेवेति  
 होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥१२॥ अथ  
 वाचमब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठासीति ॥१३॥ साब्रवीन्मयैवेदं विज्ञायते  
 मयाऽदः । स यदहं न स्यां नैवेदं विज्ञायेत नाऽदः ॥१४॥ तत  
 इदं सर्वम्पराभवेन् नैवेह किञ्चन परिशिष्येतेति ॥१५॥ एवमेवे-  
 ति होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥१६॥ ४१२॥

अष्टमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

ता अब्रुवन्नेता वै किल सर्वा देवताः । एकैकामेवानुस्मः<sup>१</sup> ।  
 स यन्नु नस्सर्वासां देवतानामेकाचन न स्यात्तत इदं सर्वम्परा-  
 भवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येत । हन्त सार्धं समेत्य<sup>२</sup> यच्छ्रेष्ठं

६ सञ्ज्ञेप करते हैं । 'स (! न के स्थान में ) स्या इति' यद्वां  
 तक छोड़ दिया है । ७ इ-त्त् (!) सञ्ज्ञिप्त दिया है । ८-शिष्य । ९ तुर ॥

१-अ । २ साम-।

तदसामेति ॥१॥ ता एतस्मिन् प्राण<sup>३</sup> ओकारे वाच्यकारे<sup>४</sup> समायन् ।  
 तद्यत्समायन् तत्सान्नस्सामत्वम् ॥२॥ ता अब्रुवन् यानि नो  
 मर्त्यान्व्यनपहतपाप्मान्यक्षराणि तान्युद्धृत्वा<sup>५</sup> मृतेष्वपहतपाप्मसु<sup>६</sup> शुद्धे-  
 ष्वक्षरेषु गायत्रं गायामाऽग्नौ वायावादित्ये प्राणोऽग्ने वाचि ।  
 तेनापहस्य<sup>७</sup> मृत्युमपहस्य<sup>८</sup> पाप्मानं<sup>९</sup> स्वर्गं लोकमियामेति ॥३॥ एतन्नैर-  
 मृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । अग्नित्यस्य मर्त्यमनपहतपाप्मा-  
 ऽक्षरम् ॥४॥ वेति वायोरमृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । युरित्यस्य  
 मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥५॥ एत्यादित्यस्याऽमृतमपहतपाप्म  
 शुद्धमक्षरम् । त्येत्यस्य<sup>१०</sup> मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥६॥ प्रेति  
 प्राणस्यामृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम्<sup>११</sup> । शोत्यस्य<sup>१२</sup> मर्त्यमनपहत  
 पाप्माक्षरम् ॥७॥ एत्यन्नस्यामृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । नमित्यस्य  
 मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥८॥ वेति वाचोऽमृतमपहतपाप्म शुद्ध-  
 मक्षरम् । गित्यस्यै मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥९॥ ता एतानि  
 मर्त्यान्व्यनपहतपाप्मान्यक्षराण्युद्धृत्याऽमृतेष्वपहतपाप्मसु<sup>१३</sup> शुद्धेष्व-  
 क्षरेषु गायत्रमागायन्नग्नौ वायावादित्ये प्राणोऽग्ने वाचि । तेनाप-

३-णो । ४ वाच्च् । ५-त्यै । ६ अम्-(!) । ७ येन । ८-त ।  
 ९-न । १० त्य इत्य् । ११ ' वेदिवाचो मृत ' अधिक है पर लाल रङ्ग  
 से काटा गया है । १२ ण इत्य् । १३-मासु ॥

हृत्य मृत्युमपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमायन् ॥१०॥ अपहत्य मृत्यु-  
मपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमेति य एवं वेद ॥११॥४॥१३॥

अष्टमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

ता ब्रह्माऽब्रुवन्त्वयि प्रतिष्ठायैतमुद्यच्छामेति । ता ब्रह्माऽब्रवी-  
दास्येन<sup>१</sup> प्राणेन युष्मानास्येन<sup>२</sup> प्राण्येन मामुपाग्नवाथेति ॥१॥  
ता एतेन प्राणेनौकारेण वाच्यकारमभिनिमेप्यन्त्यो<sup>१०</sup> हिङ्काराद्रका-  
रमोकारेण वाचमनुस्वरन्त्य उभाभ्याम्प्राणाभ्यां गायत्रमगायत्रो-  
वाश्चोवाश्चोवाश्च् हुम् भा वो वा इति ॥२॥ स यथोभया-  
पदी प्रतितिष्ठत्येवमेव स्वर्गे लोके प्रत्यतिष्ठन् । प्रति स्वर्गे लोके  
तिष्ठति य एवं वेद ॥३॥ य उ ह वा एवं विदस्माल्लोकात्प्रैति स  
प्राण एव भूत्वा वायुमप्येति वायोरध्यभ्राण्यभ्रेभ्योऽधि वृष्टिं<sup>४</sup>  
वृष्ट्यैवेवं लोकमनुविभवति ॥४॥ ऋषयो ह सन्नमासां चक्रिरे ।  
ते पुनः पुनर्बह्वीभिर्बह्वीभिः प्रतिपाद्निस्स्वर्गस्य लोकस्य द्वारं  
नानुचन बुबुधिरे ॥५॥ त ए श्रमेण तपसा व्रतचर्येणेन्द्रमवरु-  
धिरे ॥६॥ तं होनुस्वर्गं वै लोकमैप्सिष्म<sup>६</sup> । ते पुनः पुनर्बह्वीभि-  
र्बह्वीभिः<sup>७</sup> प्रतिपाद्निस्स्वर्गस्य लोकस्य द्वारं नानुचनाऽभुत्स्महि ।

१ आस्येनेन । २-आ, -आन् । ३-अत् । ४-प- । ५-अ- । ६-ऐप्सिष्णु ।  
७ 'बह्वीभिर्' अधिक है । ८-ऽभूत्- । १०-मेप्यन्त- ।

तथा नोऽनुशाधि यथा स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्तास्वस्ति  
संवत्सरस्योदृचं गत्वा स्वर्गं लोकमियामेति ॥७॥ तान् होवाच  
को वस्स्थविरतम इति ॥८॥४११४॥

अष्टमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

अहमित्यगस्त्यः ॥१॥ स वा एहीति होवाच तस्मै वै तेऽहं  
तद्रक्ष्यामि यद्विद्वाँसस्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्तास्वस्ति  
संवत्सरस्योदृचं गत्वा स्वर्गं लोकमेष्यथेति ॥२॥ तस्मा एतं  
गायत्रस्योद्गीथमुपनिषदममृतमुवाचाऽग्नौ वायावादित्ये प्राणोऽन्ने  
वाचि ॥३॥ ततो वै ते स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्ता-  
स्वस्ति संवत्सरस्योदृचं गत्वा स्वर्गं लोकमायन् ॥४॥ एवमेवैवं  
विद्वान् स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्तास्वस्ति संवत्सर-  
स्योदृचं गत्वा स्वर्गं लोकमेति ॥५॥४११५॥

अष्टमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । अष्टमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

एवं वा एतं गायत्रस्योद्गीथमुपनिषदममृतमिन्द्रोऽगस्त्यायो-  
वाचाऽगस्त्य इषाय इष्यावाश्वय इषइश्यावाश्विर्गौपूक्तये गौपूक्ति-

१ 'अहमित्य' (!) अधिक है ॥

१ नास्ति । २-ज्ञामि । ३ 'द्वारमेवैवं' अधिक है । ४ वाय् ॥

१-गीत्-। २-आवो ।



ज्वालायनाय<sup>३</sup> ज्वालायनश्शाठ्यायनये<sup>४</sup> शाठ्यायनी रामाय ऋतु-  
जातेयाय वैयाघ्रपद्याय<sup>५</sup> रामः ऋतुजातेयोवैयाघ्रपद्यः-॥१॥४॥१६॥

नवमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

-शङ्खाय वाभ्रव्याय शङ्खो वाभ्रव्यो दत्ताय कात्यायनय<sup>१</sup>  
आत्रेयाय दत्तः कात्यायनिरात्रेयः कँसाय वारक्याय कँसो वार-  
क्यस्सुयज्ञाय शाण्डिल्याय सुयज्ञश्शाण्डिल्योऽग्निदत्ताय शाण्डि-  
ल्यायाऽग्निदत्तश्शाण्डिल्यस्सुयज्ञाय शाण्डिल्याय सुयज्ञश्शाण्डि-  
ल्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यो जनश्रुताय वारक्याय  
जनश्रुतो वारक्यस्सुदत्ताय<sup>३</sup> पाराशर्याय ॥१॥ सैषा<sup>४</sup> शाठ्यायनी  
गायत्रस्योपनिषदेवमुपासितव्या ॥२॥४॥१७॥

नवमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । नवमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

केनेषितम्पतति प्रेषितम्नः केन प्राणः प्रथमः प्रैति युक्तः ।  
केनेषितां वाचमिमां वदन्ति चक्षुश्श्रोत्रं क उ देवो युनक्ति ॥१॥  
श्रोत्रस्य श्रोत्रम्नसो मनो यद् वाचो ह वाचं स उ प्राणस्य प्राणः ।  
चक्षुपश्चक्षुरतिमुच्य धीराः प्रेसाऽस्माल्लोकादमृता भवन्ति ॥२॥

३ व्वा-१ ४-आये । ५ वाय्या-॥

१-आय । २ प-१ ३-ओ, और 'जनश्रुताय वारक्याय  
जनश्रुते (!) वारक्यस्' अधिक है । ४-ओ ।

न तत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मनः ।  
 न विद्म<sup>१</sup> न विजानीमो<sup>२</sup> यथैतदनुशिष्यात्<sup>३</sup> ॥३॥  
 अन्यदेव तद् विदितादथो अविदितादधि ।  
 इति शुश्रुम<sup>४</sup> पूर्वेषां ये नस्तद्व्याचक्षिरे ॥४॥  
 यद् वाचाऽनभ्युदितं भेन वागभ्युद्यते ।  
 तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥५॥  
 यन्मनसा न मनुते येनाऽऽहुर्मनो<sup>६</sup> मतम् ।  
 तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥६॥  
 यच्चक्षुषा न पश्यति येन चक्षुषि पश्यति ।  
 तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥७॥  
 यच्छ्रोत्रेण न शृणोति येन श्रोत्रमिदं श्रुतम् ।  
 तदेव<sup>९</sup> ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥८॥  
 यत् प्राणेन न प्राणिति<sup>१०</sup> येन प्राणः प्रणीयते ।  
 तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥९॥१०॥११॥

दशमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

यदि मन्यसे सुवेदेति दहमेवाऽपि नूनं त्वं वेत्थ ब्रह्मणो रूपं यदस्य  
 त्वं यदस्य देवेषु । अथ नु मीमांस्यमेव ते मन्येऽविदितम् ॥ १ ॥

१ विदु । २-अ । ३ ऽवै अधिक है । ४-शिष्य- । ५-श्रू- ।  
 ६ मन्यो । ७ मतेम् । ८ नश् । ९ उक्तानुक्त है । १०-णीति ॥

नाऽहम्मन्ये सुवेदेति नो न वेदेति वेद च ।

यो नस्तद् वेद तद्रेद नो न वेदेति वेद च ॥२॥

यस्याऽमतं तस्य मतम्मतं यस्य न वेद सः ।

अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानताम् ॥३॥

प्रतिबोधविदितम्मतममृतत्वं हि विन्दते ।

आत्मना विन्दते वीर्यं विद्यया विन्दतेऽमृतम् ॥४॥

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति । न चेदिहाऽवेदीन्महतीविनष्टिः ।

भूतेषु-भूतेषु विविच्य धीराः प्रेसाऽस्माज्जोकादमृता भवन्ति ॥५॥४१६

दशमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

ब्रह्म ह देवेभ्यो विजिग्ये । तस्य ह ब्रह्मणो विजये देवा अमहीयन्त ।

त ऐत्तन्ताऽस्माकमेवाऽयं विजयः । अस्माकमेवाऽयं महिमेति ॥१॥

तद्वैषां विजज्ञौ । तेभ्यो ह प्रादुर्बभूव । तन्न व्यजानन्त किमिदं

यत्तमिति ॥२॥ तेऽग्निमद्ब्रुवजातवेद् एतद् विजानीहि किमेतद्

यत्तमिति । तथेति ॥३॥ तद्भ्यद्रवत् । तमभ्यवदत् कोऽसीति ।

अग्निर्वा अहमस्मीत्यब्रवीज्जातवेदा वा अहमस्मीति ॥४॥ तस्मिँ-

स्त्वयि किं वीर्यमिति । अपीदं सर्वं दहेयम् यदिदम्पृथिव्यामिति ॥५॥  
 तस्मै तृणं निदधावेतदहेति । तदुपप्रेयाय सर्वजवेन । तन्न शशाकदग्धुम् ।  
 स तत एव निवृत्ते नैनदशकं विज्ञातुं यदेतद्यत्नमिति ॥६॥ अथ  
 वायुमब्रुवन् वायवेतद् विजानीहि किमेतद् यत्नमिति । तथेति ॥७॥  
 तदभ्यद्रवत् । तमभ्यवदत् कोऽसीति । वायुर्वा अहमस्मीत्यब्रवी-  
 न्मातरिश्वा वा अहमस्मीति ॥८॥ तस्मिँस्त्वयि किं वीर्यमिति ।  
 अपीदं सर्वमाददीय यदिदम्पृथिव्यामिति ॥९॥ तस्मै तृणं  
 निदधावेतदादत्स्वेति । तदुपप्रेयाय सर्वजवेन । तन्न शशाका-  
 ऽऽदातुम् । स तत एव निवृत्ते नैनदशकं विज्ञातुं यदेतद्यत्नमिति ॥१०॥  
 अथेन्द्रमब्रुवन् मधवन्नेतद् विजानीहि किमेतद् यत्नमिति । तथेति ।  
 तदभ्यद्रवत् । तस्मात् तिरोऽदधे ॥११॥ स तस्मिन्नेवाऽऽकाशे  
 स्त्रियमाजगाम बहु शोभमानामुमां हैमवतीम् । तां होवाच किमेतद्  
 यत्नमिति ॥१२॥४२०॥

दशमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

ब्रह्मेति होवाच ब्रह्मणो वा एतद् विजये महीयध्व इति । ततो  
 हैव विदांचकार ब्रह्मेति ॥१॥ तस्माद्वा एते देवा अतितरामि-

वान्यान् देवान् यदग्निर्वायुरिन्द्रः । ते ह्येनन्नेदिष्टम्पस्पृशुस्स ह्येनत्<sup>३</sup>  
 प्रथमो विदांचकार ब्रह्मेति ॥२॥ तस्माद् वा इन्द्रोऽतितरामिवा-  
 ऽन्यान् देवान् । स ह्येनन्नेदिष्टम्पस्पर्श स ह्येनत् प्रथमो विदांचकार  
 ब्रह्मेति ॥३॥ तस्यैष आदेशो यदेतद् विद्युतो व्यद्युतदा<sup>४</sup> इति<sup>५</sup> ।  
 न्यमिषदा<sup>६</sup> । इत्यधिदेवतम् ॥४॥ अथाऽध्यात्मम् । यदेनद्  
 गच्छतीव च मनोऽनेन चैनदुपस्मरत्यभीक्षणं संकल्पः ॥५॥ तद्ध  
 तद्रनं नाम । तद्रनमित्युपासितव्यम् । स य एतदेवं वेदाऽभिहैनं  
 सर्वाणि भूतानि संवाञ्छन्ति ॥६॥ उपनिषदम्भो ब्रूहीति । उक्ता  
 त उपनिषत् । ब्राह्मीं वाव त उपनिषदमब्रूमेति ॥७॥ तस्यै तपो  
 दमः कर्मेति प्रतिष्ठा<sup>८</sup> वेदास्सर्वाङ्गाणि सत्यमायतनम् ॥८॥  
 यो<sup>९</sup> वा एतामेवं वेदाऽपहस्य पाप्मानमनन्ते स्वर्गे लोकेऽप्येये  
 प्रतितिष्ठति ॥९॥ ४।२१।

दशमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । दशमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

१ नेदिष्मा, नेदिषुम् । २ ते । ३ अन् । ४ विद्यु । ५ इती । ६ मीष् ।  
 ७ सुक् । ८ सम्बन्तन्ति । ९ ओ । १०-ए ॥

आशा वा<sup>१</sup> इदमग्र आसीद्विष्यदेव<sup>२</sup> । तदभवत् । ता आपो-  
 ऽभवन् ॥१॥ तास्तपोऽतप्यन्त । तास्तपस्तेपाना हुस्सिखेव प्राचीः  
 प्राश्वसन् । स वाव प्राणोऽभवत् ॥२॥ ताः प्राण्याऽपानन् । स  
 वा अपानोऽभवत् ॥३॥ ता अपान्य<sup>३</sup> व्यानम्<sup>४</sup> । स वाव व्यानो-  
 ऽभवत् ॥४॥ ता व्यान्य समानन् । स वाव समानोऽभवत् ॥५॥  
 तास्समान्योदानन् । स वा उदानोऽभवत् ॥६॥ तदिदमेकमेव  
 सधमाद्यमासीद्विविक्तम् ॥७॥ स नावरूपमकुरुत् । तेनैन्द्रच-  
 विनक्<sup>५</sup> । वि ह पाप्मनो विच्यते य एवं वेद ॥८॥ तदसौ वा  
 आदित्यः प्राणोऽग्निरपान<sup>६</sup> आपो व्यानो दिशस्समानश्चन्द्रमा  
 उदानः ॥९॥ तद्वा एतदेकमभवत्प्राण एव । स य एवमेतदेकम्भ-  
 वद्वेदैवं हैतदेकधा भवतीत्येकधैव श्रेष्ठस्त्वानाम्भवति ॥१०॥  
 तदग्निर्वै प्राणो वागिति पृथिवी वायुर्वै प्राणो वागित्यन्तरिक्षमा-  
 दित्यो वै प्राणो वागिति द्यौर्दिशो वै प्राणो वागिति श्रोत्रं चन्द्रमा  
 वै प्राणो वागिति मनः पुमान्वै प्राणो वागिति स्त्री ॥११॥ तस्येदं  
 सृष्टं त्रिथिलम्भुवनमासीदपर्याप्तम् ॥१२॥ स मनोरूपमकुरुत् ।

१ 'आशा वा' का पुनः पाठ है । २ येद् । ३ अपान ।

४ ए-। ५-मादम् । ६-रूपम् । ७-विनोत् । ८-इम् । ९ उपा-१० स्त्रं-॥

तेन तत्पर्याप्तोत् । दृढं ह वा अस्येदं सृष्टमशितिलम्भुवनम्पर्या-  
प्तम्भवति य एवं वेद ॥१३॥४२२॥

एकादशेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सैषा<sup>१</sup> चतुर्था<sup>२</sup> विहिता<sup>३</sup> श्रीरुद्रीथस्सामाकर्ण्य<sup>४</sup> ज्येष्ठब्राह्मणम् ॥१॥  
प्राणो वावोद्वाग्गी स उद्गीथः ॥२॥ प्राणो वावामो वाक् सा  
तत्साम ॥३॥ प्राणो वाव को वागृक् तद्वर्क्यम् ॥४॥ प्राणो वाव  
ज्येष्ठो वाग्ब्राह्मणं तज्ज्येष्ठब्राह्मणम् ॥५॥ उपनिषदम्भो  
ब्रूहीति । उक्ता त उपनिषद्यस्य ते धातव उक्ताः । त्रिधातु विषु  
वाव त उपनिषदमब्रूमेति ॥ ६ ॥ एतच्छुक्लं कृष्णं ताम्रं  
सामवर्णं इति ह स्माह यदैव शुक्लकृष्णे ताम्रो वर्णोऽभ्यवैति  
स वै ते दृढते<sup>९</sup> दशमं<sup>१०</sup> मानुषमिति त्रिधातु । स ऐन्नत क नुँ म  
उत्तानाय<sup>११</sup> शयानायेमा देवता बलिं हरेयुरिति ॥७॥४२३॥

एकादशेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ॥

स पुरुषमेव प्रपदनायाऽवृणीत ॥१॥ तम्पुरस्तात्प्रत्यञ्चम्प्रा-

१ ऽसाश् । २ विहिता । ३ अग्नीः, गीः । ४ ब्रू । ५-अः । ६-षद् ।  
७-दा । ८-वे । ९-त । १० दशः, श् के पूर्व एक अक्षर पढ़ा नहीं  
जाता, कदाचित् कटा है । ११ उत्तानाय ॥

विश्व । तस्मा उरुरभवत् । तदुरस उरस्त्वम् ॥२॥ तस्मा अत्रसद्  
 एता देवता बलिं हरन्ति ॥३॥ वाचमनुहरन्तीमग्निरस्मै बलिं  
 हरति ॥४॥ मनोऽनुहरच्चन्द्रमा अस्मै बलिं हरति ॥५॥ चक्षुरनु-  
 हरदादिसोऽस्मै बलिं हरति ॥६॥ श्रोत्रमनुहरद्विशोऽस्मै बलिं  
 हरन्ति ॥७॥ प्राणमनुहरन्तं वायुरस्मै बलिं हरति ॥८॥ तस्यैते  
 निष्वाताः<sup>२</sup> पन्था बलिवाहना<sup>३</sup> इमे प्राणाः । एवं हैतं निष्वाताः  
 पन्था बलिवाहनास्सर्वतोऽपियन्ति प्राणा य एवं वेद ॥९॥ सा  
 हैषा ब्रह्मासन्दीमारूढा । आ हास्मै ब्रह्मासन्दीं हरन्साधि ह  
 ब्रह्मासन्दीं रोहति य एवं वेद ॥१०॥ तदेतद् ब्रह्मयज्ञश्च<sup>६</sup> श्रिया  
 परिवृढम् । ब्रह्म ह तु सत् यज्ञसा श्रिया परिवृढो भवति य एवं  
 वेद ॥११॥ तस्यैष आदेशो<sup>७</sup> योऽयं दक्षिणोऽन्तन्तः । तस्य  
 यच्छुक्लं तदृचां रूपं यत्कृष्णं तत्साम्नां यदेव ताम्रामिव बभ्रुरिव  
 तद्यजुषाम्<sup>८</sup> ॥१२॥ य एवायं चक्षुषि पुरुष एष इन्द्र एष प्रजा-  
 पातिस्समः पृथिव्या सम आकाशेन समो दिवा समस्सर्वेण  
 भूतेन । एष परो दिवो दीप्यते । एष एवेदं सर्वमित्युपासि-  
 तव्यम् ॥१३॥१४॥२४॥

एकादशेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।



सच्चाऽसच्चाऽसच्च सच्च वाक् च मनश्च [ मनश्च ] वाक् च  
 चक्षुश्च श्रोत्रं च श्रोत्रं च चक्षुश्च श्रद्धा च तपश्च तपश्च श्रद्धा च  
 तानि षोडश ॥१॥ षोडशकलम्ब्रह्म । स य एवमेतत् षोडशकलम्ब्रह्म  
 वेद तमेवैतत् षोडशकलम्ब्रह्माऽप्येति ॥२॥ वेदो ब्रह्म तस्य  
 सखमायतनं शमः प्रतिष्ठा दमश्च ॥३॥ तद्यथा श्वः प्रैष्यन्  
 पापात्कर्मणो जुगुप्सेतैवमेवाऽहरहः पापात्कर्मणो जुगुप्सेताऽऽ  
 कालात् ॥४॥ अथैषां दशपदी विराद् ॥५॥ दश पुरुषे स्वर्ग-  
 नरकाणि । तान्येनं स्वर्गं गतानि स्वर्गं गमयन्ति नरकं गतानि  
 नरकं गमयन्ति ॥६॥४२५॥

एकादशेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

मनो नरको वाङ् नरकः प्राणो नरकश्च चक्षुर्नरकश्च श्रोत्रं  
 नरकस्त्वङ् नरको हस्तौ नरको गुदं नरकश्शिश्रं नरकः पादौ नरकः  
 ॥१॥ मनसा परीक्ष्याणि वेदेति वेद ॥२॥ वाचा रसान्वेदेति वेद  
 ॥३॥ प्राणेन गन्धान्वेदेति वेद ॥४॥ चक्षुषा रूपाणि वेदेति  
 वेद ॥५॥ श्रोत्रेण शब्दान्वेदेति वेद ॥६॥ त्वचा संस्पर्शान्वे-  
 देति वेद ॥७॥ हस्ताभ्यां कर्माणि वेदेति वेद ॥८॥ उदरेणा-

ऽशनयां वेदेति वेद ॥६॥ शिश्रेण रामान्वेदेति वेद ॥१०॥  
 पादाभ्यामध्वनो वेदेति वेद ॥११॥ प्लक्षस्य प्रास्रवणस्य  
 प्रादेशमात्रादुदक् तत्पृथिव्यै मध्यम् । अथ यत्रैते सप्तर्षयस्तद्विवो  
 मध्यम् ॥१२॥ अथ यत्रैत ऊषास्तत्पृथिव्यै हृदयम् । अथ यदे-  
 तत्कृष्णं चन्द्रमासि तद्विवो हृदयम् ॥१३॥ स य एवमेते द्यावा-  
 पृथिव्योर्मध्ये च हृदये च वेद नाऽकामोऽस्माज्जोकात्प्रैति ॥१४॥  
 नमोऽतिसामायैऽतुरेताय<sup>४</sup> धृतराष्ट्राय<sup>५</sup> पार्थुश्रवसाय<sup>६</sup> ये च प्राणं  
 रक्षन्ति ते मा रक्षन्तु । स्वास्ति । कर्मेति गार्हपत्यश्चम<sup>७</sup> इसाह-  
 वनीयोदम इत्यन्वाहार्यपचनः ॥१५॥४॥२६॥

एकादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । एकादशोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

कस्सविता । का सावित्री । अग्निरेव सविता । पृथिवी  
 सावित्री ॥१॥ स यत्राऽग्निस्तत्पृथिवी यत्र वा पृथिवी तदाग्निः ।  
 ते द्वे योनी । तदेकम्मिथुनम् ॥२॥ कस्सविता । का सावित्री ।  
 वरुण एव सविता । आपस्सावित्री ॥३॥ स यत्र वरुणस्तदापो  
 यत्र वाऽऽपस्तद्वरुणः । ते द्वेयोनी । [ तदेकम्मिथुनम् ] ॥४॥

२-वद् । ३-कामो । ४-सामय-सामाय । ५ एतुर ।

६ पाञ्जुश्च-से ठीक किया हुआ है । ७-मय् ॥

कस्सविता । का सावित्री । वायुरेव सविता । आकाशस्सावित्री  
 ॥५॥ स यत्र वायुस्तदाकाशो यत्र वाऽऽकाशस्तद्वायुः । ते द्वे  
 योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥६॥ कस्सविता । का सावित्री । यज्ञ एव  
 सविता । छन्दांसि सावित्री ॥७॥ स यत्र यज्ञस्तच्छन्दांसि यत्र  
 वा छन्दांसि तद्यज्ञः । ते द्वे योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥८॥  
 कस्सविता । का सावित्री । स्तनयित्नुरेव सविता । विद्युत् सावित्री  
 ॥९॥ स यत्र स्तनयित्नुस्तद्विद्युद्यत्र वा विद्युत् तत्स्तनयित्नुः । ते  
 द्वे योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥१०॥ कस्सविता । का सावित्री ।  
 आदित्य एव सविता । द्यौस्सावित्री ॥११॥ स यत्राऽऽदित्यस्तद्द्यौर्यत्र  
 वा द्यौस्तदादित्यः । ते द्वे योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥१२॥  
 कस्सविता । का सावित्री । चन्द्र एव सविता । नक्षत्राणि सावित्री  
 ॥१३॥ स यत्र चन्द्रस्तन्नक्षत्राणि यत्र वा नक्षत्राणि तच्चन्द्रः ।  
 ते द्वे योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥१४॥ कस्सविता । का सावित्री ।  
 मन एव सविता । वाक् सावित्री ॥१५॥ स यत्र मनस्तद्वाग्यत्र  
 [वा] वाक् तन्मनः । ते द्वे योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥१६॥ कस्स-  
 विता । का सावित्री । पुरुष [एव] सविता । स्त्री सावित्री । स  
 यत्र पुरुषस्तत् स्त्री यत्र वा स्त्री तत्पुरुषः । ते द्वे योनी । तदेकस्मि-  
 थुनम् ॥१७॥१८॥१९॥

द्वादशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तस्या एष प्रथमः पादो भूस्तत्सवितुर्वरेण्यमिति । अग्निर्वै  
वरेण्यम् । आपो वै वरेण्यम् । चन्द्रमा वै वरेण्यम् ॥१॥ तस्या  
एष द्वितीयः पादो भर्गभयो भुवो भर्गो देवस्य धीमहीति । अग्निर्वै  
भर्गः । आदिसो वै भर्गः । चन्द्रमा वै भर्गः ॥२॥ तस्या एष तृतीयः  
पादस्स्वर्धियो यो नः प्रचोदयादिति । यज्ञो वै प्रचोदयति । स्त्री  
च वै पुरुषश्च<sup>१</sup> प्रजनयतः ॥३॥ भूर्भुवस्तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो देवस्य  
धीमहीति । अग्निर्वै भर्गः । आदिसो वै भर्गः । चन्द्रमा वै भर्गः  
॥४॥ स्वर्धियो यो नः प्रचोदयादिति । यज्ञो वै प्रचोदयति । स्त्री  
च वै पुरुषश्च प्रजनयतः ॥५॥ भूर्भुवस्स्वस्तव सवितुर्वरेण्यम्भर्गो  
देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयादित<sup>२</sup> । यो वा एतां सावित्री-  
मेवं वेदाऽप पुनर्मृत्युं तरति सावित्र्या एव सलोकतां जयति  
सावित्र्या एव सलोकतां जयति ॥६॥४१२८॥

द्वादशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । द्वादशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

इत्युपनिषद्ब्राह्मणं समाप्तम् ॥

१-सँ । २ 'यज्ञो वै प्रचोदयति । स्त्री च वै पुरुषश्च प्रजनयतः'

आधिक करो ॥

## १-ऋषि-नामों की सूची ।

वं० से वंश का अभिप्राय है ।

अगस्त्य, ४।१५।१॥१६।१॥ वं० ।

अतिसाम पतुरेत, ४।२६।१५॥

अनुवक्ता सात्यकीर्त, १।५।४॥

अभयद आसमात्य, ४।८।७॥

अभिप्रतारी, ३।१।२।१॥२।२,३,१३॥

अभिप्रतारी काक्षलेनि १।५।१।१॥३।१।२१॥

अयास्य, २।८।७,८॥११।८॥

अयास्य आङ्गिरस, २।७।२,६॥८।३॥

अषाढ उत्तर पाराशर्य ३।४।१।१॥ वं०

आङ्गिरस, २।२।६॥ देखो अयास्य आं० ।

आजकेशी, १।६।३॥

आजद्विश, देखो बम्ब आं० ।

आट्णार, देखो पार आं० ।

आत्रेय, देखो दत्त कात्यायनि आं०, शङ्ग शात्र्यायनि आं० ।

आरुणि, १।४।२।१॥

आरुणोय, २।५।१॥

आर्चाकायण, देखो गळूनस आं० ।

आल्लुकेय, देखो हृत्स्वाशय आं० ।

आसमात्य, देखो अभयद आं० ।

इन्द्रोत दैवाप शौनक, ३।४।०।१॥ वं० ।

इष ह्यावाश्वि, ४।१६।१॥ वं० ।

उच्चैदश्रवस कौपयेय, ३।२९।१,२,३॥

उत्तर, देखो आषाढ उ० पाराशर्य ।

उमा हैमवती, ४२०११॥

उल्लुक्क्य (?) जानश्रुतेय, १६१॥

उदानः काव्य, २७२, ६॥

ऋष्यशृङ्ग काश्यप, ३४०११॥ वं० ।

वतुरेत (?), देखो अतिसाम ए० ।

षेष्वाक, देखो भगेरथ ए० ।

षेष्वाक वाष्ण्य, १५१॥

षेतरेय, देखो महिदास ।

षेन्द्रोति, देखो इति ए० शौनक ।

कंस वारकी, ३४११॥ वं० ।

कंस वारक्य, ३४११॥ वं० । ४१११॥ वं० ।

कक्षीवन्त, २५११॥

कश्यप, ४३१॥

काक्षसेनि, देखो अभिप्रतारी का० ।

काण्डविय, ३१०१॥ देखो जनश्रुत का० । नगरी ज्ञानश्रुतेय का० ।

सायक जानश्रुतेय का० ।

कात्यायनि, देखो दत्त का० आत्रेय ।

कापेय, ३२२, १२॥ देखो शौनक का० ।

कारीरादि, २४४॥

काव्य, देखो उदानः का० ।

काश्यप, ३४०१॥ वं० । देखो ऋष्यशृङ्ग का० । देवतरः इयावत्तायन

का० । श्रुष वाहेय का० ।

कुबेर वारक्य, ३४११॥ वं० ।

कुरु, (एकव०) १५६१॥ (बहुव०) १३२१॥ देखो कौरव ।

कुरुपञ्चालाः, ३७६१॥ ३७६, ६१॥ ३७६१॥

कृष्णदत्त लौहित्य, ३४२१॥ वं० । देखो त्रिवेद क० लौहित्य ।

- कृष्णाधृति सात्यकि, ३४२१॥ वं० ।  
कृष्णरात लौहित्य, ३४२१॥ वं० । देखो त्रिवेद कृ० लौहित्य ।  
केशी दार्भ्य, ३२६१,२॥  
कौपयेय, देखो उच्चैश्रवः ।  
क्रातुजातेय, देखो राम क्रा० वैयाघ्रपथ ।  
कैमि, देखो सुदक्षिण्य चै० ।  
गालूनस आर्त्ताकायण, १३८४॥  
गन्धर्वाप्सरसः, १४११॥४५१०, ११॥३५११॥  
गुप्त, देखो वैपश्चित दार्ढजयन्ति गु० लौहित्य ।  
गोबल वाष्ण, १६१॥  
गोश्रु (जावाल), ३७७॥  
गौतम (आरुणि) १४२१॥  
गौष्ठिक, ४१६१॥ वं० ।  
वैकितानेय, १३७७॥२५२॥ (बहुव०) १४११॥  
देखो ब्रह्मदत्त चै० । वासिष्ठ चै० ।  
वैन्नरथि, देखो सत्याधिवाक चै० ।  
ज्ञानश्रुत काण्डविय, ३४०१॥ वं० ।  
ज्ञानश्रुत वारक्य, ३४११॥ वं० । ४१७१॥ वं० ।  
जमदग्नि, ३३११॥४३१॥  
जयक लौहित्य, ३४२१॥ वं० ।  
जयन्त, देखो यशस्वी ज० लौहित्य ।  
जयन्त पाराशर्य, ३४११॥ वं० ।  
जयन्त वारक्य, ३४११॥ वं० । (इस नाम के दो व्यक्ति) ४१७१॥ वं० ।  
ज्ञानश्रुत, देखो नगरी जा० काण्डविय ।  
ज्ञानश्रुतेय, देखो उल्लुक्य जा० । सायक जा० काण्डविय ।  
जावाल, ३६६॥ (द्विव०) ३७२, ३, ५, ७, ८॥ देखो गोश्रु शुक ।

जैत्रलि, १।३८।४॥

ज्वालायन, ४।१६।१॥ वं० ।

जसदस्यु, २।५।११॥

त्रिवेद कृष्णारात लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।

दत्त कात्यायनि आत्रेय, ३।४२।१॥ वं० ।

दत्तजयन्त लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।

दार्ढजयन्ति, देखो वैपश्चित दा० गुप्त लौहित्य, वैपश्चित दा०  
दृढजयन्त लौहित्य ।

दार्भ्य, देखो केशी दा० ।

दालभ्य (ब्रह्मदत्त चैकितानेय), १।३८।१॥५६।३॥

दालभ्य, देखो वन दा० ।

दृढजयन्त, देखो विपश्चित दा० लौहित्य, वैपश्चित दार्ढजयन्त दृ०  
लौहित्य ।

दृति घेन्द्रोति शौनक, ३।४०।२॥ वं० ।

देवतरस् इयावसायन काश्यप, ३।४०।२॥ वं० ।

देषाप, देखो इन्द्रोत वै० शौनक ।

धृतराष्ट्र, ४।२६।१५॥

नगरी जानश्रुतेय काण्डविय, ३।४०।१॥ वं० ।

नाक, ३।१३।५॥

पतङ्ग प्राजापत्य, ३।३०।३॥

परमेष्ठी प्राजापत्य, ३।४०।२॥ वं० ।

पल्लिगुप्त लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।

पाराशर्य, देखो अषाढ उत्तर पा० । जयन्त पा० । वैपश्चित शकुनि-  
मित्र पा० । सुदत्त पा० ।

पार्थश्रवस, ४।२६।१५॥

पार्था शैलन, २।४।८॥



पुलुष प्राचीनयोग्य, ३४०२॥ वं०

पृथु वैश्य, ११०१॥३४॥६॥४५॥१॥

पौलुषि, देखो सत्ययज्ञ पौ० प्राचीनयोग्य ।

पौलुषित, देखो सत्ययज्ञ पौ० ।

प्रतीदर्श, ४८॥७॥

प्राचीनयोग्य, १३६१॥ देखो पुलुष प्रा० । सत्ययज्ञ पौलुषि प्रा० ।

सोमशुभ्र सात्ययज्ञि प्रा० ।

प्राचीनशाल (बहुव०), ३१०१॥

प्राचीनशालि, ३७२, ३, ५, ७, १०१॥

प्राजापत्य, देखो परमेष्ठी प्रा० ।

प्रातृद् भाल्ल, ३३१४॥

प्रास्रवण, देखो म्लत्त प्रा० ।

प्रोष्ठपाद् वारक्य, ३४११॥ वं० ।

म्लत्त प्रास्रवण, ४२६१२॥

बक दालभ्य, १६३॥३॥४७२॥

बम्ब आजद्विष, २७२, ६॥

बाभ्रव्य, देखो शङ्ख वा० ।

ब्रह्मदत्त चैकितानेय, १३८१॥५६१॥

भगेरथ पेद्वाक, ४६११, २॥

भाल्ल, देखो प्रातृद् भा० ।

भाल्लविन (बहुव०), २४७॥

मनु, ३१५२॥

महिदास पेतरेय, ४२११॥

मातरिश्वन्, ४२०८॥

मानय, देखो शर्यात मा० ।

मित्रभूति खौदित्य, ३४२१॥ वं०

मुञ्ज सामश्रवस, ३५१२॥

यशस्वी जयन्त लौहित्य, ३४२१॥ वं० ।

राम क्रातुजातेय वैयात्रपद्य, ३४०१२॥ वं० । ४१६१॥ वं० ।

रौहिण्य, ११२६१७, १०॥

लौहित्य, देखो कृष्णदत्त लौ०, कृष्णरात लौ०, जयक लौ०, त्रिवेद  
कृष्णरात लौ०, दत्त जयन्त लौ०, पल्लिगुप्त लौ०, मित्रभूति  
लौ०, यशस्वी जयन्त लौ०, विपश्चित् दृढजयन्त लौ०,  
त्रैपश्चित् दार्ढजयन्ति गुप्त लौ०, वैपश्चित् दार्ढजयन्ति  
दृढजयन्त लौ०, इयामजयन्त लौ०, इयामसुजयन्त लौ०,  
सत्यश्रवस् लौ० ।

वासिष्ठ, ३१२१३॥१५२॥१८६, ७॥ तुल० वासिष्ठ ।

वारकि, देखो कंस वा० ।

वारक्य, देखी कंस वा०, कुबेर वा०, जनश्रुत वा०, जयन्त वा०,  
प्रोष्ठपाद वा० ।

वाष्पा, देखो पेद्वाक वा०, गोबल वा० ।

वासिष्ठ चैकितानेय, १४२१॥

वाह्येय, देखो श्रुष वा० काश्यप ।

विपश्चित् दृढजयन्त लौहित्य, ३४२१॥ वं० ।

विपश्चित् शकुनिमित्र पाराशर्य, ३४११॥ वं० ।

विश्वामित्र, ३३३७॥१५१॥ (बहुव०) ३१५१॥ तुल० वैश्वामित्र ।

वैकुराठ (इन्द्र), ४१५१॥१०१०॥

वैन्य, १४५२॥ देखो पृथु वै० ।

वैपश्चित् दार्ढजयन्ति गुप्त लौहित्य, ३४२१॥ वं० ।

वैपश्चित् दार्ढजयन्ति दृढजन्त लौहित्य, ३४२१॥ वं० ।

वैमृध (इन्द्र), ४१०१०॥

वैयात्रपद्य, देखो राम क्रातुजातेय वै० ।

- शकुनिमित्र, देखो विपश्चित् श० पाराशर्य ।  
 शङ्ख बाभ्रव्य, ३४६१॥ वं० । ४१७१॥ वं० ।  
 शङ्ख शाठ्यायनि आत्रेय, ३४०१॥ वं० ।  
 शर्य, ४१०१०॥  
 शर्यात मानव, २७१॥२,५॥  
 शाठ्यायनि, १६२॥३०१॥२२॥४३॥६१०॥३१३६॥२८॥  
 ४१६१॥ वं० । १७१॥ वं० । देखो शङ्ख शा० आत्रेय ।  
 शाण्डिल्य, देखो सुयज्ञ शा० ।  
 शालावत्य, १३८४॥  
 शुक्र (जाबाल), ३७७॥  
 शैलन (बहुव०), १२३॥२४६॥ देखो पाष्णा शै० सुचित्त शै० ।  
 शौनक, १५६२॥ देखो इन्द्रोत द्वैवाप शौ०, इति एन्द्रोति शौ० ।  
 शौनक कापेय, ३१२१॥  
 श्यामजयन्त लौहित्य (इस नाम के दो व्यक्ति), ३४२१॥ वं० ।  
 श्यामसुजयन्त लौहित्य, ३४२१॥ वं० ।  
 श्यावसायन, देखी देवतरसू श्या० काश्यप ।  
 श्यावाश्वि, देखो इश श्या० ।  
 श्रुष वाहेय काश्यप, ३४०१॥ वं० ।  
 श्वाजनि (एक वैश्य), ३५२॥  
 सत्ययज्ञ पौलुषित, १३६१॥  
 सत्ययज्ञ पौलुषि प्राचीनयोग्य, ३४०१॥ वं० ।  
 सत्यश्रवसू लौहित्य, ३४२१॥ वं० ।  
 सत्याधिवाक चैत्ररथि, १३६१॥  
 सात्यकि, देखो कृष्णाधृति सा० ।  
 सात्यकीर्त (बहुव०), ३३२१॥ देखो अनुवक्ता सा० ।  
 सात्ययज्ञि (बहुव०), २४५॥ देखो सोमशुष्म सा० प्राचीनयोग्य ।

सामश्रवस, देखो मुञ्ज सा० ।

सायक ज्ञानश्रुतेय काण्डविय, ३४०२॥ वं० ।

सुचित्त शैलन, ११४४॥

सुदक्षिण, ३७८॥८॥६॥ (देखो सुदक्षिण तैमि)

सुदक्षिण तैमि, ३६३॥७॥४॥५॥६॥ (देखो सुदक्षिण) ।

सुदत्त पाराशर्य, ३४११॥ वं०४१७१॥ वं० ।

सुयज्ञ शाण्डिल्य, ४१७१॥

सोमबृहस्पति (द्विव०), १५८६॥

सोमशुष्म सात्ययज्ञि प्राचीनयोग्य, ३४०२॥ वं० ।

हृत्स्वाशय आल्लुकेय, ३४०२॥ वं० ।

हैमवती, देखो उमा है० ।

## २-निर्वचनादि सूची ।

अक्षर, १२४१॥४३८॥१२४२॥

४३८॥

अन्तरिक्ष, १२०४॥

अयास्य, २८७॥११८॥

अर्क्य, ४२३४॥

असु, १४०७॥

असुर, ३३५३॥

आङ्गिरस, २११६॥

आदि, १११७॥१६२॥

आदित्य, ४२६॥

आवर्त्त, ३३३७॥

उरसु, ४२४२॥

ऋच, ११५६॥

गायत्र, ३३८४॥

देवश्रुत, ११४३॥

पतङ्ग, ३३५२॥

पश्यत, १५६६॥

प्रतिहार, १११६॥

प्रसाम, प्रसामि, ११५४॥

प्रस्ताव, १११६॥

बृहस्पति, २२५॥

भीमल, १५७१॥

मधुपुत्र, १५५१॥

महीया, १४८५॥

रुद्र, ४२६॥

रोदसी, १३२४॥

वसु, ४२३॥

वैश्वामित्र, ३३६॥

शतसनि, १५०४॥

सजात, १४८३॥

समुद्र, १२५४॥

सामन्, १३३७॥ ४०६॥४८७॥ ५१२॥४१३२॥ ११२५॥ १५३५॥

५६२॥४२३३॥

सिन्धु, १२६२॥

सुवर्ग, ३१४४॥

हंरि, १४४५॥

### ३-(क) ऋचादिसूची ।

अदितिर्द्यौरदितिः, १४१४॥ ऋ० १८६१०॥

अपर्यं गोपामनिपद्यमानाम्, ३३७१॥ ऋ० ११६४३१॥

आत्मा देवानामुत मर्त्यानाम्, ३२४४॥ तु० छां० उ० ४३१७॥

आयुर्माता मतिः पिता, ४११७॥

इन्द्रमुक्थमृचम्, १४५१॥

इमामेषाम्पृथिवीम्, १३४७॥ अथ० १०८३६॥

उतैषां ज्येष्ठः, ३१०१२॥ अथ० १०८२८॥

उपाऽस्मै गायत, ३३८६, ८॥ ऋ० ६१११॥

ऋषय एते मन्त्रकृतः, १४५२॥

चत्वारि वाक् परिमिता, १७३॥४०१॥ ऋ० ११६४४५॥

तत्सवितुर्वरेण्यम्, ४२८१॥ ऋ० ३६२१०॥

त्र्यायुषं कश्यपस्य, ४३११॥ तुल०, अ० ५२८७॥

नवो नवो भवसि, ३२७११॥ तुल०, ऋ० १०८४१६॥

पतङ्गमक्तम्, ३३५१॥ ऋ० १०१७७१॥

पतङ्गो वाचम्मनसा, ३३६२॥ ऋ० १०१७७२॥

मयीदं मन्ये भुवनादि, ३१७६॥

महात्मनश्चतुरो देवः, ३२२२॥ तुल० छां० उ० ४३६६॥

यद्द्यावा इन्द्र ते शतम्, १३२१॥ ऋ० ८।१०।५॥

यस्सत्तरश्मिर्वृषभः, ११२६।७॥ ऋ० २।१२।१२॥

येऽग्नयः पुरीष्याः, ४३३॥ य० १८।६।७॥

येभिर्वात इषितः, १३४।६॥ अथ० १०।८।३५॥

रूपं-रूपम्प्रतिरूपः, १४४।१॥ ऋ० ६।४७।१८॥

रूपं-रूपम्मघवा, १४४।६॥ ऋ० ३।५३।८॥

स नो मयोभूः, ४३२॥

स यदा वै म्रियते, १।४।७॥

स्त्री स्मैवाऽग्ने, १।५६।५॥

स्थूणां दिवस्तम्भनीम्, १।१०।६॥

(स)

अभिजिदस्यभिजय्यासम्, ३।२०।१०॥

अमोऽहमस्मि, (दीर्घपाठ), १।५४।६॥ (संक्षिप्त), ५७।४॥

अरण्यस्य वत्सोऽसि, ४।४।१॥

उपावन्तध्वम्, ३।१६।१॥३४।२॥

गुहासि देवोऽसि, ३।२०।१॥

दिशस्था श्रोत्रम्, १।२२।६॥

देवेन संवित्रा, ३।१८।३,६॥

पुरुषः प्रजापतिः, १।४६।३,४॥

प्राणा३ प्राणा३ प्राणा३, २।२।७॥

महाम्महा समधत्त, ३।४।५॥

यत्पुरस्ताद्वासीन्द्रः, ३।२१।१॥

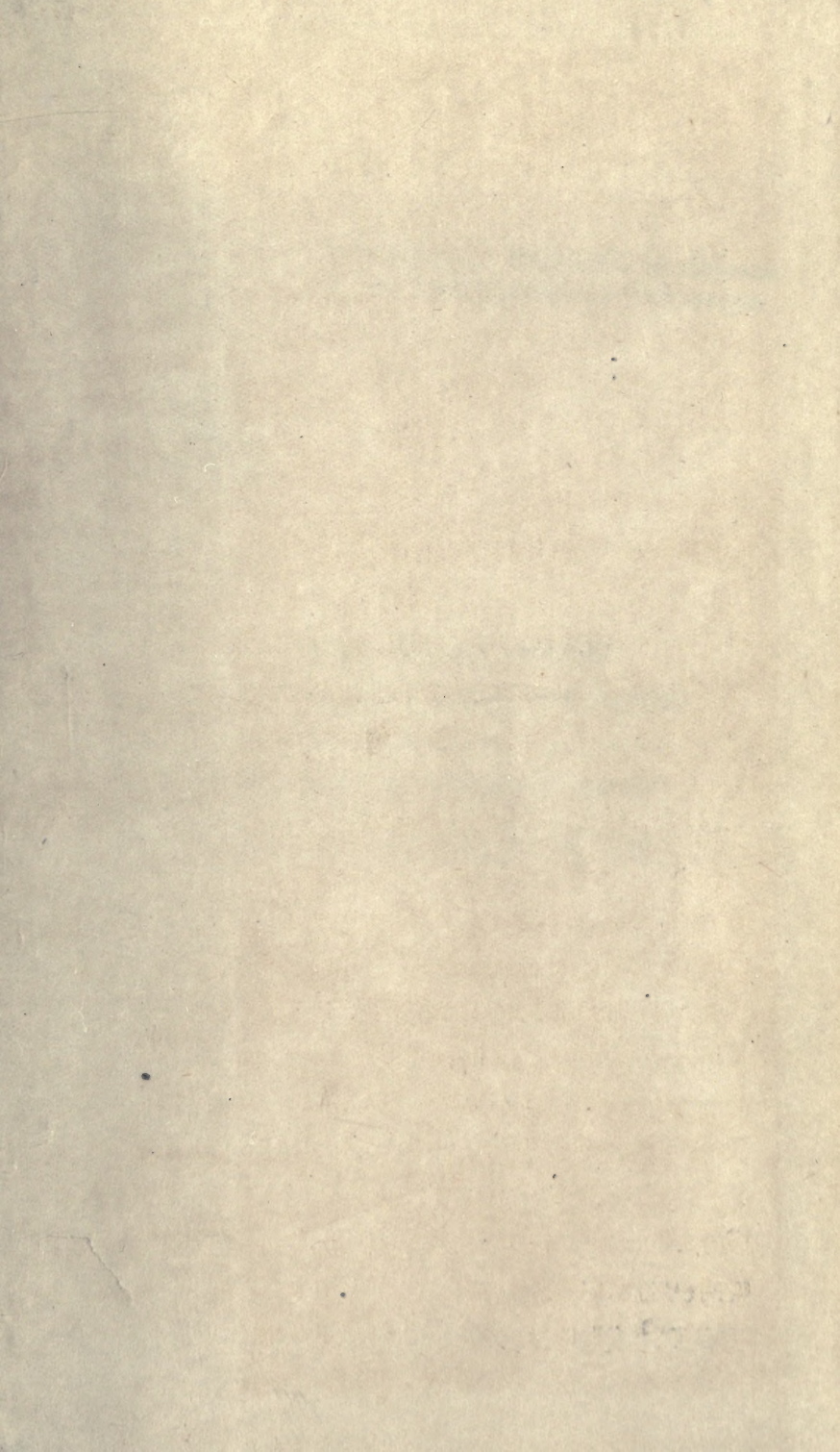
विभूः पुरस्तात्सम्पत्, ३।२७।१॥

व्युषि सविता भवसि, ४।५।१॥

श्वेताश्वो दर्शतो, ४।१।१॥

सत्यस्य पन्था, ३।२७।१०॥

सोमः पवते, ३।१६।१॥३४।२॥

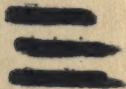






BL  
1135  
B7T3  
1921

Brahmanas. Talavakārabrahmana  
Jaiminīyaupaniṣadbrāhmaṇam



PLEASE DO NOT REMOVE  
CARDS OR SLIPS FROM THIS POCKET

---

UNIVERSITY OF TORONTO LIBRARY

---

